पर्यावरणीय समाचार झलकियां

कमं	संस्करण	दिनांक	समाचार पत्र	शीर्षक	समाचार विवरण
1	6	अगस्त 25, 1998	अमर उजाला	वनों के अवैज्ञानिक दोहन से उत्तराखण्ड भूस्खलनों की चपेट में	आजादी के बाद से उत्तराखण्ड में हुए वनों के अवैज्ञानिक दोहन से अब हिमालयी क्षेत्र का पर्यावरणीय सन्तुलन बिगड़ गया है। इस कारण ही वर्षा ऋतु में प्रकति की मार उत्तराखण्डवासी झेल रहे हैं और पूरा उत्तराखण्ड भंयकर भूस्खलनों की चपेट में हैं। इसी कारण मालिपा व उंखीमठ दुर्घटनाएं आज विव पटल पर है। आजादी के बाद से अब तक उत्तराखण्ड में 25.35 हजार हैक्टेयर वन क्षेत्र नष्ट हुआ है। निमार्ण कार्यो के लिए कराए गए वनों के कटान की जगह नया वृक्षारोपण अधिकतर कागजों में ही होता रहा। वन विभाग के ही आकड़ों के अनुसार प्रदेा के कुल वन राजस्व 1.07 अरब रूपयों में से केवल पर्वतीय क्षेत्र के वनों से 46.05 करोड़ का राजस्व सरकार प्राप्त करती है। यदि इस वन राजस्व का दस प्रतिात भी हरवर्ष वह पहाड़ में पर्यावरण संवर्द्वन व संरक्षण के उपायों पर खर्च करती तो आज पहाड़ को भारी भूस्खलनों की इन विभिषिकाओं का ाकिार नहीं होना पड़ता।
2	6	अक्टूबर 14, 1998	अमर उजाला	मध्य हिमालय में यूरोपियन सब्जियां उगाने में सफलता	राजकीय फल अनुसंधान केन्द्र, पिथौरागढ़, उत्तर प्रदेा ने मध्य हिमालय की जलवायु में 28 प्रकार की यूरोपियन सब्जियों को उगाने में सफलता हासिल कर ली है। अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिकों का दावा है कि प्रस्तावित उत्तराखण्ड राज्य में यदि सब्जी और फल उत्पादन को प्राथमिकता दी जाए तो वह विदेाी सब्जियों के पर्याप्त जर्म प्लाज्म कातकारों को आसानी से उपलब्ध करा देंगे। मध्य हिमालय में 3500 से 6500 फीट की उंचाई पर यूरोपियन सब्जियां उगाने की अनुकूल परिस्थितियां हैं। इस अनुसंधान केन्द्र में जो 28 किस्म की सब्जियां उगाई गई हैं, ये सभी अच्छा उत्पादन दे रही हैं।
3	6	नवम्बर 13, 1998	दैनिक जागरण	टेहरी बांध बनने के बाद गंगा जाल्दी प्रदूषित होगी	टेहरी बांध बनने के बाद गंगा के प्रदूषण नााक गुण नष्ट होने की सम्भावना हैं। पी0 ए0 सी0 स्वर्ण जयंती गंगा अभियान दल के स्वागत समारोह को संबोधित करते हुए उत्तर प्रदेा के पर्यटन व लोक कल्याण मत्री कलराज मिश्र ने कहा कि इस प्रकार टेहरी बांध बन जाने के बाद गंगा और भी जल्दी प्रदूषित होगी। श्री मिश्र ने कहा कि उत्तरकाी व टेहरी के बीच गंगा के प्रवाह मार्ग में ऐसी जड़ी बूटियां हैं, जिनके प्रभाव व गंगा में समिश्रण से टेहरी के आगे भी गंगा जल कही प्रदूषित नही होता हैं। पर्यावरणविदों की टेहरी बांध निर्माण से सम्बन्धित चिंता इसी बात को लेकर हैं कि बांध बन जाने के बाद यह जड़ी बूटियां नष्ट हो जाएंगी।

4	7	अगस्त 24, 1999	अमर उजाला	संकट में है हिमालय के कस्तूरी मृग का अस्तित्व	अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में हिमालय की सुगंधित कस्तूरी की बढ़ती मांग ने कस्तूरी मृग की प्रजाति के अस्तित्व को ही संकट में डाल दिया है। यह 14,000 से 18,000 फीट की चाई पर हिमालय के बुग्यालों व बर्फीले क्षेत्रों में पाया जाता है। कस्तूरी की तीव्र सुगन्ध ही प्रजनन काल में मादा मृग को आकर्षित करती है। कस्तूरी मृग एकाकी होते है। अमीरो के ाौक के कारण इनके अवैध आखेट व अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में बढ़ती मांग ने इस प्रजाति के अस्तित्व को संकट की स्थिति में डाल दिया है। हिमालय क्षेत्र की कस्तूरी अत्यन्त सुगंधित होती हैं, वर्तमान में कस्तूरी मृग जो कि पूर्व में सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र में पाया जाता था, अब केवल चमोली, उत्तरकाशी व पिथौरागढ़ में ही सीमित संख्या में रह गए हैं। इंटर नेानल यूनियन फॉर कंजरवेान के कड़े निर्देाों में कस्तूरी मृग को संकटग्रस्त प्रजाति की श्रेणी में घोषित किया गया है। वर्षो से कस्तूरी की तस्करी का स्वर्ग बने चमोली एवं पिथौरागढ़ से कस्तूरी विदेाों को आपूर्ति होती रही हैं। पिथौरागढ़ जो नेपाल से लगा क्षेत्र है, इस रास्ते नेपाल व वहां से हांगकांग, जापान व फ्रॉंस के लिए हिमालय की कस्तूरी की तस्करी बेरोकटोक जारी है। एक नर कस्तूरी मृग से 30 से 50 ग्राम तक ही कस्तूरी मिलती है। 25 से 30 नर मृग मारने पर ही 1 किलो कस्तूरी मिल पाती है। आक्सफोर्ड विवविद्यालय इग्लैंड़ में कार्यरत डा0 ग्रीन जिन्होने 1976 से 1978 तक कस्तूरी मृगों पर हिमालय क्षेत्र में ाोध कार्य किया था। उन्होने उस समय बताया था कि एक दाक में लगभग 5,350 से 16,000 कस्तूरी मृग हिमालय क्षेत्र में मारे जाते हैं।
5	7	अगस्त 25, 1999	दैनिक जागरण	चीड़ के वृक्ष पर्यावरण के लिए घातक	कुमाउं विवविद्यालय के डीएसबी परिसर नैनीताल के वनस्पति विभाग के प्रो0 आर0 डी0 खुल्बे ने स्वस्थ्य पर्यावरण के लिए चौड़ी पत्ती वाले पेड़ों को बढ़ावा देने के उद्देय से आम लोगों से जागरूक होने की अपील करते हुए कहा कि चीड़ के वृक्ष पर्यावरण के लिए घातक होने के साथ साथ इनकी अधिकता से जंगल में पानी की कमी के साथ–साथ अम्लता का प्रभाव भी तेजी से फैल रहा है जिस कारण पहाड़ में अनेक जड़ी बूटियों के उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। उन्होने अंधाधुंध निर्माण कार्य के साथ–साथ चीड़, यूकेलिप्टस आदि के प्रोत्साहन पर गहरी चिन्ता व्यक्त की।
6	7	अगस्त 25, 1999	दैनिक जागरण	नैनी झील को बचाने के लिए जाल निकासी की नयी व्यवस्था करनी होगी	योजना आयोग का मानना है कि यदि उत्तर प्रदेा के कुमाउं क्षेत्र में नैनीताल और भीमताल की झीलों के आकर्षण को बचाये रखना है तो इस क्षेत्र में पानी की निकासी की व्यवस्था को चाक चौबंद रखना होगा ताकि भूस्खलन को रोका जा सके। नैनीताल व भीमताल की प्रसिद्वि झीलों की तलहटी में गाद जमने की वजह से कम होती जा रही गहराई और समय समय पर वहां होने वाले भूस्खलन पर योजना आयोग के एक अध्ययन में यह निष्कर्ष सामने आये हैं। आयोग का मानना है कि गाद जमने का क्रम इसी तरह जारी रहा तो जल्दी ही इन झीलों का आकर्षण समाप्त हो जाएगा। आयोग ने नार्वे के विाषज्ञों के जरिए इसका अध्ययन कराया है। योजना आयोग के उपाध्यक्ष के0 सी0 पन्त के निर्देा के बाद आयोग के एक प्रतिनिधिमंड़ल ने जून 1999 में नैनीताल जिले का दौरा कर नैनीताल व भीमताल की झीलों की कम होती गहरायी की जांच की व इस बात पर गहरी चिन्ता व्यक्त की है कि इन दोनों झीलों की गहराई आचर्यजनक ढंग से कम होती जा रही हैं। 1950 में नैनीताल झील की गहराई 24 मीटर थी। लेकिन वर्तमान में यह कम होकर 17 मीटर तक आ चुकी है। आयोग का मानना है कि यदि स्थिति यही रही तो अगले दस–पंद्रह साल में गहराई 10 मीटर तक आ जाएगी।

7	7	सितम्बर 18, 1999	नवभारत टाईम्स	बड़े बांधो से न पहाड़ो का हित, न मैदानों का : बहुगुणा	प्रख्यात पर्यावरणविद सुंदर लाल बहुगुणा ने पहाड़ों की खुाहाली और मैदानों की सुरक्षा को सुनिचित करने वाली एक व्यापक हिमालय नीति बनाए जाने की मांग की हैं। श्री बहुगुणा ने बड़े बांध बनाए जाने का विरोध करते हुए कहा कि इससे न तो पहाड़ों का हित होगा और न मैदानों का। बड़े बांधो की कभी न कभी टूटने की आांका बनी रहती है और ऐसी स्थिति में मैदानी भागों में प्रलय मच जाएगी। उन्होने सुझाव दिया कि टिहरी परियोजना में बांध बनाने की बजाय सुरंगो से गुजरने वाली पानी के प्रवाह से ही बिजली पैदा करने के प्रयास किए जाने चाहिए। पहाड़ो पर सघन वृक्षारोपण के जरिए जल संसाधनों की बर्बादी रोकी जानी चाहिए। उन्होने सफेदा तथा चीड़ को पर्यावरण के लिए खतरनाक बताया। श्री बहुगुणा पहाड़ों के लिए पांच प्रकार की वृक्ष प्रजातियों की सिफारि करते हैं। भोज्य पदार्थ एवं फल देने वाले वृक्ष, ईधन तथा इमारती लकड़ी वाले वृक्ष, उर्वरक देने वाले वृक्ष, पुाचारा देने वाले वृक्ष और रेादार वृक्ष। उन्होने कहा कि अंग्रेजों ने व्यावसायिक दृष्टिकोण अपनाते हुए हिमालय में केवल इमारती लकड़ी के पेड़ों को बढ़ावा दिया। उन्होने कहा कि उचित वन संरचना से पर्वतीय क्षेत्र की नदियो के प्रवाह को नियमित करके न केवल पानी की बर्बादी रोकी जा सकती है, बल्कि बाढ़ के खतरे से भी बचा जा सकता हैं। बढ़ते प्रदूषण के इस युग में जीवन वायु आक्सीजन तथा पेयजल की ुद्धता तथा प्रचुरता वनो से ही संभव हैं।
8	8	फरवरी 8, 2000	अमर उजाला	भेषज विकास योजना खतरे में	उत्तर प्रदेा के पर्वतीय क्षेत्र में जड़ी–बूटियों के उत्पादन, ाोध और विकास के लिए पचास वर्ष पूर्व स्थापित भेषज विकास योजना का अस्तित्व खतरे में है। पर्वतीय क्षेत्र में जड़ी–बूटियों के विकास की गहन सम्भावनाओं को देखते हुए सरकार ने 1949 में सहकारिता विभाग की भूमि पर भेषज योजना की स्थापना की। योजना का मुख्य उद्धेय औषधीय वनस्पतियों का ाोध, विकास, संग्रहण और विपणन करना था। 1987 में इसे भेषज एवं जड़ी–बूटी विकास योजना का नाम दिया गया। प्रदेा सरकार के गंभीर वित्तीय संकट के दौर से गुजरने से प्रदेा की कुछ संस्थाओं को बंद करने के साथ ही भेषज विकास योजना को भी बंद करने पर विचार चल रहा है। वर्तमान में जहॉ उत्तराखण्ड की आर्थिक समृद्धि के लिए जड़ी–बूटी विकास के लंबे चौड़े वायदे किए जा रहे हैं ऐसे में 50 वर्षो पूर्व स्थापित भेषज विकास योजना को अधिक चुस्त–दुरूस्त बनाने के बजाय बंद कर देना उत्तराखण्ड के हित में नहीं होगा।

9	8	जून 2, 2000	अमर उजाला	आर्थिक संकट में नंदादेवी जौवमांडल क्षेत्र के लोग	नन्दादेवी जैवमंडल को आरक्षित क्षेत्र(बायोस्फियर रिजर्व) घोषित करने से इस क्षेत्र के पर्यटन और भेड बकरी पालन व्यवसाय पर बुरा असर पड़ रहा है। पूरे विव में इस समय 324 जैवमण्डल क्षेत्र हैं। इनमें से उत्तरी भारत के मध्य हिमालयी क्षेत्र उत्तराखण्ड के चमोली, पिथौरागढ़ और बागेवर जनपदों के 2226ण्74 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में यह आरक्षित क्षेत्र 18 जनवरी 1988 को घोषित किया गया। इसके बाद स्थानीय निवासियों के केन्द्रीय जैवमंडल भडार (कोर जोन) से सारे अधिकार प्राकृतिक संसाधनों के उपर से करीब–करीब समाप्त कर दिए गए, इससे ग्रामीणों का इस क्षेत्र की प्राकृतिक संपदा के संरक्षण के प्रति मोह भंग हो गया है। जैव विविधता संरक्षण के लिए गोविंद बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान का सतत् विकास विभाग आरक्षित क्षेत्र में औषधीय पादपों की परम्परागत कृषि तकनीक के बारे में डा. आर. के. मैखुरी, डा. सुनील नौटियाल और डा. के. एस. राव ने संयुक्त रूप से एक रपट तैयार की है। रिपोर्ट में कहा गया है कि आरक्षित क्षेत्र के लोगों में जैव संरक्षण के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण पैदा हो गया है। इससे लोगों को आर्थिक संकट का सामना करना पड़ रहा है। नंदादेवी जैव मंडल आरक्षित क्षेत्र के पादपों का कोई पेटेंट न हो इसके लिए भारत सरकार को पहल करनी होगी। यदि इस क्षेत्र में उगने वाले दुर्लभ औषधीय पादपों का व्यावसायिक दृष्टिकोण से उत्पादन होने लगे तो लोगों को न सिर्फ स्वरोजगार मिलेगा, बल्कि संवेदनील भारतीय सीमा मानव सुरक्षा से युक्त होगी।
10	8	जून 6, 2000	अमर उजाला	छोटे पेयजल स्रोतों से योजना बनाना खतरनाक	छोटे पेयजल स्रोतों का दोहन करने की प्रवृति गलत है क्योंकि इन स्रोतों से आपूर्ति तो पूरी नहीं हो पाती है पर जमीन की नमी व हरियाली पर दूरगामी विपरीत प्रभाव पड़ता है। ये बातें विव पर्यावरण दिवस पर पर्यावरणीय सुरक्षा एवं जल स्रोतों का संरक्षण विषय पर आयोजित गोष्ठी में कही गई। पहाड़ों में भी मैदानों की तरह जमीन के नीचे पानी का स्तर गिरता जा रहा है इसीलिए उत्तराखंड में भी हिमांचल की तर्ज पर पानी की हार्वेस्टिंग ुरू की जाए ताकि वर्षा का अधिकतम पानी जमीन के अंदर जाए इससे पानी का जलस्तर उपर आएगा और नमी व हरियाली बरकरार रहेगी। सरकार से मांग की गयी कि हिमालयी क्षेत्र में व्यापक सर्वेक्षण कर इस बात का पता लगाया जाए कि भूमिगत पानी की तुलनात्मक स्थिती क्या है, वनो की पानी सोखने की क्षमता का अध्ययन किया जाए और तभी अगले 50 वर्षो में पानी की जरूरत देखते हुए जल ग्रहण क्षेत्रों के व्यापक विकास की योजनाएं बनाई जाएं।
11	8	जून 12, 2000	अमर उजाला	उत्तराखंड में जड़ी–बूटी से संबंधित योजना बनेगी	प्रदेा के वन सचिव ने कहा है कि उत्तराखंड में लुप्त होती जड़ी–बूटियों के संरक्षण और विकास के साथ ही कृषकों की माली हालत सुधारने के लिए उत्पादक संस्थाओं की राय से वन विभाग एक महत्वाकांक्षी योजना बनाने की तैयारी कर रहा है। उन्होने कहा कि एक ओर उत्तराखंड के संपन्न वनों से कीमती औषधियों का दोहन हो रहा है, दूसरी ओर स्थानीय लोगों को इसके व्यवसाय में अपेक्षित भागीदारी नहीं मिल रही है। ाासन उत्तराखंड में जड़ी–बूटी विकास व संरक्षण के लिए प्रयासरत हैं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पेटेंट की मार से बचाने के लिए विभाग यहॉ की प्रजातियों पर आधारित पुरानी चिकित्सा पद्वति के साक्ष एकत्रित करेगा, दुर्लभ व महत्वपूर्ण प्रजातियों के संरक्षण के लिए इनके मूल स्थान पर बायोडायर्वसीटी को ध्यान में रखकर संरक्षण, विकेन्द्रीकरण व कृषिकरण के कार्यकम चलाए जाएंगे। उत्तराखंड में वन विभाग की क्षमता बढ़ाने के लिए चालू वर्ष में साढ़े छह करोड़ रूपये केंन्द्र सरकार की ओर से खर्च किए जाएंगे।

12	8	जून 13, 2000	अमर उजाला	बर्फ कम होना पर्यावरण के लिए खतरे की घंटी	विव प्रसिद्व पिंडारी ग्लेायिर अब पहले जैसा खूबसूरत नहीं रहा, ठीक नीचे भूस्खलन होने के कारण वहां जाने वाले लोग अब इसे छू भी नहीं सकते। यही नहीं जीरो प्वाइंट; जहां से ग्लेायिर दिखते है लगातार पीछे खिसक रहा है। ग्लेायिरों पर बर्फ लगातार कम होती जा रही है, जो देा के पर्यावरण के लिए खतरे की घंटी है। ख्याति प्राप्त भूगर्भविद् प्रो0 खड्ग सिंह बल्दिया ने अब से कई वर्ष पहले अपने एक भाषण में कहा था कि सन् 2000 से हिमालय रेगिस्तान बनने की दिाा में आगे बढ़ने लगेगा। लगता है वह दौर ाुरू हो गया है। आज से करीब 17 साल पहले पिंडारी ग्लेायिर के ठीक नीचे भूस्खलन ाुरू हुआ था, वह अब लगातार बढ़ता जा रहा है। पिछले 17 सालों में ग्लेायिर को जोड़ने वाली पहाड़ी टूटती जा रही है, और अब जीरो प्वाइंट खिसककर आधा किमी पीछे आ गया है। इसी स्थान से अब लौट जाना पड़ता है, अब से 15 साल पहले तक अभियान पर जाने वाले पिंडारी ग्लेायिर तक जा सकते थे, लेकिन बाद के वर्षो में भूस्खलन बहुत तेजी से हुआ और बीच में खाई बढ़ती जा रही है। पर्यावरण बैज्ञानिकों का मानना है कि भूस्खलन इसी गति से हुआ तो आगामी 10 वर्षो में जीरो प्वाइंट एक किमी पीछे तक खिसक जायेगा। हिमालय क्षेत्र में स्थित कफनी ग्लेायिर का स्वरूप भी निरंतर बिगड़ रहा है। इस ग्लेायिर पर भी बर्फ काफी कम होती जा रही है और लंबी–चौड़ी दरारें दिख रही हैं। इससे स्पष्ट है कि ग्लेायिर तेजी से टूट रहा है। बैज्ञानिकों का मानना है कि पर्यावरण असंतुलन के कारण हिमालय पर अब बर्फ घटती जा रही है। हिमालय पर बर्फ का कम होना समूचे विव के पर्यावरण के लिए खतरनाक है। वनों के विनाा, असंतुलित निर्माण, खनन, प्रदूषण आदि के कारण पर्वतीय क्षेत्र में मौसम लगातार बदल रहा है। गर्मियों में वर्षा और बरसांत के मौसम में सूखा पड़ने जैसे परिवर्तन बहुत चिंताजनक हैं।
13	8	जून 26, 2000	जनसत्ता	गंगोत्री का मंदिर खतरे में	गंगा का उद्गम गोमुख ग्लेायिर न सिर्फ तेजी से पिंघल रहा हैं। बल्कि गंगोत्री मंदिर के ठीक उपर पहाड़ में दरार पड़ गई हैं। हिमालय के इस हिस्से में पहाड़ लगातार टूट रहे है। भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के वैज्ञानिकों का कहना है ग्लेायिर सालाना 50 मीटर पीछे जा रहा है। भूस्खलन से गंगा का स्वाभाविक प्रवाह रूक गया हैं। अगर यह स्थिती जारी रही तो हमारी संस्कृति की आधार श्रोत गंगा लुप्त हो सकती हैं। पिछले 25 साल में गोमुख हिमनद 4 किमी पीछे खिसक गया है। हिमालय की चौखम्बा पर्वत श्रृंखला से निकले गोमुख ग्लेायिर की लंबाई कभी 32 किमी थी जो अब सिर्फ 19 किमी रह गई हैं। ग्लेायिर की मोटाई भी एक किमी कम हो गई है। हिमालय का पर्यावरण यहां तेजी से बदल रहा है। वैज्ञानिकों का कहना है कि गोमुख दुनिया का सबसे तेजी से पिघलने वाला ग्लेायिर है। यात्रियो व पर्वतारोहियों के दर्जनों दल कुली खच्चरों के साथ ग्लेायिर को रौंदते हैं। पालीथीन प्लास्टिक का कचरा टनों के हिसाब से बिखरा पड़ा है। जे0एन0यू0 के पर्यावरण विज्ञान संस्थान के डा0 इकबाल जो वहां पर ग्लेायिर का अध्ययन कर रहे है, उनका कहना है कि दुनिया भर में केवल गंगोत्री ग्लेायिर की बर्फ तेजी से पिघल रही है। इसका पिघलने का मुख्य कारण इस इलाके में बढ़ता मानवीय हस्तक्षेप और बढ़ते पर्यटकों का दबाव है। इस इलाके में पंडों तथा साधुओं ने गंगा को जितना बेचा है उतना ही कारोबार यहां काम कर रही कोई 20 स्वयंसेवी संस्थाओं ने गंगा के नाम पर किया है।

14	8	अगस्त 8, 2000	अमर उजाला	आकर्षण खोती जा रही है फूलों की घाटी	नंदादेवी बायोस्फियर के अंतर्गत पड़ने वाली विवविख्यात फूलों की घाटी अव्यावहारिक वन नीति के चलते अपना आकर्षण खोती जा रही है। जिससे इसका अस्तित्व भी खतरे में पड़ता जा रहा है। साढ़े दस हजार फीट की उंचाई पर स्थित फूलों की घाटी एक दाक पहले तक दुनिया भर में फूलों की विविधता के लिए विख्यात थी। अव्यावहारिक वन नीति के चलते अब वहां फूलों की कुछ ही प्रजातियां देखने को मिल रही हैं। पूरी घाटी के एक तिहाई से ज्यादा हिस्से में जंगली घास–फूस व झाड़ियों का साम्राज्य स्थापित हो चुका है। वन अधिनियम 1980 के लागू होने के बाद केन्द्र सरकार ने 6 नवंबर 1982 को फूलों की घाटी को राष्ट्रीय पार्क घोषित कर दिया गया, जहां पुाओं के अलावा भेड़–बकरियों को भी प्रवेा के लिए प्रतिबंधित कर दिया। तब से यह घाटी धीरे–धीरे जंगली घास व झाड़–झंकाड़ से घिरने लगी है। झाड़ी और घास के कारण जमीन में खिले बचे–खुचे फूल प्रकाा न मिलने के कारण विलुप्त होते जा रहे हैं।
15	10	नवम्बर 1, 2001	दैनिक जागरण	कई महत्वपूर्ण वन औषधियां विलुप्त होने की कगार पर	प्राकृतिक सम्पदाओं से परिपूर्ण, वन औषधियों के अकूत भंडार को समेटे उत्तराखंड का यह वही हिमालयी क्षेत्र है, जहां संजीवनी लेने हनुमान आये थे। वैदिक काल से ही यह क्षेत्र ऋषि, मुनियों, धन्वतरी जैसे देव वैद्यों की गोध स्थली रही है। यहां के बुग्यालों में लोहे को स्वर्ण में बदलने वाली वनस्पति आज भी मौजूद है। ऐसे ही एक बुग्याल क्षेत्र वेदनी, औली, रूपकुंड, वाण बुग्याल में वन औषधियों के सर्वेक्षण के लिए क्षेत्रीय आयुर्वेदिक संस्थान ताड़ीखेत के वैज्ञानिकों ने उपर्युक्त बुग्यालों में पाई जाने वाली जड़ी–बूटियों की पहचान की। 3 हजार से 3750 मीटर की ऊंचाई में स्थित यह बुग्याल करीब 1500 हेक्टेयर में फैला है। बुग्यालों में पाई जाने वाली वनस्पति जो कि औषधि के रूप में प्रयुक्त की जाती है मुख्यतः गन्द्रायणी, जम्बू, अतीस, कुटकी, डोलू, वत्सनाभ, सालम पंजा, तालीसंपत्र, गुगल धूप, बज्रदंती, भोज पत्र, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जटामांसी, काकोली, 5416 प्रकार का चिरायता के अतिरिक्त कस्तूरी मृग भी यहां पाया जाता है। बहुतायत मात्रा में पाये जाने वाली वन औषधियां विलुप्त होने की स्थिती में जा रही हैं, समय रहते इनके संरक्षण के उपाय नही किए गये तो यह प्राकृतिक सम्पदा समाप्त हो जायेगी। जहां प्रकृति ने जड़ी–बूटियों का भंडार दिया है, उस क्षेत्र को भेड़, बकरियों व अन्य मवेाियों से बचाना आवयक है। कुछ बुग्यालों को संरक्षित कर वहां पर विधिवत खेती के तौर पर जड़ी–बूटियों का उत्पादन किया जा सकता है।

16	10	नवम्बर 18, 2001	अमर उजाला	विलुप्त हो रहा है राज्य पक्षी मोनाल	उच्च हिमालयी क्षेत्रो में पाया जाने वाला व उत्तरांचल का राज्य पक्षी घोषित दुर्लभ 'मोनाल' अब विलुप्त होने की कगार पर है। सरकार ने इसे राज्य पक्षी घोषित करते समय इसके संरक्षण के लिए कोई कदम नही उठाया है। इस पक्षी की संख्या तेजी से घट रही है। यह सुंदर पक्षी हिमालय क्षेत्र के 2300 मीटर से 5000 मीटर ऊंचाई पर घने जंगलो मे पाया जाता हैं। उत्तरांचल के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में इसकी संख्या में लगातार गिरावट आई है उत्तरांचल में वर्तमान में इनकी संख्या चार सौ के आस–पास है। राज्य में पिथौरागढ़ जनपद में हिमालय का अधिकांा भाग है इस क्षेत्र में भी इस प्रजाति की संख्या पचास से अधिक नहीं हैं। इसके अतिरिक्त चमोली, उत्तरकाशी क्षेत्र में इसकी कुछ संख्या सामने आयी थी। उच्च हिमालयी क्षेत्रों में आलू की फसल को इसके द्वारा नुकसान पहुंचाने की आांका से लोग इसका शिकार करते है। इससे यह प्रजाति लगातार विलुप्त हो रही है। इसका मांस स्वादिष्ट व गरम माना जाता है। इसलिए भी इसका तेजी से शिकार हो रहा है। इसकी खाल व पंख सजावट के काम आते है। इन्हे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारी कीमत में बेचा जा रहा हैं। हिमालय क्षेत्रों में वनो के लगातार घटने तथा हिमालय में बर्फ के लगातार पिघलकर कम हो जाने से यह पक्षी विलुप्त होने लगा है। इस प्रजाति को बचाने की फिलहाल कोई ठोस योजना सरकार के पास नही हैं। सरकार ने इस मसले पर कोई ठोस निर्णय नही लिया तो उत्तरांचल के इस राज्य पक्षी को विलुप्त होने से कोई नही बचा सकता हैं।
17	10	दिसम्बर 1, 2001	अमर उजाला	सौ साल में गायब हो जाएगी कमीर की डल झील	कमीर विवविद्यालय के भूगोल विभाग के जी0एम0 राथर ने चेतावनी दी है कि कमीर के सबसे आकर्षक पर्यटक स्थलों में से एक डल झील अगले सौ सालों मे गायब हो जाने का अंदेाा बढ़ रहा हैं। उन्होने कहा कि डल झील की तलछट दर में बढ़ोतरी हुई है और यह धीरे–धीरे अपना अस्तित्व खो रही है। इससे पहले वर्ष 1875 से 1996 के बीच डल झील के सिकुड़ने की दर प्रति वर्ष 71,000 वर्ग मीटर मापी गई थी। पिछले 65 वर्षों मे यह दर तेजी से बढ़ी हैं। 1931 से 1996 के बीच यह बढ़कर 117,000 वर्ग मीटर प्रति वर्ष हो गई है। इस दर के हिसाब से आने वाले सौ वर्षो में 11.7 वर्ग किलोमीटर लंबी झील पूरी तरह से सिकुड़ जाएगी। उन्होने कहा कि बढ़ती जनसंख्या का दबाव, पहाड़ी क्षेत्रों में वनों की छंटाई, बड़े स्तर पर भूमि क्षरण के साथ हाउसबोट से गंदगी का सीधा निकास आदि मौजूदा समस्याओं का मुख्य कारण है। इस समय डल झील का कुल क्षेत्र 16.4 वर्ग किलोमीटर है और औसत गहराई 1.5 से लेकर दो मीटर है और ज्यादा से ज्यादा गहराई 3.4 मीटर है। पिछले पचास सालों के दौरान झील पहले ही आधी सिकुड़ चुकी है। डल झील 1875 में 25 वर्ग किलोमीटर थी, जो 1996 में 16.4 वर्ग किलोमीटर ही रह गई। जबकि 1931 के बाद से झील की सिकुड़ने की दर में काफी तेजी आई है। 1931 में डल झील की लम्बाई 24 वर्ग किलोमीटर थी।

18	10	अप्रैल 11, 2002	अमर उजाला	बद्रीनाथ–केदारनाथ के विलुप्त होने का खतरा	भारतीय उपमहाद्वीप व यूरेशिया की टेक्टानिक चट्टानों के आपस में टकराने से हमारी उारी सीमा घट रही है। हिमालय पर स्थित बद्रीनाथ व केदारनाथ पर विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा हैं। यह जानकारी भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान में भूकम्प अभियांत्रिकी पर आयोजित कार्यांला में प्रो0 सीवीआर मूर्ति ने दी। उन्होने बताया कि भारतीय उपमहाद्वीप चूंकि यूरेशिया से काफी छोटा है इसलिए दोनों के बीच टकराने से अधिक नुकसान उसका ही हो रहा है। यूरेशिया चट्टान पर पड़ने वाले दो चीन की जमीन ऊपर उठ रही है और हमारे हिमालयी क्षेत्र नीचे धंस रहे है। हिमालय प्रत्येक वर्ष 5 सेंटीमीटर ऊपर उठ रहा है। दो का 12.5 वर्ग मीटर उारी क्षेत्र घटता जा रहा है। एक समय ऐसा आएगा जब बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री व यमुनोत्री जैसे धार्मिक स्थल व अनेक पर्यटन केंद्रों पर लुप्त होने का खतरा मंडराने लगेगा। इस समय सभी टेक्टानिक चट्टाने उार की ओर बढ़ रही हैं। भारतीय उपमहाद्वीप छोटी चट्टान है इसलिए यह काफी तेजी से ऊपर को जाने का प्रयास करता है जबकि यूरेशियाई चट्टान की गति कुछ धीमी है। इस प्रकार आने वाले वर्षों में दोनों चट्टानों में आचर्यजनक भौगोलिक परिवर्तन होंगे।
19	10	अप्रैल 12, 2002	अमर उजाला	गुणों से भरपूर है राजकीय पुष्प ब्रह्म कमल	उत्तरांचल के राजकीय पुष्प ब्रह्म कमल की प्रदेा में चौबीस व विव भर में चार सौ दस प्रजातियां पाई जाती हैं। इस पुष्प की जहां धार्मिक मान्यताएं हैं, वहीं यह दवा के रूप में भी प्रयोग में लायी जाती हैं। इसका वानस्पतिक नाम ससुरिया ओबवलारा है जो ऐस्टेरेसी कुल में आता है। विव भर में ब्रह्म कमल की चार सौ दस प्रजातियां यूरेशिया, आस्ट्रेलिया व उत्तरी अमेरिका में है। इनमें से 61 प्रजातियां भारत के जम्मू कमीर, हिमांचल प्रदेा, उत्तरांचल, सिक्किम में पाई जाती हैं। इसकी 24 प्रजातियां उत्तरांचल राज्य के उच्च शिखरीय दुर्गम स्थानों में पायी जाती है। वनस्पति विज्ञानियों द्वारा ब्रह्म कमल का उद्गम स्थान यूनान को माना जाता है। ब्रह्म कमल की प्रजातियां प्रमुख रूप से एक वर्षीय, द्विवर्षीय, व बहुवर्षीय हैं। ये 15 से 45 सेंटीमीटर ऊंचाई लिए रहती है। जड़े स्थूल व गहरी धंसी होती है। पत्तियां मूल रूप से जड़ के पास बहुतायत में तथा तने के ऊपरी भाग व स्तंभीय कम होती है। फूल एकल और कभी–कभी गुच्छे के रूप में फीका पीला या हल्का भूरा रंग लिए होता है। इसके स्पर्ा कर लेने मात्र से इसकी सुगंध कई घंटो तक रहती है। यह जुलाई–अगस्त में खिलता है। उत्तरांचल में मिलने वाली 24 प्रजातियों में से चौदह मे जुलाई, नौ में अगस्त तथा एक प्रजाति में मार्च माह में फूल खिलते है। हड्डी टूटने, चोट, खरोंच, गुमटा व धाव पर मलहम की तरह लेप लगाया जाता है। पेाब संबंधी रोगों में, खॉसी, सर्दी, जुखाम, पेट की पाचन विषयक बीमारियों में भी इसे उपयोग में लाया जाता है।

20	10	अप्रैल 15, 2002	दैनिक जागरण	पूरे हिमालय के लिए मुसीबत बना पर्वतारोह	एडमंड हिलेरी, मैलोरी, तेनजिंग नोर्गे ने एवरेस्ट पर फतह करते समय यह सोचा भी न होगा कि वे एक ऐसे खतरनाक खेल को जन्म दे रहे है जो आने वाले कल में न सिर्फ एवरेस्ट के लिए बल्कि पूरे हिमालय के लिए मुसीबत बन जाएगा। हिमालय में सबसे खतरनाक कूड़े के रूप में सालों से पड़े इनके ावों ने पर्यावरण प्रदूषण की एक नई समस्या खड़ी कर दी है। एक गैर सरकारी सर्वे के मुताबिक गत वर्ष गंगोत्री और पिंडारी ग्लेयिर सहित अन्य चोटियों पर करीब चालीस हजार पर्वतारोहियों ने अपना झंडा लहराया और इन दुस्साहसिक अभियानों में लगभग 25 लोगों की मौत हो गई। अब तक के आंकड़ो के अनुसार गंगोत्री से आगे की चोटियों में प्रति वर्ष सात से आठ पर्वतारोहियों की मौत हो जाती है और पूरे हिमालय में हर साल तीन दर्जन से भी अधिक पर्वतारोही चोटियों से गिर कर मर जाते हैं। अकेले एवरेस्ट में 2001 तक लगभग तीन सौ पर्वतारोहियों की मौत हो चुकी है। उत्तरांचल के भागीरथी क्षेत्र में 1999 में आठ, 2000 में पांच पर्वतारोहियों की मौत हो चुकी है जबकि 2001 में यह संख्या बारह तक पहुंच गई। सबसे खतरनाक पहल यह है कि इनमें से लगभग तेरह पर्वतारोहियों के ाव आज तक नहीं उठाए गए हैं। पूरे हिमालय में पर्वतारोहियों के यही ाव पर्यावरणविदों के लिए प्रदूषण की नई समस्या बन गये है उत्तरांचल में पर्वतारोहण के दौरान चोटियों से गिरकर होने वाली मौतों में वर्ष 2001 से लेकर फरवरी 2002 तक अकेले उत्तरांचल में तीस लोगों की मौत हो चुकी है। पर्यावरणविदों का मानना है कि सबसे खतरनाक कुड़े की ाक्ल में पड़े इन ावों के कारण इन क्षेत्रों में कई जानलेवा बीमारियों की संभावना बढ़ गई है। दरअसल, ून्य से 23–30 डिग्री से लेकर 200 डिग्री नीचे तक के तापमान में कोई भी चीज सड़ती नही। अत्यधिक ठंड के कारण यहां पर्वतारोहियों के ाव भी सुरक्षित रहते हैं जो दूसरे कचरे की तरह ही हिमालय के पर्यावरण का मिजाज बिगाड़ने में सक्रिय हैं। पर्यावरणविदों का कहना है कि अगर सरकार ने हिमालय में पड़े पर्वतारोहियों के ावों को उठाने के लिए तत्काल कोई कदम नही उठाए तो हालात काफी खराब हो सकते हैं। पर्वतारोहियों के कचरे से नदियां अपने मूल से ही प्रदूषित हैं। निचित तौर पर अब सरकार को यह तय करना होगा कि देा के लिए हिमालय जरूरी है या पर्वतारोहण। स्थिति तो यह है कि अब पहाड़ी क्षेत्रों में पर्यावरण–पर्यावरण चिल्लाना सबसे लाभकारी व्यवसाय हो गया है। पर्यावरण की समस्या कोई तकनीकी समस्या नही है। यह पृथ्वी पर मानव के अस्तित्व का प्रन है। कौन किसे समझाए कि पर्यावरण जीवन के लिए है न की जीवन पर्यावरण के लिए?
21	11	मार्च 6, 2003	अमर उजाला	संवरेगी नैनीताल की झीलों की किस्मत	नैनीताल की झीलों को संवारने के लिए राज्य सरकार ने इससे संबंधित परियोजना तैयार कर इसे केन्द्र सरकार को भेजने का कार्य पूरा कर लिया है। उम्मीद है कि केन्द्र इस परियोजना में राज्य को 70 करोड़ रूपये तक की मदद करेगा। परियोजना में नैनी झील के साथ ही भीमताल, नौकुचियाताल, सातताल व खुरपाताल का विकास और सौंदर्यीकरण किया जाना ाामिल है। केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने इस परियोजना को प्रायोजित किया है। राज्य के हरी विकास विभाग ने इन झीलों को संवारने की पूरी परियोजना तैयार की है। कुछ झीलों में पानी प्राकृतिक झरनों व जल धाराओं से आता है। झीलों के आसपास आबादी लगातार बढ़ने, प्रदूषण में इजाफा होने, कूड़ा फेंके जाने और सफाई का ख्याल न रखे जाने के कारण उनका नियोजित विकास नहीं हो पा रहा है। सरकारी रिपोर्ट के मुताबिक नैनी झील की गहराई भी गंदगी फेंके जाने के कारण कम हो गई है। भूस्खलन से भी झील पर असर पड़ रहा है। झीलों के सौंदर्यीकरण की परियोजना पूरी तरह आधुनिक प्रौद्योगिकी का सहारा लेकर तैयार की गई है। परियोजना तीन साल की है, तथा इसमें पर्यटन की दृष्टि से भी झीलों को संवारा जाएगा।

22	11	अप्रैल 3, 2003	अमर उजाला	नदी का पानी साफ रखने में सहायक है महाीर	समुद्र तल से दो हजार मीटर की ऊंचाई व जल के न्यूनतम छह डिग्री व अधिकतम 35 डिग्री सेल्सियस तापमान में पानी को ुद्ध रखने वाली महाीर मछली बहुतायत में पाई जाती है। धारचूला से बूम तक महाकाली नदी में सुनहरी महाीर मछलियों का एक बड़ा आसरा रहा है। इसके अलावा महाकाली की सहायक रामगंगा, सरयू, गोरी, लधिया, लोहावती आदि नदियों में भी यह पाई जाती है। आज जबकि जल प्रदूषण की गंभीर समस्या बनी हुई है, लेकिन महाकाली के पानी को ुद्ध रखने में इस मछली का बड़ा योगदान रहा है। महाीर मांसाहारी मछली है। यह नदी के पानी को दूषित करने वाले जैव रसायन, अधजले ावों व नदी में प्रवाहित होने वाले मृत पाुओं को खा जाती है। इसके अतिरिक्त यह कीड़े मकोड़ों व पानी के साथ प्रवाहित होने वाले जीवों को लील जाती है अपने वजूद के लिए पानी का उपयुक्त तापमान पाकर इसके द्वारा आज तक महाकाली नदी को प्रदूषित होने से बचाया हुआ है। संतुलित प्राकृतिक खनिजों व जीवनदायिनी जड़ी–बूटियों के रस को अपने साथ लाने वाली इस नदी का जल सुपाच्य व मीठा होने के साथ गरिष्ठ भोजन को बहुत कम समय में पचा देता है। मानवीय क्रूरताओं के चलते इस नदी में ब्लास्टिंग करने, ब्लीचिंग पाउडर डालने, नदी के प्रवाह में जाल डाल कर इन महत्वपूर्ण महाीर मछलियों का ाकिार किए जाने से अब इनकी तादात कम होती जा रही है। पंचेवर में सरयू व महाकाली नदी का संगम मत्स्य आखेट के लिए एाया का एक महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। देा के कौने–कौने से आने वाले मत्स्य आखेटक यहां महाीर की कम होती संख्या से बेहद चिंतित हैं सड़क निर्माण में प्रयुक्त होने वाले विस्फोटकों के नदी में डाले जाने से महाीर के अस्तित्व को भारी खतरा पैदा हो गया है। मत्स्य वैज्ञानिकों ने छोटी व प्रजनक मछलियों के ाकिार, पानी में मिट्टी, कंकड़ व पत्थरों के बढ़ते अनुपात, प्रजनन एवं संवहन क्षेत्रों में विस्फोटकों व कीटनाकों के प्रयोग पर गंभीर चिंता जताई है।
23	11	अप्रैल 3, 2003	अमर उजाला	उत्तरांचल अतिसंवेदनाील भूकंप जोन में	यह तथ्य चौंकाने वाले भले ही हों, पर भू वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार पूरा उत्तरांचल राज्य भूकंप की दृष्टि से सिस्मिक जोन पांच (अति संवेदनाील जोन) में आता है। एक तरह उत्तरांचल भारत का अकेला ऐसा राज्य है, जिसका पूरा भूभाग सिस्मिक जोन पांच व चार में बसा है। यहां भूकंप की अधिकतम तीव्रता रिक्टर स्केल पर 9 एमएम होने का आकलन किया गया है। भूकंप की दृष्टि से उत्तरांचल के चमोली जिला, अल्मोड़ा का उत्तरी अद्धा व जिला पिथौरागढ़ का दो तिहाई भाग जो लोहाघाट के पास चिरा के उत्तर में स्थित है, भूकंप की दृष्टि से सबसे अधिक संवेदनाील है। यह क्षेत्र अति संवेदनाील जोन में आता है जहां भूकंप की तीव्रता 9 एमएम और उससे अधिक हो सकती है। भू वैज्ञानिकों के अध्ययनों के अनुसार पूरे हिमालयी क्षेत्र में 2500 मिमी की लंबाई में मेन बाउंड्री थ्रस्ट (एमबीटी) अथवा मेन सेंट्रल थ्रस्ट (एमसीटी) रेखाएं कुछ वर्षो से लगातार गतिमान हैं। इस कारण ही सुप्त भूस्खलन भी पिछले एक दाक से अधिक कियाील हो गए हैं। भू वैज्ञानिकों के अनुसार गंगा टीयर फाल्ट जो दिल्ली, हरिद्वार की भीतरी सतह (रिज) भी कहलाती है, पूरे गढ़वाल क्षेत्र को उत्तर पूर्व दिाा में प्रतिवर्ष 2 से 3 सेमी तक ढकेल रही हैं। भू वैज्ञानिकों की चेतावनी के बावजूद राज्य में भूकंप रोधी भवन तकनीक लागू करने को कोई समग्र नीति राज्य के लिए अब तक नहीं बनी है।

24	11	अप्रैल 28, 2003	अमर उजाला	बाइस साल बाद फिर दिखेगी नंदादेवी की बहारें	विव धरोहर खूबसूरत नंदादेवी राष्ट्रीय उद्यान दो दाक बाद पहली मई से पर्यटकों के लिए खुलने जा रहा है। लेकिन साल भर में सिर्फ पांच सौ पर्यटकों को ही अनुमति मिलेगी। लगभग दो दाक पहले पर्वतारोही अभियानों की वजह से क्षेत्र के वन्यजीवों और वनस्पतियों को हो रहे नुकसान की वजह से यहां प्रवेा पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। नंदादेवी उद्यान को संयुक्त राष्ट्र संघ ने विव धरोहर घोषित किया था। नंदा देवी राष्ट्रीय पार्क, नंदादेवी बायोस्फियर रिजर्व का कोर क्षेत्र है। वर्ष 1982 में पार्क बनने से पहले नंदादेवी चोटी के बेस कैंप सरसों–पाताल के 97 वर्ग किमी क्षेत्र को 1939 में सेंचुरी घोषित कर दिया था। उत्तरांचल के तीन जिलों चमोली, पिथौरागढ़ तथा अल्मोड़ा के 2236.74 वर्ग किमी क्षेत्र में यह उद्यान फैला हुआ है। इसका सबसे अधिक क्षेत्र चमोली जनपद में है। इस समूचे क्षेत्र को दो भागों में विभक्त किया गया है। इसका 624.62 वर्ग किमी कोर क्षेत्र तथा 1612.12 वर्ग किमी क्षेत्र बफर जोन से जाना जाता है। बफर क्षेत्र में मनुष्य की गतिविधियां मान्य थी, लेकिन कोर क्षेत्र पूर्ण रूप से मानव की गतिविधियों के लिए प्रतिबंधित था। ाासन ने बीती पांच अप्रैल को उद्यान पर्यटकों के लिए खोलने के आदेा दिये हैं। भौगोलिक दृष्टि से भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है। देा की सबसे ऊंची दस चोटियों में आधी से अधिक चोटियां इसी इलाके में पड़ती है। इनमें नंदादेवी, त्रिाुल, नंदाघुघटी आदि है।
25	11	अप्रैल 28, 2003	अमर उजाला	उत्तरांचल भी बनेगा एाियन गैंडे का आाियाना	उत्तरांचल के वन्यजीवों के कुनबे में एक नये सदस्य को लाने की तैयारियां चल रही है। भारी–भरकम काया वाला अतुलनीय बलााली वह जीव है एक सींग वाला एाियन गैंडा (एाियन राइनोसिरस)। सरकार का इरादा दुर्लभ हो चले इस जीव का आाियाना ऊधमसिंह नगर जनपद की सुरंई रेंज में बनाने का है। जीव जगत के इस अनूठे जीव को सूबे में लाने के लिए विस्तृत अध्ययन कराया जा रहा है। केंद्र सरकार के समक्ष इस संबंध मे बात रखी जा चुकी है। ऊधमसिंह नगर जिले की सुरंई वन रेंज को पारिस्थितीकीय अनुकूलन की वजह से गैंडे के मिजाज के लिए मुफीद पाया गया है। यह वन रेंज खटीमा तहसील में आती है। गौरतलब है कि आज विव में गैंडों की संख्या काफी कम रह गई है। उसके सींग से बनने वाली कथित ाक्तिवर्धक दवाओं की वजह से अंधाधुंध ाकिार ने गैड़ों को दुर्लभ जीवों की श्रेणी में खड़ा कर दिया है। गैड़ों की निरंतर घटती तादात की वजह से उसे डियूल–1 की जमात में रखा गया है वर्तमान में पूर्वोत्तर राज्यों, खासकर असम में गैंडे अभी बहुतायत में हैं। पड़ोसी देा नेपाल के तराई क्षेत्र में भी गैंडे सुरक्षित हैं। गैडों को उत्तरांचल की जैव विविधता का हिस्सा बनाने के प्रयास लंबे समय से चल रहे हैं। सूत्रों के अनुसार सरकार का इरादा पूर्वोत्तर अथवा नेपाल से कुछ गैंडों को यहां लाकर बसाने का है। सरकार को लगता है कि इससे राज्य की जैवविविधता तो समृद्ध होगी ही, प्रकृति प्रेमी पर्यटकों को भी लुभाया जा सकेगा।

26	11	मई 29, 2003	अमर उजाला	अंतिम सांसें गिन रहे हैं हिमालय के दुर्लभ कस्तूरी मृग	बागेवर जिले के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में दुर्लभ कस्तूरी मृगों तथा अन्य दुर्लभ जन्तुओं का ाकिार पिछले कुछ वर्षो से धड़ल्ले से किया जा रहा है। विभिन्न प्रकार की दवाइयों व यौनवर्द्धक के रूप में उपयोग में लाई जाने वाली कस्तूरी का लालच इसके पीछे है। आठ हजार से लगभग 16 हजार फुट तक की ऊंचाई में अठखेलियां करने वाला यह मृग संरक्षण के अभाव में असमय ही मौत का ाकिार हो रहा है। ाकिारियों के चलते इसकी भावी पीढ़ी जन्म लेने से पहले ही गर्भ में काल का ग्रास बन रही है। कस्तूरी मृग कमीर से लेकर उत्तरांचल के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में पाया जाता है। दो फुट ऊंचा व लगभग साढ़े तीन फुट लम्बा यह मृग आम मृगों की ही तरह होता है। नर व मादा में से केवल नर मृग की ही नाभि में कस्तूरी होती है मादा मृग वर्ष में छह माह के अंतराल में दो बार बच्चो को जन्म देती है और दोनों बार दो–दो बच्चों को जन्म देती है जिससे इनका प्राकृतिक संतुलन बना रहता है। गर्भकाल में मादा मृग झुण्डों में रहते हैं और इनका बसेरा ग्लेायिरों के आसपास रहता है। उस वक्त ाकिारियों का कहर इन पर टूटता है तो अधिकांा मादाएं गर्भ में पल रहे मृग के भार से तेज न दौड़ पाने की वजह से गोलियों का ाकिार हो जाती हैं। साथ में इसके भोजन जड़ी–बूटी पर भी मानवीय व तस्करों का दबाव बढ़ता जा रहा है। हर वर्ष बुग्यालों में लगने वाली आग का एक मुख्य कारण अवैध ाकिार भी है और यह आग फिर बर्फ गिरने के बाद ही बुझ पाती है। अक्सर जड़ी–बूटी का सेवन करने वाला यह मृग भोजन की कमी के चलते पत्तियों का भी सेवन करता है जिसके चलते इसे कृत्रिम रूप से पालना भी इसके प्राकृतिक स्वरूप को नष्ट करना ही है। बागेवर जिले की सीमा पर स्थित कोटमन्या में कस्तूरी मृग विहार में न तो मृगों को स्वछन्द वातावरण मिल पा रहा है और न ही इनकी कस्तूरी में तासीर। कस्तूरी मृग हिमालय के जिस क्षेत्र में स्वछन्द जीवन बिताते हैं, उन्हीं क्षेत्रों में इन्हे संरक्षण देने की भी आवयकता है जिस गति से इनका ाकिार हो रहा है, उस पर यदि सरकार अब भी न चेती तो ग्लेायिरों का यह चिरसंगी मृग कुछ बरसों बाद दिखना बंद हो जाएगा।
27	11	जून 5, 2003	दैनिक जागरण	पहाड़ में तापमान 43 डिग्री तक पहुंचा	जेठ की तपती धूप ने इस बार कहर बरपाते हुए समूचे तराई–भावर को भी लू की चपेट में ला दिया है। गर्मी का आलम यह है कि पहाड़ की घाटियों में भी तापमान 43 डिग्री तक जा पहुंचा है। नैनीताल ाहर में पारा कभी 27 डिग्री से ऊपर नहीं पहुंचा आज यह 31 डिग्री सेल्सियस को छू गया। यही हालत अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ की भी रही। पिथौरागढ़ जिले के घाटी के इलाके क्रमाः धारचूला, झूलाघाट, घाट, थल आदि का तापमान 43 डिग्री तक जा पहुंचा। भीषण गर्मी के चलते पहाड़ में पानी की इतनी बड़ी किल्लत भी पहली बार हुई है। कई जगह लोग बूंद–बूंद पानी को तरस गये हैं। अलबत्ता बर्फानी नदियों का जल स्तर जरूर बढ़ गया है। इधर पहाड़ से लगी भावर पट्टी भी बुरी तरह तप रही है। गर्मी ने इस बार वर्ष 1998 में पड़ी भीषण गर्मी का रिकार्ड तोड़ दिया।

28	11	जून 6, 2003	अमर उजाला	सूख जाएगी पतितपावनी गंगा की धारा	सदियों से उत्तर भारत की जीवनरेखा बनी हुई गंगा नदी का अस्तित्व खतरे में है। गंगा के उद्गम स्थल गंगोत्री का गोमुख ग्लेयिर तेजी से पिघल रहा है। अगर यही हाल रहा तो वर्ष 2025 तक ग्लेयिर पूरी तरह पिघल जाएगा और गंगा की धारा तब सूख जाएगी। सैकड़ों वर्षों से धर्म और संस्कृति का अभिन्न हिस्सा बने रहने वाली गंगा के अंत की यह कल्पना बेचैन करने वाला है पर विज्ञानी और पर्यावरणविदों की यह आांका ठोस तथ्यों पर आधारित है। उनके अनुसार ग्लेयिर का घटना पृथ्वी के गरम होने और उद्गम स्थल के पास प्रदूषण को माना जा सकता है। जाने माने पर्यावरणविद् और उत्तरांचल के विख्यात चिपको आंदोलन के नेता सुंदरलाल बहुगुणा ने बृहस्पतिवार को जालंधर में कहा कि गंगोत्री ग्लेयिर की हालत काफी चिंताजनक है। उन्होंने कहा कि हिमालय के निचले इलाके में वनों की अंधाधुंध कटाई ने संकट को बढ़ाया है। यह वन इलाका बर्फीले पहाड़ों तक गरम हवाओं को जाने से रोकता था। नतीजन ग्लेयिर तेजी से पिघलने लगे। उन्होंने कहा मानवजाति को अपने भविष्य की जरा भी चिंता है तो हिमालय क्षेत्र में वृक्षारोपण का काम बड़े स्तर पर तत्काल ुरू कर दिया जाना चाहिए। पर्यावरणविदों का कहना है कि गंगोत्री ग्लेयिर प्रतिवर्ष दस मीटर की दर से घटता जा रहा है। लगभग 150 साल में ग्लेयिर दो किलोमीटर घट गया।
29	11	जून 9, 2003	अमर उजाला	पानी का 'रिचार्ज' स्तर गिरने से नदियां सूखी	वैज्ञानिकों का मानना है कि सालभर में होने वाली कुल बारिा का कम से कम 31 प्रतिात पानी धरती के भीतर रिचार्ज के लिए जाना चाहिए तभी गैर हिमनद नदियों तथा जल स्रोतों से लगातार पानी मिल सकेगा, जबकि हाल में वैज्ञानिकों द्वारा पर्वतीय क्षेत्र के संदर्भ में किए गए एक अध्ययन में रिचार्ज का जो स्तर पाया गया वह बहुत चिंताजनक है ाोध के मुताबिक कुल बारिस का औसतन सिर्फ 13 प्रतिात पानी धरती के भीतर जमा हो रहा है। ाेष पानी बहकर नदियों के जरिए समुद्र में चला जाता है। धरती के भीतर पानी जमा न होने के कारण ही नदियां व जल स्रोत सूख गये हैं। इस कारण बरसात में बाड़ की समस्या भी खड़ी हो रही है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि अमेरिकी वैज्ञानिकों ने 1982 में पूर्वी अमेरिका के कुछ समृद्ध वनों के भू–भाग में एक ाोध करके यह पाया कि साल भर में होने वाली कुल बारिा का 31 प्रतिात पानी धरती के भीतर जमा होना चाहिए तभी संबंधित क्षेत्र में स्थित नदियों जल स्रोतों आदि में पर्याप्त पानी रहेगा। इस ाोध के बाद ही रिचार्ज का मानक 31 प्रतिात तय हुआ। कुमाऊं विव विद्यालय अल्मोड़ा परिसर में भूगोल विभाग के रीडर डा0 जे0एस0 रावत ने पिछले छह साल में अल्मोड़ा जिले पर केंद्रित अपने ाोध में जो स्थिति पाई है वह वास्तव में चिंताजनक है। ाोध में उन्होंने पाया कि बांज के वन क्षेत्र में बारिा के पानी का रिचार्ज 23 प्रतिात, चीड़ के वन क्षेत्र में 16 प्रतिात, कृषि भूमि में 18, बंजर भूमि में 5 तथा ाहरी क्षेत्र में पानी का रिचार्ज मात्र 3 प्रतिात है जो कि 31 प्रतिात से काफी कम है। यदि औसत निकाला जाए तो भी रिचार्ज का स्तर मात्र 13 प्रतिात है जो मानक से 18 प्रतिात कम है। ाहरी क्षेत्र में तो रिचार्ज की स्थिति बहुत चिंताजनक है। सड़कें, भवन तथा अन्य निर्माण कार्यों से ाहरी इलाकों में बारिा का मात्र 3 प्रतिात पानी ही धरती के भीतर जमा होता है, जबकि ाहरों में पानी की खपत गावों की अपेक्षा कई गुना अधिक है। रिचार्ज का स्तर गिरने से ही पहाड़ में जल स्तर कम हो गया है क्योकि धरती के भीतर पानी जमा नही होगा तो गर्मी के मौसम में एक स्तर के बाद जलस्रोतों से पानी आना बंद हो जाएगा।

30	11	जून 10, 2003	दैनिक जागरण	पहाड़ की चोटी पर करोड़ों वर्ष पुराने 'समुद्री जीवाम'	भारत–चीन सीमा पर फौजी जिंदगी के अलावा प्रकृति का एक अद्भुत चमत्कार भी है। पहाड़ की 17 हजार फीट ऊँची चोटी पर समुद्र! सौ साल पुराना यह समुद्र पलक–पांवड़े बिछाए लफथल में आपका इंतजार कर रहा है। मगरमच्छ, कछुआ, घोंघा, सीप, केंचुआ, व्हेल, ाार्क, सांप और स्टार फिा जैसे समुद्री जीवों की अनगिनत किस्में आपके स्पा को यहां बेताब है। आपकी पसंदीदा मछलियों की ढेरों किस्में भी लफथल में जहां तहां बिखरी हैं। ये मछलियां खाई नहीं जा सकती हैं क्योंकि करोड़ों वर्ष बासी है उत्तरांचल के चमोली जनपद स्थित लफथल की चोटी पर फेली समुद्री जीवों की लंबी श्रृंखला दरअसल जीवामों की ाक्ल में मौजूद है। आज जहॉ हिमालय है पांच करोड़ साल पहले वहां टेथिस सागर हुआ करता था। लफथल वो इलाका है जो उस वक्त टेथिस सागर की तलहटी में था। टेथिस से हिमालय बनने की प्रक्रिया में तब प्रागेतिहासिक काल की नदियों द्वारा तात्कालिक महाद्वीपों से लाई गई मिट्टी की तहों में समुद्री जीव दब गए। पृथ्वी की गर्मी और दबाव से वो धूल की परतें चट्टानों में बदल गई। पृथ्वी के लगातार बलों ने इन चट्टानों को पहाड़ की चोटी तक पहुंचा दिया। उत्तरांचल के मानचित्र पर लफथल क्षेत्र भले ही उपेक्षित पड़ा है मगर टेथिसिसन पर्वत श्रृंखला की इस चोटी पर सौ करोड़ से पांच करोड़ साल पुराने समुद्री इतिहास बेहिसाब बिखरा पड़ा है। लफथल पहुंचकर यह देखना भी सचमुच कोतुहल भरा है कि हिमालय में जब समुद्र की ाुरूआत हुई थी तो तब कैसा रहा होगा उसके जीवों का जीवन। लफथल में 500 मिलियन वर्ष पुराने रीड वाले (कोन्ड्रोन प्रजाति) के समुद्री जीवों के अवोष भी है तो 250 मिलियन वर्ष पुराने मछली के जीवाम भी। ाफिलोपोडा प्रजाति के जीव तो यहां यह भी बताते है कि 130 मिलियन वर्ष पूर्व टेथिस सागर की गहराई 1000 मीटर रही होगी। लफथल की ाक्ल में मिले कुदरत के इस नायाब तोहफे को उत्तरांचल और केन्द्र सरकार भले ही पूरी तरह भूल गई है बावजूद इसके यहां फैले अवोष समुद्र विज्ञान की एक पूरी कहानी बयां करते हैं। पांच करोड़ साल पहले तक कैसा रहा होगा टेथिस सागर? समय के साथ क्या बदलाव आए? पानी के खारेपन और तापमान ने समुद्री जीवों को कितना प्रभावित किया इसका पूरा ब्यौरा भी लफथल में मौजूद है।
31	11	जून 16, 2003	दैनिक जागरण	भविष्य में प्यास बुझाने का एकमात्र विकल्प पिंडर परियोजना	कोसी, रामगंगा व गोमती नादियों के सूखने की स्थिति में केवल पिंडर नदी को ही एकमात्र विकल्प माना जा रहा है। अभी तक इन तीन नदियों पर ही दर्जनों ाहर व हजारों गांव पानी के लिए निर्भर हैं। लेकिन इनके जल स्तर में लगातार कमी सर्वाधिक चिन्ता का बिषय बनी हुई है। इसका विकल्प केवल पिंडर नदी है जो हिमालय से बहती है। 36 वर्ष पूर्व इस नदी से बहुउद्देीय परियोजना की कल्पना की गयी तथा बीस वर्ष पूर्व इसका सर्वेक्षण हुआ था। चमोली (गढ़वाल) जनपद के हिमाच्छादित क्षेत्र पिंडर घाटी से बहने वाली सदानीरा इस नदी से पानी ग्वालदम तक लाया जा सकता है। 9 हजार फिट की ऊँचाई से 6 हजार फिट तक लाया जाने वाला यह पानी ग्रेविटी सिस्टम (गुरूतवाकर्षण पद्धति) से ग्वालदम पहुंचेगा। पूर्व में किये गये सर्वे के मुताबिक यह लगभग 300 किलोमीटर लम्बी परियोजना है। ग्रेविटी सिस्टम से इस परियोजना का पानी कौसानी पहुँचेगा, जहॉ लघु झील व विद्युत परियोजना बनायी जा सकती है। इसके बाद इस पानी को क्रमाः गोमती (बागेवर), कोसी (अल्मोड़ा), रामगंगा नदी (चौखुटिया) में प्रवाहित किया जा सकता है। इस तरह इस महत्वाकांक्षी योजना से इन तीनों नदियों का जल स्तर बढ़ जायेगा, जिससे लाखों लोग अपनी प्यास ही नहीं बुझायेंगे, बल्कि सिंचाई के लिए भी पानी उपलब्ध हो जायेगा। यदि 300 किमी लम्बी पिंडर परियोजना का कार्य होता है तो इससे चमोली जनपद ही नही बल्कि अल्मोड़ा, बागेवर तथा नैनीताल जनपद के वृहत्तर क्षेत्र की कायाकल्प ही हो जायेगी।

32	11	जून 26, 2003	नवभारत टाइम्स	बढ़ती आबादी और पर्यटकों की भेंट चढ़ रहा है ब्रह्म कमल	हिमालय में लगातार बढ़ रहे जनसंख्या के दबाव और संरक्षण के अभाव के चलते उत्तरांचल का राज्य पुष्प ब्रह्म कमल विलुप्ति के कगार पर पहुंच गया है। दरअसल, उत्तरांचल में पर्यटकों, पर्वतारोहियों और घुमक्कड़ों को यह जानकारी नही है कि यह फूल कितना दुर्लभ है। इस जानकारी के अभाव में वे इसे आम फूलों की तरह जड़ से ही तोड़ देते हैं। इससे धीरे–धीरे इस फूल की प्रजाति ही समाप्त हो रही है। उत्तरांचल से लेकर कमीर तथा मध्य नेपाल के हिमालयी क्षेत्रों में लगभग 12 से 15 हजार फुट तक की ऊंचाई पर नमी युक्त जलवायु वाले क्षेत्रों में खिलता है यह फूल। यहां के लोगों की धार्मिक आस्था से जुड़े ब्रह्म कमल की खूबसूरती भी बेजोड़ होती है। यहां की पौराणिक मान्यता के अनुसार इस दुर्लभ पुष्प को सदियों से हिमालय के केदारनाथ में भगवान िव को अर्पित कर विाेष प्रसाद के रूप में बांटा जाता है। इस पुष्प की आयु मात्र तीन माह, जुलाई से सितम्बर के मध्य तक की होती है। इस पुष्प के पौधे में 5,7 व 12 वर्ष में सिर्फ एक ही बार फूल आते हैं, जिससे इसके र्दान अति दुर्लभ होते हैं। सास्वेरा ओबवाल्टा (डी.सी.) एड्यू कम्पोजिट के वैज्ञानिक नाम वाले इस पुष्प की महक तेज होती है। इस पुष्प के फल नुकीले व भूरे गुच्छे के रूप में दिखाई देते हैं। हरा व पीलापन लिए हुए इसका पुष्प टहनियों में नहीं, बल्कि पत्तियों से निकले कमलपात में खिलता है। इसकी जड़ें बहुत दूर–दूर तक मोटाई में फैली होती है और इस पौधे की पत्तियों से ही ढकी रहती हैं। जड़ से तोड़ने पर इसकी प्रजाति ही समाप्त हो जाती है। उत्तरांचल सरकार ने ब्रह्म कमल पुष्प को इसकी इन्हीं विाेषताओं के चलते राज्य पुष्प का दर्जा दे तो दिया लेकिन सरकार ने इस दुर्लभ पुष्प के संरक्षण के प्रति हमेाा उदासीनता ही दिखाई है। यहां तक कि वैज्ञानिको द्वारा वर्षों से हिमालय की जड़ी–बूटियों व पुष्पों पर किए जा रहे अनुसंधान भी मात्र कागजो तक ही सीमित रहे हैं।
33	11	अगस्त 8, 2003	दैनिक जागरण	खत्म हो जाएंगी एक दिन कुमाऊं की प्रसिद्ध झीलें	अपनी खूबसूरती व अद्भुत सौंदर्य के लिए प्रसिद्ध कुमाऊं क्षेत्र की तीन झीलें भीमताल, नौकुचियाताल और सातताल बरसों से लाखों पर्यटकों को हर वर्ष अपनी ओर आकर्षित करती रही हैं। ताजा अध्ययन के मुताबिक इन तीन झीलों में से नौकुचियाताल की उम्र सबसे अधिक व भीमताल का सबसे कम जीवन बचा है। राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान ने इन तीन झीलों के उपयोगी जीवनकाल पर हाल ही में एक अध्ययन किया है। तल में जमा हो रही रेत या मिट्टी से इन झीलों का अस्तित्व ही संकट में आ गया है लेकिन इस अध्ययन के बाद साफ हो गया है कि फिलहाल हजारों वर्षों तक इन झीलों पर कोई खतरा नहीं है। उल्लेखनीय है कि इन तीन झीलों के भरने का क्रम तेजी से चल रहा है। विभिन्न कारणों से कूड़ा, रेत, मिट्टी आदि झीलों के तल में जमा हो रही है। सचेत न होने पर यह प्रक्रिया सतत् जारी रहेगी। इसलिए एक समय ऐसा भी आएगा जब झील ऊपर तक भरकर खत्म हो जायेगी। अध्ययन के अनुसार नौकुचियाताल झील का जीवन 3161 वर्ष है। इस झील के भरने की प्रक्रिया 281 वर्ष पूर्व या 281 वर्ष बाद में भी पूरी हो सकती है। सातताल झील का जीवन 1357 वर्ष आंका गया है। सबसे कम जीवन प्रसिद्ध व लोकप्रिय भीमताल झील का आंका गया है जो मात्र 661 वर्ष ही है। इसमें 94 वर्ष का ऊपर–नीचे हो सकता है। अध्ययन में कहा गया है कि यदि इन तीन झीलों की सुप्रसिद्ध नैनीताल झील से भी तुलना करें तो भी अधिकतम व न्यूनतम जीवन इन्हीं झीलों का माना जाएगा।

34	11	नवम्बर 7, 2003	अमर उजाला	खिसक रही हैं नैनीताल की पहाड़ियां	सरोवर नगरी कहीं मलबे में न बदल जाए। बात अप्रिय है मगर भू–वैज्ञानिक तो ऐसा ही भांप रहे हैं। नैना पीक हो या चीना चुंगी, या फिर ोर का डांडा, कैलाखान और आलूखेत, सभी पहाड़ियों पर दरारें हैं। और ये दरारें इन पहाड़ियों को धीरे–धीरे खिसका रही हैं। भू–वैज्ञानिकों का कहना है कि नैनीताल की ज्यादातर चोटियां कमजोर है ोर का डांडा तो खास तौर पर। इसकी चट्टानों का सारा दबाव नैनी झील की ओर है। कुमाऊं विवविद्यालय के भू–वैज्ञानिकों के अनुसार इस दबाव से पहाड़िया खिसक रही हैं। बिरला परिसर में पड़ी दरारें इस ओर ाारा कर रही हैं। नैनीताल की पहाड़ियां बलुई मिट्टी से बनी हैं। बिरला विद्या मंदिर से लेकर ज्योलीकोट तक की दरारें उत्तर–दक्षिण दिाा की ओर चल रही हैं। खतरे की बात यह है कि इन दरारों में चौड़ाई बढ़ रही है, साल–दर–साल बारि का पानी खतरनाक रूप से बढ़ रहा है, जिसे भू–विज्ञान की भाषा में 'पोर वाटर प्रेार' कहते हैं। भू–वैज्ञानिक सिर्फ भूस्खलन पर नजर नहीं रखे हैं, बल्कि उनके पास इसका इलाज भी है। भू–वैज्ञानिकों का कहना है कि पहला काम तो दरारों के अंदर पानी घुसने से रोकना है। क्योकि दरारों के अंदर घुसा पानी लुब्रीकेंट का काम करता है। इसे न रोका गया तो खतरा हर साल बढ़ेगा। भू–वैज्ञानिकों की एक राय है कि पानी की निकासी के अलावा भूस्खलन वाले क्षेत्रों तथा संवेदनील पहाड़ियों में अत्यधिक निर्माण कार्य वाली गतिविधियों को रोकना होगा। जियोलाजिकल सर्वे आफ इंडिया ने नैनीताल क्षेत्र में संवेदनीलता को देखते हुए इसे चार भागों में बांटा है।
35	11	नवम्बर 25, 2003	दैनिक जागरण	उत्तरांचल को जड़ी–बूटियों के वैज्ञानिक दोहन की जरूरत	प्राकृतिक जड़ी–बूटियों की दृष्टि से सम्पन्न उत्तरांचल का 88 प्रतिात भूभाग पर्वतीय है, जिसमें औषधीय पौधों की भरमार है। पर्वत राज हिमालय के आगो में स्थित इस राज्य का वन क्षेत्रफल लगभग 62 प्रतिात है। जिसमें अनेक जीवनदायिनी औषधियों का भंडार छिपा है। जम्बू, गंद्रायनी, डोल, काला जीरा, कूट, अतीस, बज्रदंती, ल्वेटा आदि अनेक ऐसे औषधीय पौधे हैं जो न सिर्फ गुणधर्मिता के कारण प्रसिद्ध हैं, बल्कि व्यवसाय की दूष्टि से भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उत्तरांचल के पूर्व में स्थित मुनस्यारी क्षेत्र का मल्ला जोहार क्षेत्र जड़ी–बूटियों का प्रमुख केन्द्र रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों में पायी जाने वाली जड़ी–बूटियों में कई ऐसे रासायनिक यौगिक होते हैं, जिनका पता लगाने के लिए अत्याधुनिक उपकरणों एवं तकनीकी की जरूरत है स्थानीय लोगों में औषधीय गुणों से भरपूर कुछ ही पौधों की सीमित जानकारी होने तथा क्षेत्र में जड़ी–बूटी हेतु उपयुक्त बाजार के उपलब्ध न होने से भी पर्वतीय क्षेत्र में व्याप्त सहस्त्रों औषधीय पौधों की पहचान नहीं हो पायी है। जम्बू नामक औषधि का दाल, सब्जी इत्यादि में छौंका लगाने की प्रथा सदियों से बरकरार है। इसी क्रम में गंद्रायनी का उपयोग सूखी खांसी, पेट फूलना तथा सर्दी जुकाम में, सालम पंजा का घाव लग जाने पर, पुराना बुखार तथा पेट दर्द में अतीस का, बदहजमी तथा पेट सम्बंधी रोगों मे कुटकी, ारीर के भागों में चोट लग जाने या हड्डी के फ्रेक्चर होने पर डोल नामक जड़ी–बूटी का उपयोग किया जाता है। सरकार को चाहिए कि प्राकृतिक रूप से जड़ी–बूटियों से भरपूर उत्तरांचल के पर्वतीय क्षेत्रों में उक्त जड़ी–बूटियों के संरक्षण व उपयोग किये जाने हेतु व्यापक कदम उठाये जाने तथा इन औषधीय पौधों की व्यापक जानकारी क्षेत्रीय लोगों को उपलब्ध कराये, जिससे औषधीय पौधों की जानकारी सर्व सुलभ हो।

36	12	जनवरी 6, 2004	वन मंत्रालय ने घटाया मृग विहार का क्षेत्रफल	वन मंत्रालय ने घटाया मृग विहार का क्षेत्रफल	प्रदेश सरकार ने जनांदोलन के बाद पिथौरागढ़ जिले में बनाये गये अस्कोट मृग विहार से 111 गांवों को अलग किये जाने का जो प्रस्ताव केन्द्र सरकार के पास भेजा था, उसे मंजूर कर लिया गया है। अस्कोट मृग विहार की स्थापना सन् 1986 में की गयी थी। पिथौरागढ़ जिले के डीडीहाट और धारचूला तहसीलों के 600 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को मृग विहार घोषित किया था। इन दोनों तहसीलों के 111 राजस्व गांवों को भी शामिल कर लिया गया था। इससे लगभग 30,000 की आबादी प्रभावित हुई थी। राजस्व गांवों को अभ्यारण्य में शामिल किये जाने का उस समय भी तीव्र विरोध हुआ था, लेकिन वन विभाग द्वारा यह भरोसा दिलाये जाने पर कि अभ्यारण्य बनने से क्षेत्र में पर्यटन विकास होगा और स्थानीय लोगों को रोजगार की संभावनाएं भी बढ़ेंगी, लोग अभ्यारण्य बनाये जाने पर राजी हो गये थे। लेकिन फरवरी 2002 में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये एक आदेश ने लोगों के हक–हकूक ही छीन लिये। इस आदेश से अभ्यारण्य और आरक्षित वन क्षेत्र की किसी भी प्रकार की वन सम्पदा के उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया गया। इन नियमों की वजह से धौलीगंगा फेज– दो और गौरी गंगा विद्युत परियोजना तक का काम रूक गया। इसके अलावा चीन की सीमा तक बनायी जा रही सड़क, घटियाबगड़–लिपूलेख का भी निर्माण कार्य अधर में लटक गया। बाद मे प्रदेश सरकार ने मृग विहार के पुनर्सीमांकन का प्रस्ताव केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय को भेजा जिसमें 111 राजस्व गांवों को अभ्यारण्य से बाहर निकालने को अनुरोध किया गया था। प्रदेश सरकार के इस अनुरोध पर वन एवं पर्यावरण मंत्रालय की स्टैडिंग कमेटी और प्रदेश सरकार के वन मंत्रालय के अधिकारियों की दिल्ली में हुई बैठक में विचार विमर्श के बाद जनहित में अभ्यारण्य क्षेत्र में शामिल 111 राजस्व गांवों को बाहर निकालने का फैसला किया गया। इसके बाद मृग विहार का क्षेत्रफल 600 वर्ग किलोमीटर से घटकर लगभग 300 वर्ग किलोमीटर रह जायेगा।
37	12	जनवरी 9, 2004	अमर उजाला	नैनीझील को खतरा! बढ़ गए फास्फोरस व नाइट्रोजन	कुमाऊं विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने जिले की पांचों झीलों के पानी की शुद्धता की जांच शुरू कर दी है। वाटर क्वालिटी मॉनीटरिंग के लिए जंतु विज्ञान विभाग को 46 लाख रूपये मिले हैं। नैनीझील के पानी की प्रारम्भिक जांच में वैज्ञानिकों को झील के पानी में फास्फोरस व नाइट्रोजन की मात्रा कई गुना बढ़ी हुई मिली। वैज्ञानिकों के मुताबिक सामान्यतः प्रति लीटर पानी में 300 माइक्रोग्राम नाइट्रोजन व 10 माइक्रोग्राम फास्फोरस होना चाहिए। दिसम्बर में जो नमूने लिए गए उसमें नैनीझील के एक लीटर पानी में 500 माइक्रोग्राम नाइट्रोजन व 50 माइक्रोग्राम फास्फोरस निकला जो सामान्य प्रतिशत से कई गुना ज्यादा है। अन्य झीलों में इन रसायनों का प्रतिशत सामान्य मिला। बढ़ते रसायनों से झील पर पड़ने वाले प्रभाव के सम्बन्ध में पूछने पर उन्होंने बताया कि फास्फोरस व नाइट्रोजन बढ़ने से झील के भीतर एल्गी (काई) तेजी से बढ़ती है। मृत्यु के बाद यही एल्गी झील के गर्भ में जमा होकर पानी को प्रदूषित करती है और आक्सीजन की मात्रा को कम कर देती है। झील के भीतर बढ़ते रसायनों का यह प्रतिशत जलीय वनस्पति व जंतुओं के लिए खतरनाक है, लेकिन पीने के लिए इस पानी का उपयोग नुकसानदेह नहीं है। विभाग के पास पानी की जांच के पुख्ता संसाधन नहीं है। इसलिए विश्वविद्यालय पानी की जांच का काम प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से करा रहा है।

38	12	मार्च 10, 2004	दैनिक जागरण	बांस बनेगा उत्तरांचल के आर्थिक विकास की सीढ़ी	अपने पैरों पर खड़े होने के लिए उत्तरांचल ने अब अपने प्राकृतिक संसाधनों को खंगालना शुरू कर दिया है। इस कवायद में उत्तरांचल सरकार की नजर सबसे पहले हरे सोने यानी बांस पर गई है। चीन को रोड मॉडल बनाकर सरकार ने बांस की खेती और उसके व्यावसायिक उपयोग के लिए समग्र रणनीति तैयार कर ली है। इसके तहत बांस एवं रेशा विकास परिषद् का गठन भी किया गया है। राज्य के मुख्य सचिव का मानना है कि उत्तरांचल के विकास में बांस महती भूमिका अदा कर सकता है। दरअसल उत्तरांचल की जलवायु अच्छे किस्म के बांस के लिए काफी अनुकूल है और सरकार चीन से प्रेरणा लेकर अपनी अर्थव्यवस्था मजबूत करने की रणनीति पर काम कर रही है। उत्तरांचल भी प्रमुख बांस उत्पादक राज्यों में से एक है, लेकिन अपनी प्राकृतिक क्षमता के अनुसार यहां उत्पादन नहीं हो रहा है। उत्तरांचल में करीब 85227 हेक्टेयर क्षेत्र बांस वन है। इसे और बढ़ाने के लिए पिछले दो वर्षो में करीब 25 लाख बांस के नए पौधे लगाए गए हैं। उत्पादकता बढ़ाने के साथ ही बांस से आधुनिक फर्नीचर या अन्य सामग्री बनाने के लिए सरकार ने प्रदेश में सघन प्रशिक्षण की तैयारी की है। इसके लिए अत्याधुनिक मशीनों को भी मंगाया जा रहा है।
39	12	मार्च 14, 2004	दैनिक जागरण	फिर लुट न जाए विश्व धरोहर 'नंदा देवी'	यदि चोर रास्तों की पुख्ता सुरक्षा व्यवस्था नहीं की गई तो लुटेरे देवभूमि (उत्तरांचल) की विश्व धरोहर नंदा देवी जैवमंडल आरक्षित क्षेत्र की संजीवनी जड़ी–बूटियों और दुर्लभ वन्यजीवों के रूप में दो दशकों में जमा हुई मौजूद थाती (जैव संपदा) को फिर लूट ले जाएंगे। दो दशक तक नंदा देवी राष्ट्रीय पार्क में मानवीय गतिविधियों के निषेध का फल यह निकला है कि आम तौर पर नहीं दिखने वाले दुर्लभ हिमबाघ के पगचिह्न और रेड डाटा बुक में सूचीबद्ध वनस्पतियां फिर देखी गई हैं। भले ही नंदा देवी पार्क में किसी तरह का बाहरी हस्तक्षेप निषेध है, पर अप्रैल, 2003 में पिथौरागढ़ में डेढ़ दर्जन कस्तूरी ग्रंथियां एवं आधी दर्जन रीछों की पित्त की थैलियां और अक्टूबर, 2003 में पड़ोसी तिब्बत क्षेत्र में बड़ी संख्या में गुलदार खाल बरामद होने की खबरों का यही अर्थ है कि पार्क क्षेत्र अंतर्राष्ट्रीय वन्यजीव तस्करों के चुंगल से अब भी निरापद नहीं है। यह पार्क 16 संकटग्रस्त ऐसे स्तनपाई वन्यप्राणियों का वासस्थल है, जो उत्तरांचल के इस सीमित क्षेत्र के अलावा देश भर में हिमाचल प्रदेश, कश्मीर, और सिक्किम के सीमित वन क्षेत्र में ही पाये जाते हैं। इनमें हिमबाघ, कस्तूरी मृग, राज्यपक्षी मोनाल, लाल लोमड़ी, स्वर्णिम गरूण, दढ़ियल गिद्ध, नीली सेराव आदि तो लुप्त प्राय स्थिति में हैं। पार्क में मौजूद 110 वंशों की 568 वनस्पतियों में अतीस, कुटकी, थुनेर, चोरू, फरण, छिप्पी, हत्थाजड़ी आदि दुर्लभ एवं विशेष औषधीय महत्व के हैं। पिथौरागढ़, बागेश्वर और चमोली जिलों में 624.62 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तृत नंदा देवी राष्ट्रीय पार्क की अधिसूचना 1982 में जारी की गई और इसमें 1983 से पर्यटन, पर्वतारोहण, चारा–चुगान, लकड़ी निष्कासन आदि सभी तरह की गतिविधियां प्रतिबंधित कर दी गई। ऐसा इस क्षेत्र की दुर्लभ जैव विविधता को बचाने के उद्देश्य से किया गया।

40	12	मार्च 22, 2004	अमर उजाला	उत्तरांचल का सोना है 'च्यूरा'	उत्तरांचल की धरती पर पनपने वाले बहु उपयोगी वृक्षों में से एक है 'च्युरा'। इससे इमारती लकड़ी पशुओं का चारा और फल के अलावा वनस्पति घी भी प्राप्त होता है। इससे प्राप्त होने वाले घी के कारण अंग्रेजों ने इसका नाम 'बटर ट्री' रखा। 'च्यूरा' स्थानीय नाम है जिसका वानस्पतिक नाम 'ब्रैसिका बॅटरेसिया' है। यह द्विबीजपत्री वृक्ष है। वृक्ष का कोई भाग ऐसा नहीं, जिससे बहुमूल्य सामग्री प्राप्त न हो। लकड़ी का उपयोग बर्षों से काठ के बर्तन बनाने, मधुमक्खियों के बक्से, फर्नीचर और इमारती लकड़ी के रूप में किया जाता रहा है। दुधारू पशुओं का दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए इस वृक्ष के पत्तों को खिलाया जाता है। इसके फूलों से तैयार किया गया शहद अति गुणकारी होता है। इसके फल बहुत मीठे होते हैं जिनका उपयोग शरबत और एल्कोहल बनाने में किया जा सकता है। वृक्ष से प्राप्त होने वाला मुख्य उत्पाद वनस्पति घी है, जो इसके बीजों से तैयार किया जाता है। विशेष बात यह है कि जहां अन्य तिलहनी फसलों के बीजों का निष्कर्षण करने पर तेल प्राप्त होता है जो सामान्य तापक्रम पर द्रव होता है, इसे उत्प्रेरक की उपस्थिति में रासायनिक प्रसंस्करण की प्रक्रिया से ठोस वनस्पति घी में परिवर्तित किया जाता है। च्यूरे के बीजों से सीधे ही वनस्पति घी प्राप्त किया जाता है जो सामान्य तापक्रम पर ठोस होता है। इस प्रकार यह अन्य फसलों से तैयार किए गए वनस्पति घी की तुलना में प्राकृतिक और रसायनों के कुप्रभावों से मुक्त होता है। 'च्यूरा' समुद्रतल से 3000 से 5000 फीट की ऊंचाई पर पर्वतीय क्षेत्र में पाया जाता है, जिसके अधिकांश वृक्ष पिथौरागढ़ जिले और नेपाल से लगे क्षेत्रों में हैं। इन वृक्षों को टनकपुर–पिथौरागढ़ सड़क मार्ग पर गुरना और घाट के बीच देखा जा सकता है। यह वृक्ष छह वर्षों में फल देने लगता है। इसकी मोटाई पांच से छह फीट और ऊंचाई साठ फीट तक होती है। एक अनुमान के अनुसार कुमाऊं क्षेत्र में इसके लगभग पचास हजार वृक्ष हैं जिनमें से तीस हजार फल दे रहे हैं। ये वृक्ष पथरीली भूमि में उगने के कारण भूस्खलन को रोकने में भी सहायक हैं। इन पेड़ों की संख्या समय के साथ कम होती जा रही है। नाबार्ड के अध्ययन के अनुसार छह वर्ष में प्रति हेक्टेयर इन वृक्षों को उगाने की लागत रू0 22000/– है। छह वर्ष बाद इनसे आय प्राप्त होनी प्रारंभ हो जाती है। जहां देश को प्रतिवर्ष चालीस से पचास लाख टन खाद्य तेलों का आयात करना पड़ता है। यह वृक्ष देश को खाद्य–तेलों में आत्मनिर्भर बनाने और उत्तरांचल राज्य की अर्थव्यवस्था और पर्यावरण संतुलन के लिए कल्पवृक्ष सिद्ध हो सकता है।

41	12	मार्च 30, 2004	अमर उजाला	उत्तरांचल में मिलीं हींग व दूसरी दुर्लभ जड़ियां	क्या आप यकीन करेंगे कि उत्तरांचल में पेरूला नार्थेक्स यानि हींग की मूल प्रजाति भी मौजूद है? चौंकिये नहीं, हींग के साथ–साथ चना प्रजाति का पितामह सिएर माइक्रोफाइलम यानि जंगली चना व अद्भूत शक्तिवर्धक जेनसियाना कुरू यानि कड़वी भी उत्तरांचल की वादियों में आज भी बची हुई है। करीब दो साल के भगीरथ प्रयासों के बदौलत वनस्पति जगत के विशेषज्ञों तथा जंगलात ने कई ऐसी जड़ी–बूटियों को खोज निकाला है, जिनके बारे में मान लिया गया था कि वे उत्तरांचल से विलुप्त हो चुकी हैं। इनमें ज्यादातर जड़ी–बूटियां उत्तरकाशी के सीमांत क्षेत्रों में करीब आठ से दस हजार फीट की ऊंचाई पर मिली हैं। कड़वी तथा जंगली हींग की उपस्थिति को प्रदेश की जैव संपदा के लिहाज से बहुत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। दरअसल वर्ष 1910 में ब्रिटिश फारेस्टर डूथी तथा वन अनुसंधान संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिक बी0डी0 नैथानी ने वर्ष 1986 में अंतिम बार इसे देखा था। उसके बाद मान लिया गया था कि उत्तरांचल में यह प्रजाति विलुप्त हो चुकी है। राज्य गठन के बाद नए सिरे से शुरू किए गए खोज व अनुसंधान कार्यक्रम में वन विभाग ने वरिष्ठ वनस्पतिविद एच0बी0 नैथानी तथा वन्यजीव संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिक डा0 जी0एस0 रावत की भी मदद ली। प्रदेश के मुख्य वन्यजीव प्रतिपालक श्रीकांत चंदोला, जो जड़ी–बूटी विंग के नोडल अधिकारी भी हैं, ने बताया कि उत्तकाशी में गंगोत्री मार्ग पर भैरोघाटी के निकट निलंग घाटी में करीब आधा हेक्टेअर क्षेत्र में जंगली हींग के पौधे पाए गए हैं। अंतरराष्ट्रीय बाजार में एक किग्रा हींग की कीमत करीब एक लाख रूपये है। अभी जो हींग बाजार में उपलब्ध है, उसमें केवल एक प्रतिशत ही हींग होती है। शेष 99 प्रतिशत हिस्सा सड़े हुए गेंहू से निकाला कार्बोहाइड्रेट्स होता है। वर्ष 1896 में अंतिम बार मंसूरी में देखी गई कड़वी के मंसूरी में सुरकंडा देवी क्षेत्र में 223 पौधे मिले हैं। अस्थमा का रामबाण माना जाने वाला जूफा (हायसोपस आफिसिनेलिस) की एक प्रजाति उत्तरकाशी में ही निलंग क्षेत्र में एक हेक्टेअर क्षेत्र में खोजी गई है। इसी प्रकार अत्यधिक सुगंधित द्रव्यों से भरपूर वनस्पति बर्निंग बुश (डिक्टम्स एल्बुस) की उत्तरांचल में उपस्थिति साबित हो गई है।
42	12	अप्रैल 2, 2004	अमर उजाला	2007 में गढ़वाल या चमोली में बड़ा भूकम्प	उत्तरांचल में अब तक आए बड़े भूकंप को देखते हुए विज्ञानियों ने जो निष्कर्ष निकाला है, उससे यह बात सामने आयी है कि आज से तीन वर्ष बाद यानि 2007 में गढ़वाल या चमोली मण्डल के किसी भी इलाके में बड़ा भूकंप आने की सम्भावना है। जिसकी रिक्टर पैमाने पर तीव्रता 6 या उससे अधिक होगी। पूरे देश के भूकंप से जुड़े वैज्ञानियों का पिछले दिनों मद्रास में सम्मेलन भी हुआ, जिसमें उत्तरांचल के दोनों मण्डलों की भूकंपीय स्थिति को भी पेपर के माध्यम से सबके सामने रखा गया। उत्तरांचल के गढ़वाल तथा चमोली क्षेत्र में पिछले दो सौ सालों से भूकम्प आते रहे हैं। जिनमें बड़े छोटे सभी तरह के भूकम्प शामिल हैं। किन्तु इन क्षेत्रों में आए जिन तेरह भूकम्पों का विवरण डा0 डिमरी ने अपने शोध पत्र में दिया है उन सभी की रिक्टर स्केल पर तीव्रता 6 से लेकर 8 के बीच है। विज्ञानियों के अनुसार कोई भी भूकम्प जब 6 या उससे अधिक की तीव्रता वाला होता है तभी वह विनाशकारी होता है। जानकारी के अनुसार पूरे उत्तरांचल क्षेत्र में जितने भी बड़े भूकम्प आए हैं उनका पिछले करीब 96 सालों का आंकड़ा यह बताता है कि 29 मार्च 1999 में चमोली में आए भूकम्प का यदि अंतराल निकाला जाए तो वह औसतन आठ साल का पड़ता है। विज्ञानियों के सीबीआरआई के भूकम्प अध्ययन से जुड़े विशेषज्ञों के अनुसार उत्तरांचल तथा देश के विभिन्न हिस्सों में भूकम्प का मुख्य स्रोत हिमालय है।

43	12	अप्रैल 6, 2004	अमर उजाला	अब देवी–देवता बचाएंगे वनों को	जंगलों में अवैध कटान रोकने के लिए अब वन विभाग ने नया फंडा अपनाया है। तय हुआ है कि घने बांज के जंगलों के साथ–साथ अन्य उपयोगी प्रजाति के पेड़ों वाले वनों को देवी–देवताओं को समर्पित किया जाएगा। गांव के लोगों में धार्मिक भावना पैदा कर उन्हें वनों की सुरक्षा के लिए प्रेरित किया जाएगा। उत्तरांचल सरकार ने हाल ही में वनों की सुरक्षा के लिए गांव के लोगों को भी आगे लाने के लिए विशेष प्रयास करने पर जोर दिया था। सरकार का मानना है कि जब तक आम लोगों में जंगलों के प्रति प्रेम नहीं उमड़ेगा, तब तक वनों में अवैध कटान रोका जाना भी संभव नहीं होगा। सबसे बड़ा संकट अवैध खनन को लेकर पैदा हो गया है। सरकार ने वनों को बचाने के लिए वन पंचायत की तर्ज पर आरक्षित वनों से भी आम लोगों को जोड़ने का निर्णय लिया है। लोगों की धार्मिक भावनाओं के सहारे अब वन विभाग जंगलों को विकसित करने के लिए तैयार है। पिथौरागढ़ जिले के कई महत्वपूर्ण वन देवी–देवताओं को समर्पित करने की तैयारी हो गई है। वन विभाग ने इसके लिए आदेश भी जारी कर दिए हैं।
44	12	अप्रैल 25, 2004	अमर उजाला	कटान पर रोक से चीड़ वनों को नुकसान	पहाड़ों में समुद्र सतह से एक हजार मीटर से ऊपर के वन क्षेत्रों में हरे पेड़ों के कटान पर रोक से चीड़ वनों में प्राकृतिक पुनरूत्पादन पनप नहीं रहा है, वहीं वन महकमे को भी सालाना करोड़ों की क्षति हो रही है। प्रमुख वन संरक्षक उत्तरांचल ने बताया कि हालांकि पहाड़ में एक हजार मीटर से अधिक ऊंचाई के वन क्षेत्रों में हरे वृक्षों के कटान पर तो वर्ष 1980 से ही रोक थी पर बाद में इस पर सुप्रीम कोर्ट ने भी मोहर लगा दी। इसका वनों पर बेहद बुरा असर पड़ रहा है। खासकर चीड़ वनों के भीतर नया जंगल बनने की प्रक्रिया ठप हो गई है। और बूढ़े पेड़ों का आधिक्य हो गया है। कटान पर रोक से जंगल घने हो गए है और इन जंगलों में चीड़ के बीज से जो नए पौधे उगते हैं वह धूप न मिलने से मर जाते हैं। देवदार इसलिए अपना अस्तित्व बनाए हुए है चूंकि इसे धूप–छांव दोनों चाहिए। हरे पेड़ों का कटान न होने से बूढ़े चीड़ वृक्षों की संख्या बढ़ रही है। प्रमुख वन संरक्षक उत्तरांचल का कहना है कि बूढ़ा वृक्ष पर्यावरणीय दृष्टि से भी फायदे का नहीं है। उसकी जगह नए पौधे को लेनी चाहिए। पेड़ कार्बनडाइआक्साइड को एबजार्ब करते हैं। इससे वह लकड़ी बनाते हैं। जल व भूमि का संरक्षण करते हैं। पर बूढ़े वृक्ष की यह प्रक्रिया समाप्त होने लगती है इसलिए यह पर्यावरण की दृष्टि से अनुपयोगी होने लगते हैं। आज यही स्थिति है कि अगर कटान पर रोक नहीं हटी तो भविष्य में हमारे पास प्राणदायी नहीं बल्कि प्राणहीन जंगल होगा।

45	12	अप्रैल 26, 2004	दैनिक जागरण	दून, नैनीताल और दिल्ली भूकंप के मुहाने पर	देहरादून, दिल्ली, पटना सहित उत्तर भारत के अनेक शहर भूकंप के टाइम बम के मुहाने पर हैं। एक वैज्ञानिक के आंकलन के अनुसार डेढ़ सदी में कभी भी धरती का सीना फाड़ कर तबाही का सबब बनने वाला प्रलय हो सकता है। इस आशंका के मद्देनजर देहरादून सहित 5 लाख से अधिक आबादी वाले देश के 38 शहरों में भूकंप के प्रभाव से जन–धन की क्षति को कम करने के लिए यूनाइटेड नेशंस डेवलपमेंट प्रोग्राम और भारत सरकार के शहरी भूकंप आपदा न्यूनीकरण कार्यक्रम का संयुक्त जागृति अभियान आरंभ किया जा चुका है। दिल्ली, देहरादून, चंडीगढ़, अल्मोड़ा, नैनीताल, रूड़की, पटना, शिमला और मुंबई जोन–4 में अवस्थित हैं। यूनीवर्सिटी आफ कोलोराडो जियोलॉजिस्ट के भू–वैज्ञानिक रोगर विल्हम ने पहली बार 1994 में नेपाल की 'हिमाल' पत्रिका के लिए लेख लिखकर यह बताया था कि हिमालय क्षेत्र में भारत–चीन भू–प्लेटो की खाली जगह के बीच में जमा 20 मीटर भू–स्थापना वाला स्ट्रेस धरती का सीना चीरकर बाहर निकलने को तैयार है। यह घटना सन् 2150 तक किसी भी समय घट सकती है। विभिन्न वैज्ञानिकों का मानना है कि भू–प्लेटों के बीच में जमा ऊर्जा से आने वाले भूकंप का प्रभाव 1905 के कांगड़ा भूकंप और 1934 के नेपाल–बिहार भूकंप जैसा प्रलयकारी होगा। हिंदुकुश से काठमांडू तक के एक हजार किलोमीटर तक अति संवेदनशील चिह्नित भूकंप क्षेत्र के हिंदुकुश, नेपाल, असम, बिहार और गुजरात में बड़े भूकंप आ चुके हैं, पर उत्तरांचल और हिमाचल प्रदेश अभी बचा हुआ है। यह भी माना जा रहा है कि अब इस क्षेत्र में धरती के भीतर चार मीटर भू–विस्थापन वाला स्ट्रेस जमा हो चुका है, जो कभी भी बाहर आ सकता है। आंकलन इस आधार पर किया गया है कि पृथ्वी के भीतर मैग्मा नामक तरल पदार्थ के ऊपर यूरेशियन भू–प्लेट (चीन एवं तिब्बत) 20 मिली मीटर प्रति वर्ष की दर से तैर रहा है, जबकि भारतीय भू–प्लेट उसकी ओर 40 मिली मीटर प्रति वर्ष की दर से तैरते हुए बढ़ रहा है। दोनों की गति अंतर से प्रति वर्ष 20 मिली मीटर के हिसाब से 4000 मिली मीटर (4 मीटर) स्ट्रेस 200 वर्ष में जमा हो चुका है। बीसवीं सदी में भारतीय उप महाद्वीप का यह क्षेत्र (उत्तरांचल) भूकंप आपदा की दृष्टि से अत्यंत सक्रिय रहा है। कई भूकंप तो छह मैग्निट्यूड तीव्रता से अधिक के रहे हैं। भूकंप की आशंका के मद्देनजर बड़े शहरों के पुराने भवन मोडीफाई किए जाने चाहिए और नए भवन भूकंपरोधी ही बनने चाहिए।

46	12	अप्रैल 29, 2004	नवभारत टाइम्स	तेजी से पिघल रहे ग्लेशियरों से बड़ी नदियों का अस्तित्व खतरे में	गंगा, यमुना, सिंधु और ब्रह्मपुत्र जैसी नदियों को लगातार पानी देने वाली हिमनदों यानी ग्लेशियरों के पिघलने का सिलसिला खतरनाक रूप से जोर पकड़ता जा रहा है। अगर ग्लेशियरों का पिघलना इसी तरह जारी रहा तो अगले 40 वर्षों में इनका अस्तित्व मिट जाएगा। इसका देश के आर्थिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवन पर खतरनाक प्रभाव पड़ेगा। सागरमाथा नामक संगठन की रिपोर्ट में कहा गया है कि तापमान में खतरनाक बढ़ोत्तरी के कारण हिमालय क्षेत्र की हिमनदों के पिघलने का सिलसिला तेज होता जा रहा है। अगर यह प्रक्रिया जारी रही तो अगले कुछ दशकों में नदियों में पानी का भारी संकट पैदा हो जायेगा। उल्लेखनीय है कि ब्रिटेन के अंतर्राष्ट्रीय विकास विभाग (डीएफआईडी) की मदद से संगठन ने यह रिपोर्ट तैयार की है। कालीकट यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर सईद इकबाल हुसैन ने कहा कि तापमान के लगातार बढ़ने से हिमनदों के पिघलने की दर में बढ़ोत्तरी हो रही है। उन्होंने कहा कि पश्चिमी हिमालय में ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों में 3 से 4 फीसदी पानी बढ़ा है। पानी का स्तर बढ़ने की वजह है ग्लेशियरों के पिघलने की रफ्तार में 10 फीसदी की इजाफा। रिपोर्ट के मुताबिक अगले कुछ दशकों में सिंधु नदी के ऊपरी जलस्तर में 14 से 90 फीसदी की बढ़ोतरी होगी, लेकिन इसके बाद निचले जलस्तर में 30 से 90 फीसदी की गिरावट की संभावना है। रिपोर्ट में कहा गया है कि उत्तरकाशी में गंगा के ऊपरी जलस्तर में 25 से 33 फीसदी की बढ़ोतरी होगी। यह सिलसिला दो दशकों तक जारी रहेगा। भविष्यवाणी की गई है कि 5–6 दशक बाद गंगा के निचले जलस्तर में 50 फीसदी से अधिक की गिरावट होगी। केन्द्रीय जल आयोग के सदस्य एस0 के0 दास ने कहा कि ग्लेशियर पिघलने की रफ्तार बढ़ने से हमारे आर्थिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक परिदृश्य पर असर पड़े बिना नहीं रहेगा।
47	12	अप्रैल 30, 2004	दैनिक जागरण	कुमाऊं को पिंडर जैसी बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं की सख्त जरूरत	प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में जिस तरह अधिकतर नदियों का जल स्तर लगातार घट रहा है, वह बेहद चिन्ता का विषय है। कुमाऊं मे कोसी, रामगंगा व गौला नदी ऐसी नदियां हैं जिनसे पेयजल योजनाएं बनी हैं। जलागम क्षेत्रों में चीड़ वृक्षों के फैलाव व हर वर्ष वर्षा की औसत दर घटने से नदियों का जल स्तर घट रहा है। यदि इसके विकल्प के रूप में हिमालय से बहने वाली पिंडर नदी से प्रस्तावित बहुउद्देश्यीय पिंडर परियोजना का निमार्ण किया तो निश्चित रूप से कोसी व रामगंगा नदी सदानीरा हो जायेगी। लेकिन दुखद बात यह है कि 25 वर्ष पूर्व इस परियोजना का सर्वेक्षण किया गया था परन्तु जनप्रतिनिधियों की उदासीनता के चलते इस पर कार्यवाही नहीं हो सकी। यह पिंडर परियोजना गढ़वाल के पिंडर ग्लेशियर से निकलने वाली पिंडर नदी से प्रस्तावित थी। प्रस्ताव के मुताबिक 25 वर्ष पूर्व इसकी लागत 200 करोड़ रूपये थी। सर्वे के मुताबिक पिंडर के ध्वज नामक पहाड़ी से सुरंग द्वारा धाकुरी नामक स्थान पर पिंडर से पानी लिया जाना था। धाकुरी 2700 मीटर ऊंचाई वाले स्थान पर स्थित है। धाकुरी से यह पानी ग्रेविटी सिस्टम से 2230 मीटर ऊंचाई में स्थित ग्वालदम (चमोली) में लाया जाना प्रस्तावित है। सर्वे के मुताबिक ग्वालदम से यह पानी ग्रेविटी सिस्टम से कौसानी (बागेश्वर) तक लाया जाना था। कौसानी व ग्वालदम में लघु झील निर्माण व विद्युत उत्पादन का कार्य भी प्रस्तावित है। कौसानी से इस जल को कोसी व रामगंगा नदी (चौखुटिया) में प्रवाहित किया जाना था। इसके बाद इन नदियों में बनी सिंचाई व पेयजल योजनाओं से जल वितरण का कार्य किया जाना था। जल निगम व सिंचाई विभाग द्वारा संयुक्त रूप से किये गये सर्वेक्षण पर अभी तक कार्य आगे नहीं बढ़ पाया है। इस परियोजना में अब हालांकि दुगुनी लागत आ जायेगी लेकिन इसका निर्माण किया जाना बहुत जरूरी है। इस परियोजना से कोसी, गोमती व रामगंगा में जल प्रवाहित करने से नदियों का जल स्तर तीन गुना क्यूसेक होना निर्धारित था। गर्मियों में सूखने की स्थिति में आने वाली यह नदियां सदानीरा हो जायेंगी।

48	12	मई 13, 2004	अमर उजाला	उत्तरांचल में सुगंधित तेल बनाने की तैयारी	उत्तरांचल में जिरेनियम और लेमनग्रास से सुगंधित तेल बनाने के लिए 13 उत्पादन इकाइयां लगाने की तैयारी हो रही है। जिरेनियम की खेती से आम काश्तकारों को जोड़ने और उत्तरांचल सरकार के हर्बल स्टेट के सपने को साकार करने के लिए यह निर्णय लिया गया है। पहले चरण में राज्य के 11 जिलों में यूनिट लगाई जाएंगी। उत्तरांचल सरकार ने जड़ी–बूटी शोध एवं विकास संस्थान, गोपेश्वर को हर्बल स्टेट में जड़ी–बूटी उत्पादन का जिम्मा सौंपा था। इसी के तहत संस्थान ने केंद्रीय सगंध और औषधीय पादप संस्थान के साथ मिलकर जिरेनियम, लेमनग्रास और सिट्रेनौला के उत्पादन पर जोर दिया। बताया गया है कि 50 नाली जमीन में जिरेनियम की 25 टन तक हरी पत्तियां हो सकती हैं। इसके लिए संस्थान के माध्यम से पहले चरण में अल्मोड़ा–देहरादून, बागेश्वर, चमोली, चंपावत, पौड़ी, पिथौरागढ़, रूद्रप्रयाग, टिहरी, उत्तरकाशी और नैनीताल के हर ब्लाक में 20–20 किसानों का चयन, कर उन्हें एक–एक हजार पौध जिरेनियम के सौंपे गए। विदेशों में जिरेनियम के सुगंधित तेल की अधिक मांग होने और अच्छा राजस्व मिलने की संभावनाओं को देखते हुए आम किसानों को जिरेनियम से जोड़ने पर सहमति हुई है। बताया गया है कि जिरेनियम के पौधों से पत्तियां तोड़ने के बाद उन्हें तीन घंटे के भीतर फैक्ट्री में पहुंचाया जाना जरूरी होता है। यदि इस अवधि में पत्ते फैक्ट्री में न पहुंचे तो सुगंधित तेल के बिगड़ जाने की आशंका रहती है। इसे देखते हुए सरकार ने फिलहाल 13 उत्पादन इकाइयां लगाने का निर्णय लिया है। अधिकांश इकाइयां दूरस्थ क्षेत्रों में लगेंगी। इसके लिए सरकार ने बजट की व्यवस्था भी कर ली है।
49	12	मई 19, 2004	अमर उजाला	पहली टिश्यू कल्चर लैब हल्द्वानी में खुलेगी	पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशीप के तहत उत्तरांचल फारेस्ट अकादमी के निदेशक व नई दिल्ली में स्थित सबीर बायोटेक के निदेशक के बीच यहां मुख्य सचिव की मौजूदगी में हुए करार के बाद उत्तरांचल की पहली टिश्यू कल्चर लैब खुलने का रास्ता साफ हो गया है। कल्चर लैब हल्द्वानी स्थित फारेस्ट एकेडमी में खुलेगी जहां शुरू में बांस प्रजाति का क्लोनल उत्पादन किया जाएगा। प्रदेश के वरिष्ठ वैज्ञानिक सलाहकार (बायोटेक्नालाजी) डा0 एल0एम0एस0 पालनी पिछले कई माह से टिश्यू कल्चर लैब खुलवाने के प्रयास में लगे हुए थे। लैब में क्लोनल उत्पादित होने वाली बांस की प्रजाति की खरीद वन विभाग द्वारा की जाएगी। लैब बनाने का खर्च सबीर बायोटैक करेगी जबकि लैब के लिए भवन व भूमि फारेस्ट ऐकेडमी द्वारा दी जाएगी। डा0 पालनी ने बताया कि केंद्र सरकार के बायोटेक्नालाजी विभाग ने भी उत्तरांचल के लिए तीन वर्षीय परियोजना स्वीकृत की है। इसके तहत योजना आयोग द्वारा चिन्हित बांस की चार प्रजातियों के पौधे टिश्यू कल्चर विधि से एफआरआई देहरादून, पर्यावरण संस्थान कटारमल, आईएचबीटी पालमपुर व टेरी नई दिल्ली द्वारा तैयार कर राज्य को दिए जाएंगे। फारेस्ट एकेडमी हल्द्वानी तथा उत्तरांचल बांस व फाइबर बोर्ड द्वारा वन विभाग के माध्यम से इन पौधों का रोपण किया जाएगा। देश के समूचे नार्थ जोन में बांस के रोपण के लिए उत्तरांचल को चुना जाना राज्य के लिए महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। इससे जहां राज्य में बांस के प्रसार में मदद मिलेगी वहीं कार्बन संरक्षण में भी मदद मिलेगी।

50	12	मई 20, 2004	अमर उजाला	छत पर रेन वाटर हार्वेस्टिंग अब जरूरी	उत्तरांचल में पानी के स्त्रोत सूख जाने के बाद राज्य भर में पानी के संकट ने सरकार को झकझोर कर रख दिया है। भविष्य में पानी की कमी को देखते हुए अब सरकार ने सरकारी इमारतों के साथ–साथ प्राइवेट मकानों के नक्शे ही बदल देने का निर्णय ले लिया है। राज्य भर के निर्माणाधीन मकानों की छत पर बरसात का पानी जमा करने के विशेष व्यवस्था करने के निर्देश हो गए हैं। राज्य सरकार ने पानी के स्त्रोत और नदियों के घट रहे जलस्तर का अध्ययन कराया। सूत्रों ने बताया कि इस अध्ययन में भविष्य में पानी के स्त्रोत और सूखने की आशंका जताई गई है। कई विचारों पर विकल्प करने के बाद आखिरकार उत्तरांचल सरकार ने अब बरसात के पानी को जमा करने के लिए विशेष अभियान चलाने का निर्णय ले लिया है। इसके तहत राज्य के मुख्य सचिव ने विशेष आदेश जारी कर दिया है। स्पष्ट किया गया है कि जितने भी नए सरकारी भवन बन रहे हैं, उनकी छत में बरसात का पानी जमा करने की व्यवस्था होनी चाहिए। इसके अलावा नए बनने वाले सरकारी भवनों के नक्शे मे ही यह व्यवस्था की जाएगी। पुराने सरकारी भवनों के मरम्मत के प्रस्ताव बनाने के निर्देश दे दिए गए हैं। इस मरम्मत में सरकारी भवन के छत पर रेन वाटर संग्रह केंद्र बनेगा। राज्य भर में अब बनने वाले निजी भवनों के लिए भी यह व्यवस्था लागू की जा रही है। आदेश में स्पष्ट कहा गया है कि बरसात में जमा पानी को पीने के लिए प्रयोग में नहीं ला सकते हैं, मगर इस पानी को बर्तन धोने, बाथरूम की सफाई और कपड़े धोने में प्रयोग किया जा सकता है।
51	12	मई 21, 2004	दैनिक जागरण	सुगंध की दुनिया में छा सकती है दारमा, व्यांस और चौदास घाटी	स्पेन और फ्रांस में उत्पादित होने वाले लेवेण्डर की खेती भारत के अंतिम गांव कुटी में भी शुरू हो गयी है। जानकारों का कहना है कि ऊंचाई पर पैदा होने वाले लेवेण्डर की खेती को यदि दारमा, व्यांस और चौदास घाटियों में उगाया जाय तो ये तीनों घाटियां सुगंध की दुनिया में छा जायेंगी। मात्र इत्र ही नहीं औषधीय गुणों से भरपूर लेवेण्डर क्षेत्र में रोजगार के नये आयाम भी स्थापित करेगा। विज्ञान ने लगभग 600 सुगंधित रसायनिक संघटकों को सारिणीबद्ध कर स्वास्थ्य के लिए लाभदायक एवं उपयोगी बताया है। जिसमें लेवेण्डर का स्थान सबसे आगे है। सुगंधित तेलों व इनके रासायनिक घटकों के प्रयोग से अनेक शारीरिक तकलीफों में लाभ होता है। ऐरोमा थेरेपी चिकित्सा में तो लेवेण्डर का विशेष महत्व है। लेवेण्डर की खेती ऊंचाई वाले स्थानों में होती है। जितनी अधिक ऊंचाई होगी लेवेण्डर पुष्प उतना ही अधिक गुणकारी होता है। इसके गुणों का मूल्यांकन उसमें पाये जाने वाले ईस्टर के प्रतिशत पर निर्भर है। जिसमें लीलोलल एसिटेड का योग प्रतिशत पचास से अधिक होने पर सबसे अच्छा लेवेण्डर माना जाता है। लीलोलल प्रति दौभरोधी (एण्टी सेप्टिक) है, टरपीन 4 आल दमा रोग में लाभदायक है, साइनोल ऐंठन व फफूंद प्रतिरोधी है तो यूजीनोल निश्चेतक, संवेदनहारी, केरियोफाइली सूजन प्रतिरोधी है। प्रतितैली त्वचा और त्वचा रोग में उपयोगी माना जाता है। लेवेण्डर के तेल की कुछ बूंदें तकिये में डालने पर नींद अच्छी आती है तथा माइग्रेन और सर्दी जुकाम से छुटकारा मिलता है। इसके अलावा सांप के काटने पर यह सांप के जहर को भी कम करता है। पूरे विश्व में लेवेण्डर का उत्पादन तीस टन है। स्पेन व फ्रांस इसके मुख्य उत्पादक देश हैं। भारत के अंतिम गांव कुटी में लक्ष्मण सिंह कुटियाल की पहल पर ग्रामीणों ने लेवेण्डर की सफल खेती शुरू कर दी है। इसी से प्रभावित होकर राष्ट्रीय पादप अनुवंशीय ब्यूरो एवं गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान द्वारा ग्रामीणों को सहयोग दिया जा रहा है। यदि भविष्य में इसकी खेती सफल होती है तो सीमान्त क्षेत्र में बेरोजगारी की समस्या का समाधान हो सकता है।

52	12	जून 2, 2004	दैनिक जागरण	विलुप्त हो रही महाशीर मछली को बचाने के प्रयास शुरू	पर्वतीय क्षेत्र में कभी 'गेम फिश' नाम से प्रख्यात महाशीर प्रजाति की मछली के विलुप्त होने तथा उसके अस्तित्व को बचाने के लिए सरकार द्वारा प्रयास शुरू कर दिये गये हैं। ठंडे जल की यह मछली अत्यधिक स्वादिष्ट होने के कारण शिकारियों का पहला निशाना बनती है। इधर मत्स्य विभाग द्वारा 'महाशीर बीज उत्पादन योजना' के तहत मत्स्य बीजों को कुमाऊं की विभिन्न नदियों व झीलों में प्रसारित किया जा रहा है। अपनी विशिष्ट आदतों के कारण 'गेम फिश' के रूप में पायी जाने वाली यह मछली मत्स्य आखेट के दौरान मत्स्य शिकारियों की पहली पंसद होती है। पर्यटक भी मत्स्य आखेट के दौरान इसी मछली को पकड़ने में ही सबसे ज्यादा आनंद का अनुभव करते हैं इसलिए मत्स्य विभाग द्वारा मत्स्य आखेट के लिये परमिट भी जारी किये जाते हैं। बताया जाता है कि अंग्रेज शिकारी सर रामजे ने वर्ष 1958 में महाशीर मछली को विदेशों से मंगाकर सातताल व भीमताल में संचय कराया था। इसके बाद एक अन्य अंग्रेज अधिकारी ने वर्ष 1909 में महाशीर प्रजाति की ही पुटीटोरा व तार–तार किस्म की मछली इन झीलों में डालीं। तब से महाशीर प्रजाति की मछली इन क्षेत्रों में बहुतायत से पायी जाती थी। लेकिन कुछ वर्ष पूर्व से इस प्रजाति की मछलियों की संख्या में भारी कमी आने लगी है। जिसके बाद सरकार ने महाशीर प्रजाति को विलुप्त प्रायः की श्रेणी में रखने के साथ ही इसके आखेट पर प्रतिबंध भी लगा दिये हैं साथ ही केन्द्र सरकार ने महाशीर हेचरी की स्थापना भी की है जिसमें महाशीर प्रजाति की कम हो रही संख्या को बढ़ाने के लिए अनुसंधान भी किया जा रहा है। इसके अलावा राज्य सरकार द्वारा भी मत्स्य बीज उत्पादन की भी स्थापना की गयी है जिसके तहत विभाग द्वारा झीलों में जाल डालकर मछली को पकड़ा जाता है।
53	12	जून 5, 2004	अमर उजाला	चीड़ के जंगलों ने बढ़ाया पानी का संकट	उत्तरांचल में पानी की समस्या दिनों–दिन गंभीर होती जा रही है। पर्वतीय इलाकों में स्रोत सूखने के कारण पानी का संकट लगातार बढ़ता जा रहा है। जल स्रोत सूखने के पीछे प्रमुख कारण यह है कि पर्वतीय इलाकों में चौड़ी पत्ती के पेड़ घट रहे हैं और चीड़ लगातार फैल रहा है। पहाड़ के वनों में गर्मियों में आग धधकने और धरती के भीतर बारिश का पानी सामान्य स्तर पर एकत्र न होने का प्रमुख कारण भी चीड़ ही है। पहाड़ में पर्यावरण असंतुलन के पीछे चीड़ प्रमुख कारण है। एक समय था जब पहाड़ का मतलब ठंडी हवाएं, ठंडा पानी और बर्फीली पर्वत चोटियां माना जाता था, लेकिन आज पहाड़ में भी पंखा, फ्रिज यहां तक की एसी का उपयोग होने लगा है। जिन स्थानों में बांज, देवदार, काफल जैसे चौड़ी पत्ती के पेड़ हैं वहां आज भी जल स्रोतों में पानी है। चौड़ी पत्ती वाले वृक्ष पानी का संग्रह करते हैं। इनकी जड़ों में संग्रहीत पानी जल स्रोत के रूप में बाहर आता है। वही चीड़ नमी सोखता है और तेजी से बढ़ता है। ज्यों–ज्यों चीड़ का वृक्ष बढ़ता है वह अपने चारों तरफ की हरियाली भी समाप्त कर देता है। चीड़ की पत्तियां (पिरूल) गर्मियों के दिनों में बारूद का काम करती हैं। दूसरी तरफ चौड़ी पत्ती वाले वनों में आग भी आसानी से नहीं लगती। चीड़ के सबसे घातक परिणाम यह हैं कि चीड़ वाले क्षेत्रों में बारिश का पानी भूमि के भीतर काफी कम जा पाता है। उल्लेखनीय है कि बारिश का जो पानी धरती के भीतर रिचार्ज के लिए जाता है वही पानी स्रोत के रूप में बाहर निकलता है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक बांज तथा चौड़ी पत्ती के वनों में जहां बारिश का पानी 23 प्रतिशत रिचार्ज के रूप में धरती के भीतर जाता है वही चीड़ के वन क्षेत्रों में सिर्फ 16 प्रतिशत पानी रिचार्ज होता है।

54	12	जून 11, 2004	अमर उजाला	स्नो बाइटिंग का इलाज संभव	उच्च हिमालयी क्षेत्रों में तैनाती के दौरान बर्फ में रहकर सीमाओं की रक्षा करने वाले जवानों को अकसर स्नो बाइटिंग की बीमारी हो जाती है। कई मौकों पर जवानों को इस बीमारी के चलते उपयोगी अंगों से हाथ धोना पड़ता है। कृषि रक्षा अनुसंधान प्रयोगशाला ने इस बीमारी से निपटने के लिए हर्बल दवा तैयार करने का निर्णय लिया है। प्रयोगशाला के हर्बल गार्डन में घृतकुमारी (पतकुवार) के पौधे उगाए गए हैं। उन्हें परीक्षण के लिए विभिन्न प्रयोगशालाओं में भेजा जा चुका है। वैज्ञानिकों को उम्मीद है कि घृतकुमारी से त्वचा रोगों का कारगर इलाज हो सकेगा। घृतकुमारी को वानस्पतिक नाम एलोबेरा दिया गया है। इसके पौधों को प्रयोगशाला में उगाने की प्रक्रिया तीन साल पूर्व शुरू की गई। अभी तक घाटी वाले इलाकों में पैदा होने वाले इन पौधों को पांच हजार फिट की ऊंचाई पर पालीहाउस में सफलतापूर्वक उगाया जाने लगा है। इसमें प्राप्त होने वाले रस से त्वचा रोगों का इलाज संभव है। विशेष रूप से इसे सेना के उन जवानों के लिए उपयोग में लाया जा सकता है, जो उच्च हिमालयी क्षेत्र में रहते समय स्नो बाइटिंग बीमारी के शिकार हो जाते हैं। वैज्ञानिकों ने बताया कि इस पौधे के रस से जले और कटे में भी इलाज किया जा सकता है। अभी पौधे के रस को परीक्षण के तौर पर अपनाया जा रहा है। उसमें कुछ और अनुसंधान के बाद नई दवाओं का मिश्रण किया जाएगा। यदि आने वाले समय में वैज्ञानिकों को सफलता मिल गई तो इसे बड़ी उपलब्धि माना जाएगा।

55	12	जून 12, 2004	अमर उजाला	उत्तरांचल के जंगलों से होगी आमदनी	उत्तरांचल के जंगल अब विकसित देशों के साथ न केवल कार्बन ट्रेडिंग कर अच्छा जरिया बन सकते हैं बल्कि कार्बन संचय के एवज में सरकार इन मुल्कों से करोड़ों की आय भी अर्जित कर सकती है। इस पैसे से राज्य के विकास को जबरदस्त गति दी जा सकती है। इस राह में अभी एक बाधा है। विकसित मुल्क दुनिया भर के विकासशील मुल्कों से उनके वन के उजाड़ क्षेत्रों (डिग्रेडेड फारेस्ट) में किए जा रहे वनीकरण या पौधरोपण पर तो कार्बन ट्रेडिंग करने को तैयार हैं, पर उनके सदियों से खड़े प्राकृतिक वनों के जरिए जो कार्बन संचय हो रहा है, उस पर धन देने को तैयार नहीं हैं। दरअसल कार्बन ट्रेडिंग की अवधारणा दुनिया भर में दिनों–दिन बढ़ते जा रहे प्रदूषण के चलते सामने आई है। कारखानों, नए तरह के उद्योगों, हवाई जहाजों व सड़कों पर दौड़ते वाहनों के जरिए जबरदस्त प्रदूषण हो रहा है। अवधारणा यह है कि हमारे पेड़–पौधों व मिट्टी के जरिए जो कार्बन समाहित हो रहा है, उसे जंगल व वनस्पतियां सोख रही हैं। इस कार्बन के लगातार बढ़ने की आशंका है। अगर यह बढ़ता गया तो सम्पूर्ण मानव जाति के साथ ही प्राणि जगत के लिए भी हानिकारक साबित हो सकता है। इसलिए क्लीन डेवलपमेंट मैकेनिज्म अपनाने पर जोर दिया जा रहा है। अभी जो प्रदूषण हो रहा है और इसके जरिए तीसरी दुनिया के मुल्क अपने जंगल और वनस्पतियों के जरिए जो कार्बन संचय कर रहे हैं, उसका कारोबार करने पर सहमति बनी है। इस अवधारणा के कुछ फायदे भी नजर आ रहे हैं। पहला तो यही कि जंगल जो कार्बन संचय कर रहा है, उस कार्बन का पैसा ले सकते हैं। इसके लिए विकसित मुल्कों ने कुछ मानक तय किए हैं। मसलन वे पहले आपके जंगल का बेस लाइन सर्वे करेंगे। विकसित मुल्क कार्बन संचय के एवज में इतनी आसानी से धन देने को तैयार नहीं है। उन्होने शर्त रखी है कि विकासशील मुल्क अपने उजाड़ वन क्षेत्र (डिग्रेडेड फारेस्ट) में जो वनीकरण/पौधारोपण करेंगे, उसमें कार्बन संचय पर ही वे धन देंगे। विकासशील मुल्क विकसित मुल्कों की इस प्रस्थापना से सहमत नहीं हैं। उनका कहना है कि उनके पास सदियों से जो प्राकृतिक वन खड़ा है, वह भी तो कार्बन संचय का एक अच्छा स्रोत है। इसके एवज में उन्हें धन मिलना चाहिए। अगर उत्तरांचल के संदर्भ में देखें तो इसके कुल भू–भाग का 65 फीसदी वन क्षेत्र है। इसमें साल, चीड़, बांज व देवदार का उम्दा प्राकृतिक वन है। यह कार्बन संचय का जबरदस्त माध्यम है। अगर इसके एवज में राज्य को धन मिले तो यह करोड़ों में होगा।

56	12	जून 12, 2004	अमर उजाला	डाबर खरीदेगी वन पंचायत असोटा से थुनेर	कैंसर की दवा बनाने में प्रयोग आने वाली थुनेर की पत्तियों का उत्पादन बढ़ाने के लिए सिविल सोयम वन प्रभाग अल्मोड़ा जमीनी योजना पर कार्य कर रहा है। सिविल सोयम वन प्रभाग अल्मोड़ा के डी0एफ0ओ0 के0 विद्यासागर के प्रयासों से असोटा–सिलखोड़ा वन पंचायत और डाबर इंडिया लिमिटेड के बीच एक महत्वपूर्ण अनुबंध किया गया, जिसमें डाबर इंडिया लिमिटेड ने इस वन पंचायत को थुनेर की पत्तियां बाजार भाव में खरीदने की लिखित गारंटी दी है। किसी वन पंचायत का देश की बड़ी कंपनी से इस तरह का पहली बार कोई अनुबंध हुआ है। उल्लेखनीय है कि थुनेर की पत्तियों से निकलने वाले टैक्साल से कैंसर की दवा बनती है और थुनेर से बनने वाली यह दवा कैंसर की अब तक की सबसे कारगर दवा मानी जाती है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक थुनेर की पत्तियों से निकलने वाले टैक्साल की कीमत 180 करोड़ रूपये प्रति किलो है। इस कारण कुछ साल पहले तक थुनेर की पत्तियों की जमकर तस्करी होती रही और इस बहुमूल्य प्रजाति के पौधे नष्ट होते गए। बाद में भारत सरकार ने इस प्रजाति की पत्तियों के निर्यात पर रोक लगा दी और अब थुनेर को अत्यधिक लुप्त प्राय श्रेणी में रखा गया है। आज भी थुनेर के पुराने पौधों से पत्तियों का विदोहन करने पर भी रोक है, लेकिन इसकी पौध उगाकर उनकी पत्तियों को बेचने में रोक नहीं है। सिविल सोयम वन प्रभाग के डी0एफ0ओ0 ने अपने स्टाफ के सहयोग से थुनेर के एक लाख से अधिक पौधे तैयार कर लिए है। इन पौधों को चयनित वन क्षेत्रों में लगाने की योजना है। उन्होंने डाबर और वन पंचायत के बीच एक अनुबंध करवाया है। इस अनुबंध के तहत वन पंचायत असोटा–सिलखोड़ा द्वारा उत्पादित थुनेर की पत्तियों को डाबर इंडिया लिमिटेड खरीदने को बाध्य होगा। असोटा–सिलखोड़ा वन पंचायत क्षेत्र में वन विभाग द्वारा थुनेर के 10 हजार पौधे लगाए जाएंगे। इन पौधों की तीन साल तक देखरेख की जाएगी। उसके बाद इन पौधों को वन पंचायत को सौंप दिया जाएगा। पांच साल पूरे होने के बाद इन पौधों से थुनेर की पत्तियां निकाली जाएंगी। डाबर उस समय के बाजार भाव के हिसाब से इन पत्तियों को वन पंचायत से खरीदेगा। अनुबंध में यह भी तय है कि यदि कोई कंपनी वन पंचायत को डाबर से अधिक दाम देती है तो वन पंचायत उसे पत्तियां बेचने को स्वतंत्र होगा।
57	12	जून 17, 2004	अमर उजाला	हाथियों का शिकार रोकने को एंटी पोचिंग चौकियां बनेंगी	वन महकमा हाथियों का शिकार रोकने के लिए एंटी पोचिंग चौकियों का निर्माण तो करेगा ही, एंटी पोचिंग दस्ते भी बनाएगा। हाथियों की गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए वाच टावर्स बनेंगे और वनकर्मियों को डिजिटल व नाइट विजन कैमरे उपलब्ध कराए जाएंगे। हाथी बहुल पूर्वी वन प्रभाग ने इस संबंध में केंद्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के एलीफेंट प्रोजेक्ट को पांच वर्षीय योजना का 2.35 करोड़ का प्रस्ताव भेजा है। उत्तरांचल में यमुना से शारदा के बीच कुल 5,405 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र हाथियों का प्राकृत वास है। कालसी भूमि संरक्षण वन प्रभाग देहरादून, हरिद्वार, लैंसडाउन, तराई पश्चिमी, तराई पूर्वी, रामनगर, तराई केंद्रीय, हल्द्वानी, चंपावत एवं नरेंद्रनगर वन प्रभागों की 45 रेंज हाथी के लिए बफर एरिया के रूप में घोषित की गई हैं। राजाजी नेशनल पार्क, कार्बेट नेशनल पार्क व सोना नदी वन्य जीव विहार उत्तरांचल के हाथियों का कोर एरिया है। हाथी लंबी रेंज में घूमने वाला जानवर है। पहले रामनगर से लेकर टनकपुर तक शिवालिक के जड़ पहाड़ से होते हुए हाथियों का मूवमेंट होता था। हाथी का शिकार रोकने को पांच सालों में आठ एंटी पोचिंग चौकियों का निर्माण किया जाएगा। साथ ही प्रभाग में ब्रिटिशकालीन 28 चौकियों का जीर्णोद्धार किया जाएगा। छह जीर्ण–शीर्ण रेंज कार्यालयों का भी जीर्णोद्धार तथा 14 लेबर हट का निर्माण होगा। पेट्रोलिंग रास्तों का सुधार, एंटी पोचिंग स्कवाड का गठन व तीन वाचिंग टावरों का निमार्ण भी होगा। प्रभाग के संवेदनशील गांवों के चारों ओर हाथियों का प्रवेश रोकने को 25 किलोमीटर सोलर फेंसिंग की जाएगी।

58	12	जुलाई 30, 2004	अमर उजाला	छोटा कैलाा में भी तेजी से पीछे जा रहे है ग्लेयिर	छोटा कैलाा को जाने वाले ट्रेकरों की संख्या लगातार बढ़ती ही जा रही है। धार्मिक यात्रियों के अलावा भारी संख्या में अकुाल ट्रेकर भी इस रूट में जा रहे हैं। मौज मस्ती को जाने वाले यह लोग काफी प्रदूषण फैलाते हैं। बढ़ते प्रदूषण व जंगलों के कटान के कारण यहां के ग्लेयिर तेजी से पीछे की ओर जा रहे हैं। छोटा कैलाा की यात्रा कर चुके प्रो0 ोखर पाठक बताते हैं कि इस रूट में जाने वाले अकुाल ट्रेकरों के कारण प्रदूषण तो फैल ही रहा है साथ ही जंगलों पर भी दबाव पड़ रहा है। प्रदूषण व जंगलों के कटान के कारण ग्लेयिर भी प्रभावित हो रहे हैं। इन पर 'ग्लोबल वार्मिंग' का भी असर पड़ा है। इसी कारण ये तेजी से पीछे की ओर जा रहे हैं। प्रसिद्व छायाकार अनूप साह बताते हैं कि ट्रेकर व धार्मिक यात्री खाद्य सामग्री और पालीथीन रास्ते में जगह–जगह फेंक देते हैं। जंगलो में पड़ रहे दबाव को रोकने के लिए यात्रियों को रूट में गैस सिलैंडर उपलब्ध कराने चाहिए। इसके अलावा रूट में कूड़ा इकट्ठा करने के लिए उचित स्थल बनाये जाएं। स्थानीय नागरिकों को जागरूक कर ही रूट को प्रदूषण से मुक्त किया जा सकता है।
59	12	अगस्त 1, 2004	दैनिक जागरण	अब केदारनाथ पर छाये खतरे के बादल	आस्था के सर्वोच्च ाखिरों में से एक केदारनाथ धाम पर कभी भी चौराबाड़ी ग्लेयिर बम की तरह फटकर कहर बरपा सकते हैं। मंदिर के ठीक पीछे स्थित करीब 6 किलोमीटर लंबे इस ग्लेयिर से हिमस्खलन लगातार सक्रिय हो रहे हैं। जबकि मौसम के गर्म होने से चौराबाड़ी के इर्द–गिर्द बर्फीली झीलों की संख्या अप्रत्याति रूप से बढ़ गई है। चूंकि ये झीलें ग्लेयिर के पीठ पर सवार है। इसलिए अगर पानी का बोझ बढ़ा तो झीलें फट पड़ेंगी और मौका ताड़कर यमुनोत्री और बदरीनाथ से भीषण तबाही केदारनाथ धाम में मचाने निकल पड़ेंगी। चौराबाड़ी ग्लेयिर का सर्वेक्षण पूरा कर हाल ही में केदारनाथ से लौटे हिमालय भू–विज्ञान संस्थान के विोषज्ञों की गोपनीय रिपोर्ट पर गौर करें तो हालात बहुत अच्छे नहीं हैं। रिपोर्ट के मुताबिक केदारनाथ मंदिर से महज दो किलोमीटर दूरी पर स्थित चौराबाड़ी ग्लेयिर के मुरैन पर बर्फीली झीलों की संख्या चिंताजनक रूप से बढ़ रही है। जिन झीलों की संख्या वर्ष 2003 में सिर्फ तीन थी वर्ष 2004 में वह बढ़कर सोलह हो गई है। दुखद यह है कि मौसम के गर्म होने से पिघल रहे चौराबाड़ी ग्लेयिर के कारण झीलों के आयतन में जबरदस्त बढ़ोत्तरी हो रही है। आयतन में वृद्धि के चलते झीलों के पानी के भार से इनके फटने की संभावनाएं बढ़ गई हैं। जानकारों का कहना है कि जब तक ग्लेयिर में इन झीलों को रोकने की झमता है या झीलें छोटी हैं तब तक तो ठीक है लेकिन तापमान बढ़ने से ग्लेयिर में दरारें पड़ी या एक झील दूसरे से मिल गई तो हालात बेकाबू हो जाएंगे। चौराबाड़ी ग्लेयिर की बिगड़ती स्थिति केदारनाथ मंदिर के लिए इसलिए भी खतरनाक मानी जा रही है क्योंकि यह ग्लेयिर मंदिर के ठीक पीछे स्थित है। अगर हिमस्खलन हुआ तो वह केदारनाथ मंदिर को दाएं और बाएं से हिट करेगा जबकि ग्लेयिर की झील फटने की स्थिति में पानी की यह नदी मंदिर को पीछे से चोट पहुंचाएगी। यही नहीं जहां मंदिर है उसके पीछे के पड़ाव की झुकाव करीब 60 डिग्री के कोण पर हैं। एवंलाच की दृष्टि से 60 डिग्री कोण को काफी खतरनाक माना जाता है। और चूंकि सर्दियों में यहां आठ से दस फीट तक बर्फ गिरती है और मंदिर के बगल के पहाड़ वर्ष भर बर्फ से पटे रहते है इसलिए यह 60 डिग्री का स्लोप सर्दियों में और भी खतरनाक है।

60	12	अगस्त 8, 2004	अमर उजाला	एक और बड़े बांध की तैयारी	टिहरी हाइड्रो–डेवलपमेंट कारपोरेान (टीएचडीसी) किाऊ में जल विद्युत की एक और बड़ी परियोजना लेकर आ रहा है। 600 मेगावाट की इस परियोजना में 4,000 करोड़ रूपये से अधिक की लागत आएगी। विभागीय सूत्रों के अनुसार इस परियोजना से बनने वाली बिजली का बंटवारा उत्तरांचल और हिमाचल प्रदेा के बीच होना है। लेकिन पानी के बंटवारे में उत्तरांचल, उत्तर प्रदेा, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, राजस्थान और हिमाचल प्रदेा का हिस्सा है। एक हजार मेगावाट के टिहरी बांध की परियोजना के बाद यह टीएचडीसी को प्रदेा में मिलने वाली दूसरी बड़ी परियोजना होगी। इस परियोजना के डूब क्षेत्र में कुल 17 गांव आते हैं। जिससे तकरीबन साढ़े पांच हजार लोगों का पुनर्वास करना होगा। किाऊ बांध देहरादून से लगभग सौ किमी की दूरी पर उत्तरांचल और हिमाचल प्रदेा की सीमा पर स्थित यमुना की प्रमुख सहायक नदी टोंस पर बनने वाली एक बहुद्देाीय परियोजना है। 236 मीटर ऊंचाई एवं 680 मीटर लंबाई के सालिड ग्रेविटी बांध एवं 600 मेगावाट के सतही विद्युत गृह का निर्माण कर एक बड़ा जलााय बनाया जाएगा। यमुना और टोंस नदी के संगम स्थल डाकपत्थर से 45 किमी अपस्ट्रीम पर स्थित इस परियोजना के सांभरखेड़ा स्थल पर अधिकाां भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, हाइड्रोलॉजी, पर्यावरण एवं इकोलॉजी, भूकंपीय अध्ययन, वृक्षारोपण और पुनर्वास से संबंधित पक्षों पर अध्ययन किए जा चुके है। भूवैज्ञानिक एवं भूकंपीय विषमताओं के सापेक्ष आर्च ग्रेविटी बांध के विकल्प स्वरूप अर्थ एवं राकफिल बांध प्रस्तावित कर विस्तृत परियोजना रिपोर्ट 1978 में केंद्रीय जल आयोग एवं केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण को प्रेषित कर परीक्षित कराई गई थी। विभागीय सूत्रों के अनुसार अंतरराज्यीय समझौतों के बाद ाीघ्र ही इसके लिए सहमति पत्र तैयार किया जाना है।
61	12	अगस्त 19, 2004	अमर उजाला	बाघ की खाल के बदले मिलती है ाहतू	बाघ और तेंदुए की हत्या खाल के लिए नहीं बल्कि इनके अंगो के लिए की जाती है। चीन में इन अंगों से कीमती दवा बनाई जा रही है। ऐसा अनुमान है कि इन्हीं अंगों के बदले ाहतू यहां लाया जाता है। वन्यजीवों के अंगों की तस्करी में लगे लोगों का मुख्य मकसद तेंदुए और बाघ की हत्या कर उनके अंगों को किसी भी तरह चीन तक पहुंचाना है। इसके लिए उत्तरांचल के नेपाल से लगे क्षेत्र को सुरक्षित माना जाता है। पहले बाघ और तेंदुए का ाकिार खाल प्राप्त करने के लिए ही किया जाता था। 1992 के बाद इन वन्यजीवों की हत्या इनके अंगों को प्राप्त के लिए की जाने लगी। बताया गया है कि चीन में बाघ और तेंदुए की हड्डी की अत्यधिक मांग है। इनका उपयोग चीन में बनने वाली पारंपरिक दवा में किया जाता है। बाघ की हड्डियों को ाराब बनाने में भी प्रयोग में लाया जाता है। इससे गठिया रोग दूर होता है। इसके अलावा फोड़ों का इलाज करने, मांसपेाियों की ऐंठन दूर करने, टाइफाइड, बुखार, मलेरिया, हाइड्रोफीबिया जैसी बीमारी के इलाज के लिए भी इन हड्डियों का उपयोग किया जाता है। चीन में बाघ और तेंदुए की चर्बी, मांस, अंडकोष, पेट, नेत्रगोलक, नाक, दांत, पंजे, मूंछ, मल, खून को भी दवा के लिए प्रयोग में लाया जाता है। बाघ के अंगों की तस्करी करने वाला अंतर्राष्ट्रीय गिरोह है। यह गिरोह नेपाल, तिब्बत मार्ग का सहारा लेता है। भारतीय क्षेत्र से बाघ और तेंदुए के अंग ले जाए जाते हैं। तिब्बत में ही वन्यजीवों के अंगों की अदला बदली तिब्बत में मिलने वाले शहतूस से की जाती है।

62	12	अगस्त 23, 2004	अमर उजाला	बारह साल में सूख जाएगी कोसी	अल्मोड़ा नगर तथा आसपास के सैकड़ों गांवों की प्यास बुझाने वाली नदी कोसी दस बारह सालों में पूरी तरह सूख जाएगी। अल्मोड़ा के लिए यह खतरे की घंटी है। बारह साल में पानी चार गुना कम होने से कोसी की चार सहायक नदियां पहले ही सूख चुकी हैं। वैज्ञानिकों ने कोसी को बचाने के लिए बरसात का पानी इकट्ठा करने पर जोर दिया है। कोसी हिमालय से निकलने वाली नदी नहीं है और पूरी तरह जल स्रोतों और सहायक नदियों पर निर्भर है। करीब 15–20 सालों में आबादी बढ़ने के साथ इस नदी का जल स्तर लगातार घट रहा है। कुमाऊं विवविद्यालय अल्मोड़ा परिसर में भूगोल विभाग के उपाचार्य तथा नेचुरल रिर्सोस डाटा मैनेजमेंट सिस्टम सेंटर के परियोजना निदेाक डा0 जे0एस0 बिष्ट ने बताया कि इस साल मई में इस नदी में पानी का प्रवाह 195 लीटर प्रति सेकेंड रिकार्ड किया गया जबकि 12 साल पहले 790 लीटर प्रति सेकेंड था। नदी में पानी 50 लीटर प्रति सेकेंड प्रतिवर्ष की दर से कम हो रहा है जो खतरनाक है। डा0 बिष्ट के मुताबिक सर्वे आफ इंडिया के रिकार्ड में सदाबाहिनी नदी के रूप में दर्ज कोसी की सहायक मैलोनगाड़, सुमारीगाड़, साईनाला और नानिकोसी नदियां अब सूख कर मौसमी नदियों का रूप ले चुकी हैं। कोसी को सदानीरा बनाए रखने के लिए डा0 बिष्ट ने एक योजना बनाकर दी है। इस योजना पर अभी से अमल हो जाए तो कोसी में पानी की कमी नहीं रहेगी। नदी में कोसी कस्बे से ऊपर की तरफ कौसानी तक 323 गांवो से पानी आता है। यह सभी गांव कौसानी, सोमेवर, विंसर, ीतलाखेत तथा कसारदेवी इलाके के अंतर्गत आते हैं। इन सभी इलाकों और कोसी की सहायक नदियों के इर्द–गिर्द पहाड़ की ढलान में पांच मीटर चौड़े और पांच मीटर गहरे खनकी (टैंक) बनाए जाने चाहिए। उन्होने मौसमी नदियों के आसपास पत्थर व लकड़ी के छोटे–छोटे पोखर तथा चैक डैम बनाने और इस समूचे क्षेत्र में चौड़ी पत्ती वाले पेड़ लगाने का सुझाव दिया है। कोसी कस्बे के नीचे फड़का में छोटा बांध बनाने की भी बात रखी है, ताकि गर्मियों में इससे पानी की आपूर्ति की जा सके।
63	12	अगस्त 27, 2004	अमर उजाला	सेब उत्पादन में 20 वर्षों का रिकार्ड टूटा	उत्तरांचल में सेब की पैदावार के लिए इस वर्ष मौसम अनुकूल रहा। वर्षा व नमी ने पूरा साथ दिया। जिसके चलते यहां सेव उत्पादन में 20 वर्षों का रिकार्ड टूट गया है। राज्य भर में तकरीबन 3 लाख 38 हजार मैट्रिक टन सेव पैदा होने का अनुमान है। असामान्य व असमय वर्षा, पानी की समय पर कमी और ओलों की मार जैसी समस्याओं के चलते पिछले दो दाकों में उत्तरांचल में सेब उत्पादन में कमी आती रही, जबकि हिमाचल व जम्मू कमीर के सेब धूम मचाते रहे। गत वर्ष लगभग 38 हजार मीट्रिक टन सेब पैदा हुआ। हालांकि इस बीच सेब बागानों के क्षेत्रफल में खास बढ़ोत्तरी नहीं हुई, किन्तु किसानों ने सेब की नई नस्लों को अपनाया। उत्तरांचल में जल्दी पकने वाली चौबटिया प्रिंस, अर्ली सनवरी, गोल्डन व ग्रीन स्वीट से लेकर खैनी, पिनौनी, मैकन्टौस, किंग डेविट, रैड डैलिसस व अन्य डैलीसस प्रजातियों से लेकर ीतकाल के पहले तक तैयार होने वाली राइमर, वर्किंघम व पिक्स जैसी प्रजातियों का सेब इस बार अच्छी तादात में पैदा हुआ। राज्य में सबसे अधिक सेब उत्तरकाशी में पैदा होता है। उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण निदेाालय से लगे सर्वाधिक पुराने व माहूर चौबटिया गार्डन में लगभग 56 प्रजातियां मौजूद हैं। ीघ्र व मध्यकाल में पकने वाली प्रजातियों से अभी तक लगभग तीन सौ क्विंटल सेब प्राप्त हो चुका है।

64	12	सितम्बर 11, 2004	दैनिक जागरण	मानव विकास को हिमालय की सुरक्षा जरूरी	मानव सभ्यता के विकास के लिए पर्यावरण की सुरक्षा को सबसे महत्वपूर्ण जरूरत बताते हुए काशी हिंदू विवविद्यालय के पर्यावरण विषेज्ञ प्रो0 जे0 एस0 सिंह ने कहा कि हिमालय क्षेत्र की पर्यावरण सुरक्षा आज सबसे बड़ी चुनौती है। उन्होने प्राकृतिक जल स्रोतों की सुरक्षा पर विषे बल दिया। गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं् विकास संस्थान, कटारमल में आयोजित दसवें पंडित गोविन्द बल्लभ पंत स्मृति व्याख्यानमाला को संबोधित करते हुए मुख्य वक्ता के रूप में श्री सिंह ने कहा कि पर्यावरण की सुरक्षा के लिए जंगलों से लगे गांवों की आर्थिक सुरक्षा का ध्यान देना होगा। पर्यावरण से सम्बंधित जो भी कार्यक्रम चलाये जायें, उसका सीधा लाभ जनता को मिले। उन्होने कहा कि उत्तरांचल में अधिकांा क्षेत्र वनों से आच्छादित हैं इन वनों के विकास के साथ–साथ यहां पर उपलब्ध संसाधनों पर छोटे–छोटे व्यवसाय से लोगों को जोड़ना होगा। व्याख्यानमाला में प्रदो के मुख्य सचिव डा0 आर0 एस0 टोलिया ने कहा कि प्रदो के आर्थिक एजेंडे में पर्यावरण को सम्मिलित किया गया है। उन्होंने कहा कि 12वें वित्त आयोग में भी पर्यावरण सम्बंधी गंभीर विषयों को समाविष्ट कर अधिक महत्व दिया गया है। ग्लेयिरों के बारे में भी हम सभी को गंभीरता से सोचना होगा व वनों की सुरक्षा की ओर विषे ध्यान देने की जरूरत है। केन्द्रीय पर्यावरण तथा वन सचिव डा0 प्रदीप्तो घोष ने कहा कि पर्यावरण संस्थान को पारिस्थितिकीय और सामाजिक बदलावों के अंतर्सम्बंध की समझ बढ़ाते हुए जल संसाधन, हिमनद एवं वनों के संरक्षण पर प्राथमिकता से काम करना होगा।
65	12	सितम्बर 12, 2004	दैनिक जागरण	उत्तरांचल में चुनौती बन सकता है पानी	पानी आने वाले समय में उत्तरांचल में चुनौती बनकर उभर सकता है। यह खुलासा केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय की रिपोर्ट में किया गया है। रिपोर्ट में इस पहाड़ी प्रदो के मैदानी क्षेत्रों के लगातार गिरते भू जल स्तर पर चिंता व्यक्त की गई है। हांलाकि प्रदो सरकार ने जल समस्या से निपटने के लिए ग्राउंड वाटर सेल के गठन की योजना बनाई है और इसके क्रियान्वयन के लिए लगभग साढ़े चार करोड़ का प्रस्ताव केंद्र सरकार को भेजने की तैयारी कर ली है। हरिद्वार, कोटद्वार व ऊधमसिंह नगर जैसे मैदानी इलाकों में लगातार गिरते भू–जल स्तर को लेकर अब नीति नियंताओं के माथे पर चिंता की लकीरें उभरने लगी हैं। केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय द्वारा आयोजित राज्यों की बैठक में इस रिपोर्ट का खुलासा होने के बाद ग्राउंड वाटर सेल के गठन पर कार्य ुरू हो गया है। सिंचाई विभाग ने जल स्तर में गिरावट का पता लगाने के लिए सर्वेक्षण कर प्रबंधन की योजना तैयार कर ली है ताकि वर्तमान ग्राउंड वाटर लेबल को कायम रखा जाए और भविष्य के खतरे से निपटने के लिए कारगर हल तलाशा जा सके। विगत दो व तीन अगस्त को राज्यों की बैठक में केंद्रीय जल संसाधन मंत्री प्रियरंजन दास मुंशी ने समस्या की गंभीरता के मद्देनजर ग्राउंड वाटर प्रोजेक्ट प्रस्तुत करने के निर्दो दिए थे। भू–जल स्तर गिरने का मुख्य कारण माइनिंग आफ वाटर यानी जल स्त्रोतों का अनावयक दोहन माना गया था। मैदानी क्षेत्रों में फिलहाल इस समस्या से निपटने के लिए न तो कारगर उपाय ही तलाो जा सके हैं और न ही समुचित संसाधनों का उपयोग हो पाया है।

66	12	सितम्बर 12, 2004	दैनिक जागरण	वैज्ञानिक लाभदायी पेड़ों की प्रजाति विकसित करें	प्रख्यात पर्यावरणविद् सुंदर लाल बहुगुणा ने पानी के संकट के प्रति सचेत करते हुए वैज्ञानिकों का आह्वान किया कि वे वैज्ञानिक तरीके से लाभदायी पेड़ों की खेती विकसित करें। श्री बहुगुणा यहां पर्यावरण संस्थान में आयोजित 'हिमालयी क्षेत्र में खिसकते ग्लेयिरः पर्यावरण एवं सामाजिक प्रभाव' विषयक गोष्ठी को संबोधित कर रहे थे। गोष्ठी के अध्यक्ष एवं पर्यावरण व वन मंत्रालय के सचिव डा0 प्रदीप्तो घोष ने दूरगामी प्रभावों को ध्यान में रखकर योजनाएं क्रियान्वित करने पर बल दिया। श्री बहुगुणा ने भविष्य में होने वाले पानी के संकट में अपनी चिन्ता से अवगत कराते हुए कहा कि हमें पानी कम से कम खर्च करना चाहिए। औद्योगिक इकाईयों को पानी का विकल्प ढूंढना होगा और कम खर्च हेतु कड़ा कानून बनाना चाहिए। पहाड़ो में पेड़ो की खेती की जानी चाहिए, जिससे पानी का खर्च कम होगा। डा0 प्रदीप्तो घोष ने कहा कि हिमालय के ग्लेयिरों को सिर्फ अध्ययनों तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए, बल्कि भविष्य में होने वाले दूरगामी प्रभावों को ध्यान में रखते हुए अभी से अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करना चाहिए। एस्ट्रोफिजिक्स संस्थान बंगलौर में प्रोफेसर विनोद कुमार गौड़ ने गोष्ठी में हिमालय के ग्लेयिरों का विस्तृत वैज्ञानिक व्याख्यान प्रस्तुत किया एवं जोर देते हुए कहा कि गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान को ग्लेयिर अध्ययन की नोडल एजेंसी बनाकर क्षेत्र का अध्ययन किया जाय।
67	12	सितम्बर 15, 2004	अमर उजाला	आपदा से निपटने में घंटे नहीं, मिनट लगेंगे	प्रदेा का दूरदराज का अतिदुर्गम क्षेत्र प्राकृतिक आपदा की चपेट में आ जाए, तो सूचना मिलने के बाद बचाव व राहत की प्रभावी रणनीति बनाने में कितना वक्त लगेगाघ दिन और घंटे नहीं, बल्कि चंद मिनट। भले ही आज यह भरोसे की बात न लगे, लेकिन सरकार ने प्रदेा के गांव–गांव की डिजिटल मैपिंग की जो कवायद ाुरू की है, उसने इसकी काफी हद तक उम्मीद जगायी है। आपदा प्रबंधन एवं न्यूनीकरण केंद्र (डीएमएमसी), प्रदेा का जो डिजिटल मानचित्र तैयार कर रहा है, उसमें राज्य के कोने–कोने की भौगोलिक, सामाजिक, आपदा संवेदनीलता की जानकारी तो है ही, वहां मौजूद अस्पताल, खाद्यान्न भंडार, उपलब्ध मानव ाक्ति का भी बारीकी से ब्योरा दिया जा रहा है। डीएमएमसी के अधिाासी निदेाक डा0 आर0के0 पाण्डे का कहना है कि कम्प्यूटरीकृत मानचित्र में वृहद जानकारियों का समावेा होने की वजह से चंद सेकेंड में प्रभावित क्षेत्र की पूरी तस्वीर सामने होगी। प्रभावित इलाके की भौगोलिक तथा तत्काल उपलब्ध संसाधनों के आधार पर बचाव व राहत कार्य को त्वरित गति से ाुरू करना मुमकिन हो जाएगा। डीएमएमसी अब तक उत्तरकाशी तथा अल्मोड़ा का मानचित्रीकरण कर चुका है। आपदा प्रबंधन को फुर्तीला बनाने के लिए डीएमएमसी के वैज्ञानिक लंबे समय से सिर खपा रहे थे। अधिाासी निदेाक डा0 पाण्डे ने कहा कि यह बात नहीं है कि प्रदेा के संसाधनों के बावत जानकारियां नहीं है। आपदा मानचित्र के वक्त आवयक हर विभाग तथा उसके संसाधनों की उपलब्धता को एक ही स्थान पर समाहित कर दिया गया है। इसमें हर गांव की भौगोलिक स्थिति की जानकारी है। वहां पहुंचने का मार्ग, उपलब्ध सरकारी संसाधन, वहां तैनात कर्मचारी, निजी प्रतिष्ठान (केमिस्ट, ट्रांसपोर्ट, जनरल स्टोर आदि) की सूचीबद्ध सारणी बनाई गई है। अत्याधुनिक तकनीकी का इस्तेमाल करते हुए एक–एक बिंदु का अक्षाां तथा देाांतर में स्थिति भी दी जा रही है।

68	12	दिसम्बर 11, 2004	अमर उजाला	पर्यटन को गांवों में ले जाएंगे हिमालयी सूबे	हिमालयी राज्यों में पर्यटन को पांच सितारा ाहरी कल्चर से निकालकर गांवों में ले जाने के लिए एक राय कायम होने लगी है। प्रकृति प्रेमी सैलानियों को रिझाने के लिए पर्वतीय अंचल में साझा नेटवर्क तथा मार्केटिंग की रणनीति बनाने को हिमाचल प्रदेा, सिक्किम तथा लद्दाख ने उत्तरांचल के हाथ से हाथ मिलाया है। कोाि यह है कि ाहरों तक सिमटे पर्यटन का दायरा विकसित कर दूरदराज अंचलों तक फैलाया जाए। पर्यटन के क्षेत्र में संभावनाओं के मद्देनजर केंद्रीय ग्रामीण पर्यटन योजना ाुरू कर केंद्र सरकार भी अपनी गंभीरता जाहिर कर चुकी है। उत्तरांचल के विभिन्न वन प्रभागों के गंगी (टिहरी), अगोड़ा (उत्तरकााी), कोटी (चकराता), सारी (केदारनाथ वन्यजीव), पवलगढ़ (रामनगर), बूंगा (पिथौरागढ़), मिलम (बागेवर), कनेाल (टोंस), आठ गांव इस योजना में ाामिल हैं। गौरतलब है कि उत्तरांचल में पर्यटन में स्थानीय समुदाय की भागीदारी का इतिहास नया नहीं है। राज्य गठन के बाद से कार्बेट नेानल पार्क के बकराकोट, छोटी हल्द्वानी तथा क्यारी, गंगोत्री राष्ट्रीय पार्क के हर्षिल, मुखवा, धराली, जसपुर तथा दथारी गांव में ग्रामीण पर्यटन की ाुरूआत की जा चुकी है। नंदा देवी बायोस्फीयर्स के लाता, तोलमा, रैणी तथा भ्यूंडार गांवों में ग्रामीण पर्यटन की गतिविधियों से जुड़े हुए हैं।
69	12	दिसम्बर 11, 2004	अमर उजाला	गोमुख में आवाजाही नियंत्रित होगी	देा के तीसरे विााल गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान को नियोजित ढंग से विकसित करने तथा पर्यावरणीय दृष्टि से बेहद संवेदनाील माने जा रहे गोमुख क्षेत्र में पर्यटकों की आवाजाही नियंत्रित करने के लिए वन विभाग ने ठोस योजना तैयार करने की कवायद ाुरू कर दी है। राज्य के वन एवं पर्यावरण मंत्री नवप्रभात ने पार्क का दौरा करने के बाद विभागीय अधिकारियों को योजना तैयार करने के निर्दो दिए हैं। गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान संभवतया देा का ऐसा पहला स्थान है जहां कि भोजवासा–गोमुख क्षेत्र जाने वाले पर्यटकों को बरड़ मृगों के झुंड देखने का ात–प्रतिात अवसर मिलता है। झूंडों में रहने वाले बरड़ मृग यहां हजारों की संख्या में मौजूद हैं और ये बेखौफ राहगीरों के पास से होकर कुलांचें मारते हुए निकल जाते हैं। गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान की इस विोषता से यहां पर्यावरणीय संकट भी बढ़ने लगा है। गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान में बड़े पैमाने पर अवैध िाकार के प्रमाण मिलने पर चौकन्ने वन विभाग ने अब गंगोत्री में रेंज कार्यालय खोलकर तथा पेट्रोलिंग की व्यवस्था कर स्थिति पर नजर रखने का निर्णय लिया है। उच्च हिमालयी क्षेत्र के इस पार्क की सीमा में आने वाले गोमुख क्षेत्र में बेतरतीब ढंग से पर्यटकों की आवाजाही तथा टनों कूड़ा–कचरा बिखेरने से चिंतित वन विभाग यहां पर्यटकों की आवाजाही को नियंत्रित करने की योजना तैयार करने में जुटा है। इसके अलावा विभाग आवेदन करके परमिट हासिल करने तथा विदेाी पर्यटकों के लिए ाुल्क पर पार्क में प्रवेा की व्यवस्था पर भी विचार किया जा रहा है। गंगोत्री में वाहनों की आवाजाही से बढ़ते प्रदूषण से निजात पाने के लिए कुछ किमी पीछे ही पार्किंग स्थल विकसित करने की योजना है ताकि वाहनों को सीधे गंगोत्री जाने से रोका जा सके।

70	12	दिसम्बर 28, 2004	अमर उजाला	देवभूमि की भूगर्भीय हलचल खतरे का संकेत दे रही है	देवभूमि की धरती के भीतर भी कुदरत ाांत नहीं है। पिछले 17 महीने में 15 बार ऐसे मौके आ चुके हैं, जब धरती के भीतर हलचल हो चुकी है। हालांकि इन सभी भूकंपों की तीव्रता रिक्टर पैमाने पर 3 से 4.5 तक ही आंकी गई है। 1999 से लेकर अब तक उत्तरांचल के विभिन्न इलाकों में भूकंप के छोटे–छोटे करीब 2400 झटके महसूस किए गए। आपदा प्रबंधन एवं न्यूनीकरण केंद्र के आंकड़े गवाह हैं कि इस पूरे साल सूबे में धरती ाांत नहीं बैठी है। धरती के भीतर लगातार हलचल जारी है, जो भूकंप के झटकों के रूप में सामने आ रही है। दक्षिण एाया में हुई तबाही ने 'हाई सैस्मिक जोन' वाले हिमालयी क्षेत्र को समय रहते किसी भी आपदा से निपटने के लिए सर्तक कर ही दिया है। कुमाऊं विवविद्यालय का भूगर्भ विज्ञान विभाग 'साइस्मिक नेटवर्क इन कुमाऊं हिमालया' नामक परियोजना के माध्यम से पिछले कई वर्षो से हिमालयी क्षेत्र में हुई भूगर्भीय हलचलों पर अध्ययन कर रहा है। उत्तरांचल में विभिन्न क्षेत्रों में पिछले वर्षो के दौरान आए भूकंप के छोटे–बड़े झटके परियोजना के तहत स्थापित नैनीताल की बिड़ला स्थित पहाड़ी में बने केंद्र में दर्ज हैं। इस केंद्र के वैज्ञानिकों के मुताबिक इंडियन प्लेट, यूरेाियन प्लेट के नीचे की ओर पांच सेमी0 प्रति वर्ष की रफ्तार से सरक रही है। इस प्रक्रिया के दौरान एकत्र होने वाली ऊर्जा जब पृथ्वी से बाहर निकलती है तब भूगर्भीय हलचल होती है और भूकंप के झटके आते हैं। कुमाऊं विवविद्यालय नैनीताल के भूगर्भ विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष प्रो0 चारू पंत ने बताया कि भूकंप के खतरे की दृष्टि से उत्तरांचल जोन –4 में आता है। उन्होनें बताया कि बताया कि पृथ्वी के भीतर साइनोतिबेतैन प्लेट और इंडियन प्लेट टकराने से इस हिमालय क्षेत्र में भूकंप के झटके आते हैं। सुमात्रा द्वीप में भूकंप का केंद्र समुद्र के भीतर होने की वजह से उतना अधिक असर नहीं पड़ा, जितना कि इसके किसी महाद्वीप के केंद्र में होने पर पड़ता। रिक्टर पैमाने पर 8.9 तीव्रता का जलजला करीब 21 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को थर्राने को काफी है। और उत्तरांचल का भौगोलिक दायरा महज 53 हजार 484 वर्ग किलोमीटर तक ही है। हिमालयी क्षेत्र में इंडियन एवं यूरेाियन (तिब्बतन) प्लेट के बीच चल रहे टकराव की वजह से चिंतित विाषज्ञों को डर है कि यदि भविष्य में इस क्षेत्र में कभी ऐसा हुआ तो फिर भगवान ही मालिक है। विड़ंबना यह है कि इतना सब होने के बाद भी न तो सरकार और न ही जनता हिमालयी क्षेत्र की भूकंपीय संवेदनाीलता के प्रति गंभीर है और न ही आपदा से पूर्व बचाव के लिए जागरूक है।

71	13	फरवरी 20, 2005	अमर उजाला	बागवानी के भविष्य पर संकट के बादल	सूबे की मिट्टी में आवयक तत्व लगातार कम होते जा रहे हैं। गेहूँ, धान, तिलहन आदि मुख्य फसलों तथा फलों के बेहतर उत्पादन के लिए जिन आवयक पोषक खनिज तथा अणु पोषक खनिज तत्वों की जरूरत होती है, उनका प्रतिात सिलसिलेवार घट रहा है। जैविक तथा माइक्रोबियल घटकों के लिहाज से भी मिट्टी में चिंताजनक ढग से कमी आई है। सूबे के फल पट्टी क्षेत्रों में बोरॉन तथा मोलीब्डीनम जिस तेजी से कम हो रहे हैं, उसने बागवानी के भविष्य पर भी चिंता के बादल गहरा दिए हैं। भू–वैज्ञानिक इस स्थिति के लिए सूबे की कृषि के पारम्परिक स्वरूप को जिम्मेदार मान रहे हैं। लगातार एक ही फसल चक्र को दोहराना मिट्टी से उपयोगी खनिजों की कमी की वजह बना है। आवयक खनिजों की कमी की यह खौफनाक तस्वीर कृषि मंत्रालय की ओर से सूबे की मिट्टी के विभिन्न नमूनों के अध्ययन के दौरान सामने आई। गौरतलब है कि अभी हाल में राज्य के 95 विकास खंडों की 670 न्याय पंचायतों के मृदा उर्वरकता मानचित्र तैयार करते वक्त कृषि क्षेत्र की मृदा के तीन साल के नमूनों का उर्वरकता के लिहाज से गहन परीक्षण किया गया। इस अध्ययन के परिणाम के आधार पर ही पता चला कि सूबे की कृषि मृदा में आवयक नाइट्रोजन, फास्फेट समेत विभिन्न खनिज तत्वों की भारी कमी है। माइक्रोन्यूट्रिएंट्स में 0 से 40 प्रतिात तक मिट्टी के नमूनों में जिंक और सल्फर, 0 से 20 फीसदी नमूनों में कॉपर और मैग्नीज, 0 से 60 प्रतिात नमूनों में आयरन काफी कम मात्रा में पाया गया। कार्बन तत्व भी 2 से 0.5 तक कम देखा गया। गौरतलब है कि 65 प्रतिात भू–भाग पर वनावरण तथा ोष बचे काफी बड़े भूभाग के दुर्गम होने की वजह से उत्तरांचल में कृषि तथा बागवानी का दायरा केवल दस प्रतिात भूभाग पर ही सिमटा हुआ है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक प्रदेा में कुल बोया जाने वाला क्षेत्रफल करीब आठ लाख हैक्टेयर है। राज्य के करीब 11 लाख वाादि सीधे तौर पर खेती–बाड़ी से जुड़े हैं। इनमें लघु सीमांत कातकारों की तादाद नौ लाख के करीब है। प्रदेा के अपर सचिव (कृषि) के मुताबिक भूमि की उर्वरा ाक्ति बढ़ाने के प्रयासों के साथ ही कातकारों को स्थानीय स्तर पर उन्नत किस्म के बीज भी उपलब्ध कराने की कोाि की जा रही है। इसके तहत जल्द ही प्रदेा में कोर वैली सीड प्रोग्राम आरंभ किया जा रहा है।
72	13	फरवरी 22, 2005	अमर उजाला	बर्फ की चादर में छिपा है खजाना	इस साल पतित पावनी गंगा और यमुना में पानी की कमी नहीं रहेगी। जनवरी और फरवरी में सूबे के ऊपरी इलाकों में करीब 15 दिन हुए हिमपात का दूरगामी असर यह पडेगा कि नदियां सालभर पानी से लबालब तो रहेंगी ही, खेतों में हरियाली और बागानों में पेड़ फलों से लदे रहेंगे। यही नहीं, जल–विद्युत उत्पादन के बढ़ने से बिजली कटौती से निजात मिलने की भी उम्मीद है। इस मौसम में हुई बर्फवारी दो हिसाब से खास रही, एक तो इसका विस्तार कई क्षेत्रों में था, दूसरे इसकी आवृत्ति भी ज्यादा रही। पचिमी विक्षोभ के लगातार सक्रिय रहने की वजह से ऊंची पहाड़ियों पर खासी बर्फबारी हुई है। भारत की ज्यादातर नदियों के स्नोफेड होने की वजह से साल भर पानी की तेज धार को बनाए रखने में बर्फबारी काफी फायदेमंद साबित होती है। गंगा, यमुना हो या रावी और व्यास सभी, स्नोफेड नदियां हैं मौसम में गर्मी आते ही धीरे–धीरे पिघलकर ये बर्फ नदियों में जाएगा, जिससे जलस्तर बढ़ेगा। यही नहीं, बर्फ के ऊपर ही बर्फ की नई परत जमते जाने से नीचे की बर्फ के लंबे समय तक सुरक्षित रहने की संभावना है। इससे ग्राउंड वाटर रिचार्ज होने की प्रक्रिया में भी तेजी आएगी।

73	13	फरवरी 22, 2005	अमर उजाला	विदेयिों को भायी उत्तरांचल की हर्बल और लीफ चाय	उत्तरांचल की पैदावार 'लीफ' और 'हर्बल' टी नामी गिरामी कंपनियों की चाय को टक्कर दे रही है। उत्तरांचल की चाय अब लोकल मार्केट में अपनी छाप छोड़ने के बाद दो–विदो में पैठ बना रही है। अमेरिका, डेनमार्क, दक्षिण कोरिया, हालैंड, जर्मनी व जापान को 'उत्तरांचल चाय' का निर्यात किया जा रहा है। खासकर यूरोपीय देाों में उत्तरांचल चाय की सुगंधित और स्वादिष्ट 'हर्बल' व 'लीफ' टी की मांग बढ़ रही है। उत्तरांचल चाय की लोकप्रियता और डिमांड को देखते हुए चाय विकास बोर्ड ने आरगेनिक (जैविक) चाय की खेती का निर्णय लिया है। बोर्ड के मुताबिक ाीघ्र ही कुमाऊं में छोटे–छोटे चाय प्रसंस्करण यूनिट स्थापित किए जाएंगे। वर्तमान में कौसानी, चौकोड़ी, विजयपुर, बेरीनाग, घोड़ाखाल, भीमताल के साथ ही गढ़वाल मंडल के कुछ स्थानों पर चाय का उत्पादन हो रहा है। घोड़ाखाल, बेरीनाग, चौकोड़ी व चंपावत में लाखों पौधों की नर्सरी स्थापित की गई है। इसके अलावा नैनीताल जिले के कोटाबाग, भवाली, पदमपुरी, धानाचुली और चंपावत जिले के लोहा, ललुवापानी में अव्वल दर्जे की चाय पैदा हो सकती है। अल्मोड़ा जिले में जलना, सोमेवर, दूनागिरी व नौधर को चाय बोर्ड द्वारा चाय पैदावार क्षेत्रों के रूप में चयनित किया जा चुका है। कौसानी में दो करोड़ रूपये की लागत से चाय प्रसंस्करण इकाई स्थापित है। इस फैक्ट्री में 11 फीसदी हिस्सेदारी राज्य सरकार की है। पिछले साल सूबे में 9000 किलो चाय उत्पाद हुआ था। चालू वित्त वर्ष में 20,000 किलो चाय उत्पादन का लक्ष्य है।
74	13	फरवरी 26, 2005	अमर उजाला	पिंडारी से पानी लाना व्यावहारिक नहीं	गर्मियों में जब भी कोसी नदी में पानी का जल स्तर गिरता है अल्मोड़ा में पिंडर नदी का पानी लाने की योजना पर चर्चा ाुरू हो जाती है। जल निगम के अधिकारियों के मुताबिक पिंडर से अल्मोड़ा पानी लाने में कम से कम 175 किमी लंबी लाइन डाली जाएगी। इस योजना में लगभग 250 करोड़ रूपये खर्च होंगे। इतने अधिक बजट और विपरीत भौगोलिक परिस्थितियों के चलते जल निगम के इंजीनियरों ने इस योजना को अव्यवहारिक बताया है। उल्लेखनीय है कि अल्मोड़ा नगर तथा आसपास के क्षेत्रों में पीने के पानी की आपूर्ति कोसी नदी से होती है। इसका उद्गम हिमालय की किसी चोटी से नहीं है और यह नदी पूरी तरह जल स्त्रोतों पर आधारित है। इस कारण गर्मियों में इसमें पानी काफी कम हो जाता है। इन परिस्थितियों में यह बात उठती रही है कि भविष्य में यदि कोसी नदी का जल स्तर बहुत कम हो गया तो अल्मोड़ा वासियों को पानी कहां से मिलेगा, इसके लिए हिमालय में पिंडारी ग्लेायिर से निकलने वाली पिंडर नदी से पानी की योजना बनाने की बात करीब दो दाक से उठती रही है। हालांकि यह योजना पिंडारी से यहां तक बन जाए तो इसमें कहीं पंप लगाने की जरूरत नहीं पड़ेगी, लेकिन लगभग 175 किमी लंबी लाइन डालनी पड़ेगी जिसमें करीब 250 करोड़ रूपये की लागत आएगी। जल निगम सर्वेक्षण डिवीजन के अधिाासी अभियंता ने बताया कि पिंडारी से पानी लाने के लिए बीच में करीब 16 किमी इलाके में बर्फीली चट्टानें पड़ती हैं जिसमें लाइनें भी मुकिल से डाली जा सकेंगी और यह क्षेत्र करीब छह माह तक बर्फ से ढंका रहता है। पिंडारी के जिस स्थान से पानी लाने की बात की जा रही है वहां भी जाड़ों में कभी इतना अधिक हिमपात होता है कि कई बार पेयजल आपूर्ति बाधित हो जाएगी। विाषज्ञों का मानना है कि इस योजना के बजाय सेराघाट से सरयू नदी पर आधारित योजना अधिक व्यावहारिक हो सकती है। इस योजना पर वर्तमान में 22 करोड़ रूपये लागत आने का आंकलन किया गया है। इसका प्रस्ताव भी ाासन को गया है।

75	13	मई 1, 2005	अमर उजाला	बिना परमिट गोमुख जाने पर पाबंदी लगी	गंगोत्री धाम के ऊपरी क्षेत्रों में अब से बगैर विधिवत अनुमति के प्रवेा नहीं किया जा सकेगा। गंगोत्री से आगे जाने के लिए यात्रियों को वन विभाग से परमिट लेना होगा और एक तय ुदा संख्या में ही लोग सफर कर सकेंगे। प्रत्येक व्यक्ति को अपने पास मौजूद एक–एक वस्तु का ब्यौरा देना भी अनिवार्य कर दिया गया है। सफर के दौरान उपयोग की गई वस्तुओं के कचरे को भी साथ में लेकर लौटना होगा। राज्य पुष्प ब्रह्म कमल के संरक्षण के लिए सरकार गंगोत्री तथा यमनोत्री के मध्य के पर्वतीय क्षेत्र में विाष्टि ब्रह्म कमल संरक्षण रिजर्व बनाने पर भी विचार कर रही है। सरकार का इरादा गंगोत्री राष्ट्रीय पार्क को इस वर्ष टूरिस्ट डेस्टिनेान के रूप में स्थापित करने का है। गंगोत्री से आगे जाने के लिए कड़ी ार्तें लागू होने का सीधा असर कांवड़ यात्रियों पर पड़ेगा। पिछले साल कांवड़ियों की संख्या 50 हजार का आंकड़ा पार कर चुकी है। श्रद्धालुओं की इस लगातार बढ़ती तादाद का सीधा–सीधा असर पर्यावरण पर पड़ रहा है। सभी पहलुओं के अध्ययन के पचात सरकार ने गंगोत्री धाम से आगे मानवीय गतिविधियों पर प्रभावी ढंग से नियंत्रण करने का निर्णय लिया है।
76	13	मई 2, 2005	अमर उजाला	उत्तरांचल में महकेंगी दूसरे राज्यों की जड़ी–बूटियां	उत्तरांचल की वादियों में जल्द ही कर्नाटक, मध्य प्रदेा, सिक्किम, लेह–लद्दाख की जड़ी–बूटियों की खुाबू भी महकने लगेगी। दुर्लभ प्रजाति की जड़ी–बूटियों के संरक्षण को जीन बैंक स्थापित करने की योजना के तहत सरकार ने दूसरे प्रांतों की वनस्पतियों को भी लाने का निर्णय किया है। इससे जड़ी–बूटियों को विलुप्त होने से तो बचाया ही जा सकेगा, साथ में व्यावसायिक उत्पादन के लिए कातकारों को उन्नत किस्में भी मुहैया कराना मुमकिन होगा। वर्तमान में प्रदेा में लेह के पुष्कर मूल तथा सिक्किम के चिरायते की करीब पचास हजार से भी ज्यादा पौध पनप चुकी है। गौरतलब है कि विव में प्रकृति की ओर तेजी से बढ़ते रूझान की वजह से चिकित्सा के क्षेत्र में जड़ी–बूटियों का व्यवसाय लगातार बढ़ रहा है। वर्तमान में इस बाजार के आधे से भी ज्यादा हिस्से पर पड़ोसी मुल्क चीन का कब्जा है। सरकार का मानना है कि 65 प्रतिात वनावरण तथा जलवायु की विविधता की वजह से उत्तरांचल भी इस बाजार में मजबूती के साथ अपने लिए जगह तैयार कर सकता है। वर्तमान में प्रदेा में करीब तेरह सौ हैक्टेयर भूमि पर जड़ी–बूटियों की खेती की जा रही है। पौध तैयार करने के लिए करीब पांच सौ नर्सरियां स्थापित की गई हैं और मुनिकी रेती, कालाढूंगी, हर्षिल तथा सोमगाढ़ में हर्बल गार्डन भी विकसित किए जा रहे हैं। आरक्षित वनों में करीब 14 हजार हैक्टेयर क्षेत्र जड़ी–बूटियों के लिए संरक्षित क्षेत्र के रूप में चिह्नित किया गया है।

77	13	मई 8, 2005	अमर उजाला	अपने घर में ही मर रही हैं देा की प्रमुखतम नदियां	पहाड़ की कोख सूख रही है, तो मैदान में खुाहाली कहां से आएगी। मैदानी इलाकों को पानी के लिए पहाडों से निकलने वाली नदियों पर ही आश्रित रहना पड़ता है। ताजा वैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि पहाड़ी क्षेत्रों के 30 प्रतिात जलस्त्रोत सूख गए हैं और भू–जलस्तर 30–60 फुट तक नीचे चला गया है। इससे मैदानी क्षेत्रों में भी जलस्तर औसतन 110 से 130 फुट तक नीचे चला गया है। विव बैंक की रिपोर्ट के अनुसार पचिमी उत्तर प्रदेा में बीस सालों में आठ मीटर तक जलस्तर कम हुआ है। इस साल औसत से ज्यादा बर्फबारी होने और अन्य परिस्थितियों के सामान्य रहने के बावजूद गंगा के जल का डिस्चार्ज अपने पुराने स्तर पर नहीं लौटा है। मानक के मुताबिक मार्च से लेकर मई के दौरान औसत डिस्चार्ज 600 क्यूमेक्स प्रति सेकेंड होना चाहिए, जबकि अभी यह करीब 470 है। कुमाऊं में स्थित कोसी नदी का घटता जल प्रवाह भी स्थिति की भयावहता की ओर इाारा कर रहा है। जल संरक्षण को लेकर तरह–तरह की योजनाएं चलाई जा रही हैं, लेकिन संरक्षण से भू–जल दोहन का प्रतिात ज्यादा है। जैसे–जैसे पानी नीचे जा रहा है, वैसे–वैसे जमीन की ऊपरी परत सिकुड़ती जा रही है। आई0आई0टी0 के हाइड्रोलॉजी विभाग के सरफेस वाटर विोषज्ञ का कहना है कि पहाड़ी क्षेत्रों विोषकर उत्तरांचल जहॉ वनों की बहुतायत है, वहां भू–जल लगातार कम होने से दावानल की समस्या बढ़ती जा रही है। मैदानी क्षेत्रों में भू–जल की कमी से जमीन की ऊपरी सतह सिकुड़ने लगती है। और जमीन खेती के लायक नहीं रह जाती। राष्ट्रीय जल संस्थान के विोषज्ञ के अनुसार इस साल तापमान पहले की अपेक्षा काफी कम होने से पहाड़ों पर पड़ी बर्फ पिघल नहीं पा रही है। भू–जल की कमी होने से जमीन के नीचे के पानी का जो रिसाव नदियों में होता था वह धीरे–धीरे कम होता जा रहा है, इससे भी जल स्तर घट रहा है।
78	13	मई 9, 2005	अमर उजाला	गन्ने के कैंसर पायरिला ने दी उत्तरांचल में दस्तक	गन्ने की किल्लत से जूझ रहे चीनी उद्योग के लिए एक और बुरी खबर। उत्तर प्रदेा में कहर बरपा रहे पायरिला कीट ने उत्तरांचल में भी पांव पसार लिए है। प्रदेा के डोईवाला तथा हरिद्वार के कुछ हिस्सों में पायरिला को सक्रिय पाया गया है। गन्ने का कैंसर माने जाने वाला पायरिला कीट गन्ने की जड़ व तने के बीच आयिाना बनाता है और इस भाग से आवयक जल तथा अन्य पोषक तत्वों को चूस लेता है। इससे गन्ना पूरी तरह विकसित नहीं हो पाता है। पायरिला की प्रदेा में आमद से सरकार की नींद उड़ी हुई है। प्रदेा के गन्ना विकास विभाग ने मुसीबत से निपटने के लिए पंतनगर विवविद्यालय के विोषज्ञों से संपर्क साधा है। प्रदेा में गन्ने का उत्पादन क्षेत्र लगातार घट रहा है। वर्ष 2002 से अब तक प्रदेा में गन्ना उत्पादन क्षेत्र 17 हजार हैक्टेयर कम हो चुका है। प्रदेश में वर्ष 2002–03 में गन्ना क्षेत्र 1 लाख 27 हजार हैक्टेयर था, अब वह गिर कर 1 लाख 10 हजार पर सिमट चुका है। पायरिला को नष्ट करने के लिए पंतनगर विवविद्यालय के विोषज्ञों से परार्मा लिया जा रहा है।

79	13	मई 29, 2005	अमर उजाला	प्रदेा भर में 1400 हेक्टेयर वन खाक	गर्मी बढ़ते ही दावाग्नि ने अब अपना प्रचंड रूप दिखाना ाुरू कर दिया है। अब तक राज्य का 1400 हेक्टेयर वन क्षेत्र दावाग्नि की भेंट चढ़ चुका है। इसमें करोड़ों की वन सम्पदा स्वाहा हो गयी है कुमाऊं में सबसे ज्यादा नुकसान पिथौरागढ़ और अल्मोड़ा वन प्रभागों को हुआ है। जबकि गढ़वाल मंडल में केदारनाथ वन प्रभाग का ाानदार चीड़ वन दावाग्नि की चपेट में आया है। नैनीताल वन प्रभाग से मिले आंकड़ों के मुताबिक दावाग्नि से सबसे ज्यादा नुकसान पिथौरागढ़ डिवीजन को हुआ है। पिथौरागढ़ वन प्रभाग में 139.50 हेक्टेयर चीड़ वन दावाग्नि में जलकर खाक हो गया है। कार्बेट टाइगर रिजर्व से सटा 239 हेक्टेयर मिश्रित वन क्षेत्र भी दावाग्नि ने लील लिया है। इसमें बिन्सर का रिजर्व फारेस्ट भी ाामिल है। अल्मोड़ा वन प्रभाग में 53.50 हेक्टयर वन क्षेत्र व चंपावत वन प्रभाग में 29.75 हेक्टेयर वन क्षेत्र तथा बागेवर वन प्रभाग में 11.05 हेक्टेयर वन क्षेत्र दावाग्नि में जलकर खाक हो गया है। गढ़वाल मंडल में दावाग्नि से सबसे ज्यादा नुकसान केदारनाथ डिवीजन को पहुंचा है। यहां 38 हेक्टेयर वन क्षेत्र रिजर्व फारेस्ट में खाक हुआ है तो 368 हेक्टेयर सिविल सोयम वन क्षेत्र भी दावाग्नि की भेंट चढ़ चुका है।
80	13	मई 28, 2005	अमर उजाला	कुदरत के कोप से 54 फीसदी घराटों की सांस बंद हुई	प्राकृतिक आपदाओं के चलते प्रदेा के तकरीबन 54 फीसदी घराट बंद हो गए हैं। सूबे के 11 जिलों में स्थापित 12,778 घराटों में से केवल अल्मोड़ा ही एक ऐसा जनपद है, जहां स्थापित सभी 2,150 घराट क्रियाील हैं। अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत्र मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अब इन घराटों की दाा सुधार कर उनके उच्चीकरण का बीड़ा उठाया गया है। इसके लिए उसने अनुदान दिए जाने की भी घोषणा की है। आधुनिक युग में लकड़ी के बने इन घराटों की महत्ता कम हो गई। हालांकि, पर्वतीय क्षेत्रों में आज भी घराट चलाए जा रहे हैं। आमतौर से घराटों का प्रयोग चक्की के रूप में किया जाता है। इसके अलावा इसका मैकेनिकल प्रयोग भी किया जाता है। अब मैकेनिकल के साथ ही इसका इलेक्ट्रिकल प्रयोग किए जाने पर भी जोर दिया जा रहा है। मंत्रालय द्वारा घराट सुधारीकरण कार्यक्रम के तहत पांच किलोवाट तक विद्युत उत्पादन किए जाने पर एक लाख रूपये और मैकेनिकल उपयोग (ऑयल मिल, धान की कुट्टी आदि) पर 30,000 रूपये का अनुदान दिया जा रहा है। उरेडा द्वारा इन दोनों प्रयोगों पर 6,000 रूपये का अनुदान है।
81	13	मई 30, 2005	अमर उजाला	चाय बनेगी विकास का आधार	गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान, कोसी कटारमल के सभागार में आयोजित राष्ट्रीय गोष्ठी को संबोधित करते हुए प्रदेा के उद्यान तथा लघु उद्योग मंत्री ने कहा कि चाय उत्तरांचल के विकास का प्रमुख आधार बनेगी। उन्होंने कहा कि चाय की खेती को व्यवसाय का रूप देने की जरूरत है। ाुरूआत करने के छह साल बाद कातकारों को उत्पादन का लाभ मिलता है। इसे देखते हुए सरकार ने चाय उत्पादकों के लिए अनुदान की व्यवस्था की है। प्रदेा के मुख्य सचिव श्री टोलिया ने कहा कि उत्तरांचल में उत्पादित चाय की काफी मांग है। यदि केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय का सहयोग मिले तो वनों की बंजर भूमि में भी चाय उगाई जा सकती है। उत्तरांचल में चाय को उद्योग के रूप में विकसित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारतीय चाय बोर्ड के चेयरमैन ने कहा कि पूरे विव में उत्तरांचल की चाय का अलग स्थान है। उत्तरांचल मे चाय की खेती को बढ़ावा देने के लिए भारतीय चाय बोर्ड ने कार्य योजना बनाई है जो ाीघ्र लागू की जाएगी।

82	13	जून 1, 2005	अमर उजाला	धौलीगंगा की ग्रिड लाइन बिछाने में 77 सौ पेड़ कटेंगे	धौलीगंगा बिजली परियोजना के लिए बरेली ग्रिड तक हाईटेंान लाइन बिछाने में 7706 पेड़ों के कटने की संभावना है। अभी तक 3331 पेड़ काटे जा चुके हैं। धौलीगंगा से बरेली तक लाइन बिछाने के लिए डेढ़ सौ करोड़ रूपये खर्च होने की संभावना है। राज्यमंत्री का दर्जा प्राप्त वन एवं पर्यावरण सलाहकार समिति के उपाध्यक्ष लीलाराम ार्मा ने वन मंत्री को पूरा विवरण भेजा है। उन्होंने वन विभाग के अधिकारियों पर भी इस महत्वपूर्ण मामले को अनदेखा करने का आरोप लगाया है।उन्होंने बताया कि 233 किलोमीटर लंबी लाइन में 538 टावर लगाए जाने हैं। लाइन बिछान में 7706 पेड़ों का कटना तय है। इसके अलावा कई स्थानों पर हरे पेड़ों के पास से लाइन ले जाई जा रही है लाइन पेड़ों की ऊंचाई से लगती हुई है। वर्षा के समय पेड़ों के लाइन से छू जाने की आंका है। इससे पेड़ों के सूख जाने और जंगली जानवरों के मरने की भी आंका है।
83	13	मई 28, 2005	दैनिक जागरण	भूगर्भीय हलचलों से खिसक रही है हिमालय श्रृंखला	टेक्टॉनिक प्लेटों के 'मूवमेंट से वैज्ञानिकों ने लगभग तीन हजार किलोमीटर लंबी हिमालय पर्वत श्रृंखला में अजीबो–गरीब परिवर्तन दर्ज किए हैं। भारत और तिब्बत सीमा से सटी यह पर्वत श्रृंखला जहां दक्षिण की तरफ खिसक रही है वही भारतीय उपमहाद्वीप उत्तर–पूर्व की तरफ बढ़ रहा है। भू–वैज्ञानिकों के मुताबिक लाखों वर्ष पूर्व इंडियन और यूरेाियन प्लेट की टक्कर से हिमालय श्रृंखला बनने के बाद एक बार फिर वही स्थिति पैदा होने जा रही है जब पर्वत श्रृंखलाओं का विस्तार भारतीय महाद्वीप के दक्षिणी छोर तक हो जाएगा। दिल्ली और ल्हासा की दूरी में प्रतिवर्ष चार सेंटीमीटर तथा देहरादून से बदरीनाथ के बीच प्रतिवर्ष पंद्रह मिलीमीटर की कमी दर्ज होने के बाद इस बात को पुख्ता आधार मिल गया है। हिमालय पर्वत श्रृंखला में यह परिवर्तन वाडिया इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी के वैज्ञानिकों की वर्षों की मेहनत का नतीजा हैं। अत्याधुनिक ग्लोबल पोजीानिंग सिस्टम (जीपीएस) से वैज्ञानिकों ने टेक्टॉनिक प्लेट्स के 'मूवमेंट' का बारीकी से अध्ययन कर कई महत्वपूर्ण जानकारियां जुटाई हैं। टेक्टॉनिक प्लेटों की हलचल पर वाडिया संस्थान के वैज्ञानिक डा. पी. बनर्जी की ाोध रिपोर्ट में इंडियन और यूरेाियन प्लेट के एक–दूसरे से टकराने का जिक्र किया है। इंडियन प्लेट जहां उत्तर–पूर्व की तरफ बढ़ रही है वहीं यूरेाियन प्लेट दक्षिण की दिाा में खिसक रही है। टक्कर के बाद भी दोनों प्लेट का एक–दूसरे की तरफ बढ़ना जारी है। डा. बनर्जी की रिपोर्ट के मुताबिक इंडियन प्लेट यूरेाियन प्लेट से टकराकर उसके नीचे जा रही है। आंका है कि इस परिवर्तन से लाखों वर्ष बाद भारतीय महाद्वीप के दक्षिणी छोर तक सिर्फ और सिर्फ पर्वत श्रृंखलाएं ही नजर आएंगी। प्लेटों की इस हलचल से हिमालय पर्वत की ऊंचाई प्रतिवर्ष एक सेंटीमीटर बढ़ने का दावा भी वैज्ञानिकों ने किया है। भू–वैज्ञानिकों का दावा है कि हिमालय क्षेत्र में होने वाले यह परिवर्तन लाखों वर्ष बाद ही सही, लेकिन इतिहास को दोहराएंगे। वैज्ञानिकों के मुताबिक ाायद तब तक मानव सभ्यता का अस्तित्व ही न रहे, लेकिन भारतीय महाद्वीप के अंतिम छोर तक सिर्फ पर्वत श्रृंखलाएं ही नजर आएंगी।

84	13	जुलाई 2, 2005	अमर उजाला	धरती की कोख में भी छिपा है बिजली का भंडार	जल, वायु, तापीय प्रक्रियाओं के बाद अब बारी है धरती के भीतर दहकती तपि की मदद से बिजली पैदा करने की। भू–वैज्ञानिकों ने सरकार को राज्य में मौजूद साठ से भी ज्यादा गरम पानी के स्रोत चिह्नित कर जियोथर्मल इनर्जी उत्पादन की नई संभावनाओं का रास्ता खोला है। हिमाचल, हरियाणा तथा महाराष्ट्र में बखूबी चल रहे इस प्रयोग के उत्तरांचल में भी कामयाबी हासिल करने की उम्मीद है। भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग (जीएसआई) के निदेाक का कहना है कि गरम पानी के स्रोतों के निकलने वाली भाप से पावर टरबाईन को सहज ही चलाया जा सकता है। यहीं नहीं पावर प्रोजेक्ट के साथ ही यदि इन इलाकों में पर्यटन के लिहाज से हॉट वाटर पार्क विकसित कर दिए जाएं तो विदेाी सैलानियों को भी आकर्षित किया जा सकता है। उत्तरांचल के भूगर्भीय संरचना के सर्वेक्षण के दौरान जीएसआई के विाषज्ञों ने गरम पानी (हॉट वाटर स्प्रिंग) के नए स्रोतों की खोज की। अधिकाांत यह स्रोत उच्च पर्वतीय इलाकों में हैं, जहां से भारतीय भू–प्लेट की मुख्य दरारें होकर गुजर रही हैं।
85	13	जुलाई 7, 2005	अमर उजाला	दहात के साये में हिमालय	भूस्खलन व बाढ़ की दृष्टि से कुमांऊ अति संवेदनाील है। राष्ट्रीय सुदूर संवेदन हैदराबाद की रिपोर्ट के अनुसार संपूर्ण उत्तरांचल के 1200 गांवों को भूस्खलन से भंयकर खतरा है। खासकर पिथौरागढ़–मालपा मार्ग पर 13 आबादी क्षेत्र भूस्खलन की दृष्टि से बेहद संवेदनाील हैं। इसके अलावा इस मार्ग पर 150 गांव भी बेहद संवेदनाील हैं। यही नहीं काली और ाारदा नदियों की घाटियां भी आपदा दृष्टि से संवेदनाील हैं। रिपोर्ट के मुताबिक मिलम, पिंडारी और कफनी जैसे ग्लेायिरों के वैज्ञानिक अध्ययन से पाया गया है कि हिमालय की आंतरिक हलचलों और भूमंडलीय तापमान बढ़ने की विवव्यापी घटना से ये ग्लेायिर सर्वाधिक प्रभावित हैं और कभी भी बड़े विनाा का कारण बन सकते हैं।
86	13	जुलाई 14, 2005	अमर उजाला	भूकंप से पड़ी छोटी दरारें भी नहीं छिपेंगी	गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के पहाड़ों में भूकंप से दरक गए छोटे से छोटे निाान को खोजने के लिए सिंथेटिक अपरचर रडार (एसआर) का इस्तेमाल किया जाएगा। देा में पहली बार प्रयुक्त हो रही इस तकनीक से पर्वतीय व मैदानी इलाकों में जमीन के अंदर–बाहर के बदलावों तथा वहां की भूकंप–भूस्खलन की दृष्टि से खतरों का आकलन किया जा सकेगा। आईआईटी के वैज्ञानिक एक माह में इस तकनीक का प्रयोग ाुरू कर देंगे। भूकंप के कारण अन्य क्षेत्रों की स्थिति कैसी है इसका पता लगाने की जिम्मेदारी डिपार्टमेंट ऑफ साइंस एंड टेक्नालॉजी (डीएसटी) ने आईआईटी के भूकंप विभाग को सौंपी है।
87	13	जुलाई 29, 2005	दैनिक जागरण	उत्तरांचल में बाघ व हाथी घटे	उत्तरांचल में वन्यजीवों की गणना के नतीजे घोषित कर दिए गए हैं। ताजा आंकड़ों के अनुसार प्रदेा में जहां बाघ, हाथी, पाड़ा व हिमालयन भालू की संख्या घटी है, वहीं गुलदार, कस्तूरी मृग, सांभर, चीतल, काकड़, भरल, थार, घुरल, नीलगाय, भूरा भालू व सिराऊ की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है। राज्य में पहली बार बारहसिंघा, मगरमच्छ, घड़ियाल, स्लोथ बियर व जंगली सुअर की गणना की गई है। उत्तरांचल में बाघों की संख्या में मामूली कमी आई है, जबकि हाथियों की संख्या घटकर 1510 रह गई है। जिन वन्यप्राणियों की संख्या में इजाफा हुआ है, उसमें गुलदार की संख्या बढ़कर 2105 हो गई है। कस्तूरी मृग की संख्या में मामूली बढ़त हुई है और अब इसकी संख्या 279 दर्ज की गई है। वर्ष 2005 की गणना में उत्तरांचल के पांच वन्यजीवों को पहली बार ाामिल किया गया। इन प्राणियों की गणना में उत्तरांचल में बारहसिंघा की संख्या 34, मगरमच्छ की संख्या 16, घड़ियाल की संख्या 8, स्लोथ वियर की संख्या 240 तथा जंगली सुअर की संख्या 32613 दर्ज की गई है।

88	13	अक्टूबर 4, 2005	अमर उजाला	थुनेर ने खोला नए खजाने का दरवाजा	उत्तरांचल में पाई जाने वाली थुनेर (टैक्सस बक्काटा) से निकलने वाले टैक्सोल की कीमत लाख और करोड़ में नहीं बल्कि इससे भी कहीं ज्यादा है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में एक किलो टैक्सोल की कीमत 1.80 अरब रूपये है। इस टैक्सोल का इस्तेमाल कैंसर की दवा बनाने में होता है। बायोफ्यूल जेट्रोफा तथा बांस के बाद अब थुनेर ने भी राज्य के लिए एक नए खजाने के दरवाजा खोल दिये हैं। थुनेर के उपयोग तथा मूल्य के मद्देनजर प्रदेा सरकार थुनेर के व्यावसायिक कृषिकरण की कवायद में जुट गई हैं। वर्तमान में अल्मोड़ा सिविल सोयम वन प्रभाग में थुनेर पर वृहद् स्तर पर काम चल रहा है। ाासन का इरादा कातकारों को थुनेर के व्यावसायिक कृषिकरण के प्रति प्रोत्साहित करने का है। आयुर्वेदिक दवाईयां बनाने वाली विख्यात डाबर कंपनी के साथ इसके विपणन का समझौता भी हो गया है। गौरतलब है कि साढ़े तीन हजार से पांच हजार फीट की ऊंचाई पर पाया जाने वाला थुनेर खासकर कैंसर की बीमारी के लिए काफी उपयोगी माना गया है। उत्तरांचल में अल्मोडा में कपकोट, जागेवर तथा गढ़वाल मंडल में थुनेर पांच हजार फीट तक की ऊंचाई पर बहुतायत में होता है। अल्मोड़ा सिविल सोयम वन प्रभाग में इस पर बड़े पैमाने पर काम ाुरू किया गया, जो कि काफी सफल साबित हो रहा है।
89	13	दिसम्बर 21, 2005	दैनिक जागरण	टिहरी झील से बदलेगा मौसम का मिजाज	टिहरी में बन रही विााल झील देा के मौसम को एक नया रूप देने जा रही है। झील से स्थानीय स्तर पर मौसम में क्रांतिकारी बदलाव के साथ ही देा के विभिन्न हिस्सों में खासे परिवर्तन नजर आएंगे। दिल्ली व उत्तर प्रदेा में मौसम का बदला रूप ज्यादा प्रभाव दिखाएगा। स्थानीय स्तर पर झील के आसपास कई किलोमीटर तक का वातावरण ड्राई से वेट हो जाएगा। घाटी कोहरे में छिप जाएगी। बारिा बढ़ेगी और हिमालय की सर्द हवाओं से ठंडक कम हो जाएगी। झील पूरी तरह से भरने के बाद मौसम अपना रंग दिखाना ाुरू कर देगा। लगभग 42 किलामीटर में फैली झील अगले वर्ष के उत्तरार्द्ध तक पानी से भर जाएगी और इसके साथ ही विााल जलााय मौसम पर अपना प्रभाव दिखाना ाुरू कर देगा। मौसम विभाग के निदेाक के अनुसार झील का पानी सर्द हवाओं को मॉडरेट कर देगा। जिससे झील के आसपास के वातावरण में नमी अधिक होगी। पहाड़ी क्षेत्र में चलने वाली हवाएं पानी के संपर्क में आकर नमी को सोख लेंगी और हवाओं की ठंड़क कम हो जाएगी। गर्मी के दौरान यही प्रक्रिया बदल जाएगी और झील की नमी के संपर्क में आते ही हवा ठंडी हो जाएगी। इसके अलावा झील के पानी से घाटी कोहरे में छिप जाएगी। लोकल क्लाइमेट सिस्टम के साथ ही आसपास के क्षेत्र में बनने वाला साइक्लोनिक सर्कुलेान झील की नमी के संपर्क में आकर मजबूत हो जाएगा जिससे बारिा की संभावना बढ़ेगी। पर्यावरणविद् सुंदरलाल बहुगुणा का भी यही मानना है। उन्होंने कहा कि झील में पानी भरने के बाद कोहरा इतना अधिक पड़ेगा कि लोग सुबह की धूप से वंचित हो जाएंगे।

90	14	जनवरी 16, 2006	दैनिक जागरण	पिंडर नदी : बहुआयामी परियोजना तैयार	पहाड़ की नदियां भले ही मैदान के लोगों की प्यास बुझा रही हों। लेकिन इनके अपने ही आंचल में स्थित बागेवर, अल्मोड़ा, पिथौरागढ़, चमोली व नैनीताल जिलों के कई इलाके आज भी बूंद–बूंद पानी को तरस रहे हैं। हालांकि यहां की समस्या से निबटने के लिए विभागीय पटल पर पिंडर नहर परियोजना प्रस्तावित है, लेकिन सेवानिवृत विोषज्ञों की एक पांच सदस्यीय टीम ने प्रभावित इलाकों का खुद सर्वे करके पिंडर पर ही एक बहुआयामी सर्पाकार परियोजना का प्रारूप तैयार किया है। इसे मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी को सौंपा जा चुका है। स्पेाल सिक्योरिटी ब्यूरो के सेवानिवृत्त अभियंता पर्वतारोही जगदीा चंद्र ढौढियाल, सेवानिवृत्त मेजर हीरा सिंह गढ़िया, बनारस हिंदू विवविद्यालय के सिविल इंजीनियरिंग विभाग के सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष व जल संसाधन आयोग के विोषज्ञ डा0 के0 एस0 कार्की, पंतनगर विवविद्यालय के पूर्व रसायन विभागाध्यक्ष डा0 एस0 जी0 एस0 खन्ना व कुमाऊं विवविद्यालय के पूर्व कुलपति डा0 के0 सी0 जोाी की टीम द्वारा सर्वे के आधार पर तैयार की गई इस बहुआयामी परियोजना में कहा गया है कि गढ़वाल मंडल के उत्तरी क्षेत्र में पानी की कोई कमी नहीं है, लेकिन दक्षिण में छोटे पहाड़ हैं और वे हिमाच्छादित भी नहीं है। यही कारण है कि बागेवर ाहर को छोड़कर आसपास व अल्मोड़ा क्षेत्र में पानी का अकाल है। प्रारूप के अनुसार ग्लेायिरों से निकली पिंडर नदी से एक मुख्य नहर बागेवर–चमोली जिलों की सीमा ग्वालदम की ओर निकाली जाएगी। यहां से दो नहरें निकलेंगी, जिनमें से एक नहर पिंडर घाटी के दक्षिण में बसे चमोली जिले के गॉवों में जलापूर्ति करती हुई गैरसैंण क्षेत्र तक पहुंचेगी। दूसरी नहर अल्मोड़ा–चौखुटिया–गेवाड़ की रामगंगा घाटी के पूर्वी भाग में ऊपरी क्षेत्रों में बसे गांव को पानी देगी। इससे कौसानी, वरंगला, लखनाड़ी व लोद को पानी मिलेगा। पिंडर का यह जल कौसानी से लमगड़ा व बिन्सर की तरफ काटा जायेगा, जो गिरेछीना पहुंचेगा। अल्मोड़ा व लोधिया पहुंचने वाला पिंडर का यह पानी कोसी नदी के उत्तरी ढाल के ग्रामों में होता हुआ दक्षिणी ढाल पर बनी पाइप लाइन के जरिये हल्द्वानी पहुंचाया जायेगा, जिससे तेजी से विकसित हो रहे इस नगर की पेयजल समस्या दूर हो सकेगी।
91	14	जनवरी 19, 2006	अमर उजाला	विदेाों में भी महकेंगे सूबे के जैविक उत्पाद	उत्तरांचल के जैविक उत्पाद निकट भविष्य में विव के खाद्य बाजारों में भी महकेंगे। केंद्रीय कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास एजेंसी (एपीडा) राज्य के जैविक उत्पादों के लिए वैविक बाजार का रास्ता खोलने के लिए आगे आई है। सूबे की जैविक विकास परिषद को राज्य के विाष्टि उत्पादों तथा उनके उत्पादक क्षेत्र को चिन्हित करने को कहा गया है। जैविक कृषि क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रर्दान की वजह से उत्तरांचल एपीडा की प्राथमिकता सूची में ाामिल है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संभावना खुलना राज्य की कृषि अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य के लिए 'च्यवनप्राा' माना जा रहा है। जैविक विकास परिषद की कार्यक्रम प्रबन्धक के अनुसार इससे जहां उत्तरांचल को विव मानचित्र पर पहचान मिलेगी, वहीं कातकारों को उनकी मेहनत का भरपूर मेहनताना मिलने लगेगा। राज्य की स्थानीय फसल 'मडुवा' को भी विव खाद्य कार्यक्रम में ाामिल किया जा चुका है। देा के कृषि उत्पाद तथा प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के लिए विदेाी बाजारों में जगह बनाने मे एपीडा की महत्वपूर्ण भूमिका है। वर्तमान में प्रदेा में 3000 हैक्टेयर भूमि पर प्रमाणित तथा 13,000 हैक्टेयर भूमि पर अप्रमाणित प्रजातियों की खेती हो रही है। करीब 1200 गांव अब तक जैविक ग्राम का दर्जा हासिल कर चुके हैं। एपीडा के प्रस्ताव के मुताबिक जनपदवार जैविक प्रजातियों को चिन्हित किया जा रहा है। हालांकि अभी राज्य के उत्पाद देाी बाजार में तो प्रचलित होने लगे हैं, लेकिन एपीडा की सहायता से इस कारोबार को अधिक बड़ा दायरा मिल जाएगा।

92	14	जनवरी 31, 2006	अमर उजाला	वनों को बचाने के लिए कवायद तेज	भारतीय वन अनुसंधान संस्थान ने वनों के संवर्धन के लिए ठोस प्रयास करने की पहल की है। इसके तहत देाभर के फारेस्टर, वैज्ञानिक और गैर सरकारी संस्थाएं दून में जुटेंगी और वनों की रक्षा के लिए उपाय सुझाने के साथ ही उनके संवर्धन की योजना भी तैयार करेंगी। वनों को बचाने के लिए 1918 में वन संवर्धन सम्मेलन की ुरूआत की गई थी। जहां वैज्ञानिक, वन अधिकारी और समाज सेवी संस्थाएं एक ही मंच पर पहुंचकर वन संवर्धन की योजनाएं तैयार करते थे। यह क्रम 1967 तक जारी रहा, लेकिन फिर इस पर ब्रेक लग गया। जबकि वनों के प्रतिात में कमी का दौर जारी रहा। 38 वर्ष बाद एक बार फिर से एफआरआई ने इस दिाा में पहल की है। संस्थान के निदेाक के अनुसार संस्थान के ाताब्दी वर्ष में दून में एक से तीन फरवरी तक 12वें वन संवर्धन सम्मेलन का आयेाजन किया जाएगा। सम्मेलन में सेल्वीकल्चर के जरिए वन उत्पादकता बढ़ाने के उपायों, संयुक्त वन प्रबंध– पीएफएम में वन संवर्धन एवं प्रबंध विषय पर चर्चा होगी। साथ ही वन अग्नि, ईधन काष्ठ, चारा, चराई, औषधीय पादपों एवं अन्य अकाष्ठ वन उपज, एलकेटीएस, जैव ईधन के लिए वनों का प्रबंध और रोपण प्रौद्योगिकी पर विचार विर्मा होगा।
93	14	फरवरी 21, 2006	दैनिक जागरण	ग्लेायिरों के खिसकने से प्रभावित हुई ागितकालीन वर्षा	इस वर्ष ागितकालीन वर्षा व हिमपात नहीं होने से पूरे पर्यावरण व जन जीवन में विपरीत प्रभाव पड़ने की आांका है। ागितकालीन वर्षा नहीं होने के पीछे वैज्ञानिक ग्लेायिरों का पीछे खिसकना प्रमुख कारण मान रहे हैं। वैज्ञानिक ाोधों से पता चलता है कि उत्तरांचल, हिमाचल व कमीर में ागितकालीन वर्षा मानसून के ग्लेायिरों में टकराने के बाद होती है। इस वर्ष उत्तरांचल में इसका सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। ाोधों के मुताबिक लद्दाख स्थित झीलों में जल स्तर लगातार घट रहा है जो भविष्य के लिए चिंता जनक है। प्रसिद्व भू–वैज्ञानिक प्रोफेसर कोटलिया ने ग्लेायिरों में किये गये ाोधों के बाद बताया कि हिमालयी ग्लेायिर विगत 7 हजार वर्षों से निरन्तर पीछे खिसक रहे हैं। लद्दाख सहित उत्तरांचल में ागितकालीन मानसून ग्लेायिरों में नहीं टकराने से वर्षा व हिमपात में अत्यधिक कमी आई है और इन दोनों क्षेत्रों में जल संकट गहराता जायेगा तथा इससे तापमान में वृद्वि होगी और गर्मियों में ग्लेायिर अधिक मात्रा में पिघलेंगे। ग्लेायिर अपने स्थान से 200 मीटर पीछे खिसक चुके हैं इसका प्रभाव जहां वर्षा में पड़ा है वहीं लद्दाख के 75 किमी व्यास की सोकर व 60 किमी व्यास की सोमुरारी झीलों पर पड़ा है। यह झील ग्लेायिरों पर निर्भर हैं। दोनों झीलों में 100 मीटर जल का स्तर घटा है। उत्तरांचल व लद्दाख में जनवरी से अब तक मात्र 1 मिमी वर्षा हुई है जबकि बीते वर्षों में 4 से 5 मिमी ागितकालीन वर्षा हुई। ग्लेायिरों का प्रभाव सर्वाधिक लद्दाख व उत्तरांचल में पड़ने जा रहा है। लद्दाख की यह जीवनदायिनी झील 50 से 100 वर्षों के बीच सूख जायेंगी जबकि उत्तरांचल में पानी का संकट काफी बढ़ जायेगा।

94	14	अप्रैल 28, 2006	अमर उजाला	पहाड़ के जंगलों में उगाया जाएगा मणिपुरी बांज	उत्तरांचल के पहाड़ों में तेजी से सूख रहे पानी के स्त्रोतों की चिंता अब राज्य सरकार को भी सताने लगी है। यही कारण है कि वन महकमे ने इस साल पौधरोपण कार्यक्रम में चौड़ी पत्ती वाले मणिपुरी बांज के पौध रोपने की तैयारी की है। राज्य के नौ पहाड़ी जिलों में 17 लाख पौधे रोपने का लक्ष्य रखा गया है। रूद्रप्रयाग की एक संस्था वन विभाग को मणिपुरी बांज के पौधे उपलब्ध कराएगी। इस साल सूखे के चलते कई जगह पानी के स्त्रोत सूखने लगे हैं। राज्य सरकार ने स्त्रोतों को बचाए रखने के लिए ठोस रणनीति तय करने के लिए वन विभाग को जिम्मेदारी सौंपी है। विभाग ने कई पर्वतीय राज्यों में पानी के स्त्रोत बचाए रखने में सहयोगी पेड़–पौधों का अध्ययन किया। जंगलात के सूत्रों ने बताया कि पानी के स्त्रोतों को बचाए रखने के लिए मणिपुरी बांज की प्रजाति सबसे महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही स्थानीय बांज, कचनार, भीमल के पौधे भी लाभदायक हो सकते हैं। वन विभाग ने अब मणिपुरी बांज की नर्सरी तैयार कर रही रूद्रप्रयाग की संस्था एप्रोप्रिएट टैक्नोलांजी इंडिया से संपर्क साधा है। यह संस्था पहले चरण में 16 लाख 84 हजार पौधे उपलब्ध कराने के लिए तैयार हो गई है। वन विभाग अब बरसात में मणिपुरी बांज रोपने संबंधी कार्ययोजना बनाने लगा है। इसके लिए पानी के स्त्रोत वाले स्थलों का चयन हो रहा है।
95	14	मई 2, 2006	अमर उजाला	जैव विविधता संरक्षण के साथ रोजगार भी	जैव विविधता के संरक्षण के साथ ही स्थानीय लोगों को रोजगार से जोड़ने की कवायद ुरू कर दी गई है। अस्कोट मस्क डीयर वाइल्ड लाइफ सेंक्च्युरी के लैंडस्केप से इसकी ुरूआत की गई है। वर्ल्ड बैंक ने योजना पर सहमति जताते हुए इसे बायोडाइवर्सिटी कंजरवेान थ्रू रूरल लाइवलिहुड इम्प्रूवमेंट प्रोग्राम के अंतर्गत लाने को कहा है। साथ ही इसके क्रियान्वयन के लिए चार करोड़ रूपये भी उपलब्ध कराए हैं। स्थानीय लोगों के पास रोजगार के विकल्प नहीं होने की वजह से जंगलों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। इस कारण जैव विविधता को खतरा पैदा हो गया है। ऐसा नहीं है कि इससे उत्तरांचल को ही जूझना पड़ रहा हो, बल्कि कई अन्य देों में यह समस्या सिर उठा रही है। योजना की खासियत यह है कि इसके लिए प्रोजेक्ट नहीं बनाया गया है। बल्कि स्थानीय लोगों के सुझाव के आधार पर सामुदायिक विकास और रोजगार का खाका तैयार किया जाएगा। वनों के साथ ही वन्यजीवों और वनस्पतियों की रक्षा में गांववासियों की भूमिका तय की जाएगी। इससे वन्यजीवों की मौत पर भी लगाम लगने की संभावना है।

96	14	मई 2, 2006	दैनिक जागरण	उत्तरांचल सहित 26 राज्यों में सिकुड़े जंगल	देा में घटते घने जंगलों के कारण बढ़ते पर्यावरण असंतुलन ने पर्यावरण विदों की चिंता बढ़ा दी है। वन बहुल प्रदेा उत्तरांचल सहित 26 राज्यों के घने जंगल सिकुड़ रहे हैं। भारतीय वन सर्वेक्षण के आंकड़ों पर आधारित केंन्द्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट (2005–2006) में बताया गया है कि देा में घने वन 290564 वर्ग किलोमीटर में हैं। जबकि भारतीय वन सर्वेक्षण की रिपोर्ट (2001) के मुताबिक वर्ष 2001 तक 416809 वर्ग किलोमीटर में घना जंगल था। इस प्रकार 26245 वर्ग किमी घना जंगल घटा है। राष्ट्रीय वन नीति में पर्यावरण संतुलन के लिए अनिवार्य तौर पर एक–तिहाई (33 फीसदी) भू–भाग पर वृक्षावरण होना स्वीकार किया है। जबकि देा के 20.64 फीसदी भू–भाग पर (678333 वर्ग किलोमीटर) ही जंगल है, जिसमें 287769 वर्ग किलोमीटर (8.76 फीसदी) पर खुला जंगल है। घने वन में 40 फीसदी से अधिक व खुले वन में 10 फीसदी से अधिक वृक्षावरण होने का मानक है। राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार, देा के पर्वतीय जिलों में दो–तिहाई (66 फीसदी) वन भूमि होना अनिवार्य है, जबकि यहां पर 38.34 फीसदी पर ही वन है उत्तरांचल के सभी 13 जिलों सहित देा के कुल 123 पर्वतीय जिलों में भी घना वन घटा है। वर्ष 2001 की रिपोर्ट में पर्वतीय जिलों में 175771 वर्ग किलोमीटर में जंगल था, जो सिकुड़ कर 167969 वर्ग किलोमीटर हो गया है। भारतीय वन सर्वेक्षण के अनुसार दिल्ली, चंडीगढ़, छत्तीसगढ़, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड, उड़ीसा, त्रिपुरा तथा दमन एवं दीव को छोड़कर अन्य 26 राज्यों में घना जंगल घटा है।
97	14	मई 11, 2006	अमर उजाला	कैपिटल एक्न प्लान की तैयारी	वातावरण में सामान्य तौर पर धूल कण की मात्रा करीब 100 माइक्रोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर होनी चाहिए, जबकि प्रदूषण नियंत्रण विभाग के आंकड़ों के अनुसार राजधानी की फिजां में यह 383 माइक्रोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर है। सरकार ने कड़े कदम उठाते हुए कैपिटल एक्न प्लान तैयार किया है। खासतौर पर राजधानी दून में बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण पर लगाम कसने की कोाि की जा रही है। राज्य बनने के समय कुल वाहनों में दुपहिया गाड़ियों की संख्या करीब 32 प्रतिात थी, जो अब बढ़कर 68 फीसदी हो गई है। यानि, पांच वर्षों में दुपहिया गाड़ियों की कुल संख्या में 47 फीसदी की बढ़ोत्तरी हुई है। यही नहीं, तिपहिया वाहनों में यह बढ़ोत्तरी 55 प्रतिात, जबकि लाइट मोटर व्हीकल्स में वृद्वि 23 प्रतिात हुई है। इससे चिंतित प्रदूषण नियंत्रण विभाग ने अब स्टेट एक्न प्लान की तैयारी ाुरू कर दी है। फिलहाल विभाग की ओर से राज्य बनने के बाद से अब तक के आंकड़ों का पुलिंदा तैयार किया जा रहा है, जिसकी समीक्षा के आधार पर योजना को अंतिम रूप दिया जाएगा। राजधानी दून के लिए विाष तौर पर किए जाने वाले प्रावधान प्रदूषण के लेवल को नीचे लाने में सहायक होंगे। इसके तहत विभिन्न स्थानों पर प्रदूषण की माप की जाएगी और जिम्मेदार तत्व पर नियंत्रण किया जाएगा। इसके लिए पूरे प्रदेा में एक साथ कड़े मानक लागू किए जाएंगे।

98	14	जून 13, 2006	दैनिक जागरण	अल्मोड़ा में दूर होगी पानी की कमी	कोसी नदी पर सालों से लंबित बरसीमी बांध परियोजना के धरातल पर उतरने के दिन नजदीक आने लगे हैं। सिंचाई विभाग की रिपोर्ट के आधार पर केन्द्र सरकार ने भू–वैज्ञानिकों से सर्वे कराया है। इसकी रिपोर्ट में भू–सर्वेक्षण व टोपोग्रॉफिकल सर्वेक्षण कराने की जरूरत बतायी गयी है। सिंचाई विभाग ने इसके लिए ाासन से 98 लाख रूपये की मांग की है। बांध के बनने से अल्मोड़ा में जहां पानी की किल्लत खत्म होगी, वहीं उत्पादन का भी लाभ मिलेगा। जल निगम द्वारा भी एक सर्वे कराया गया है जिसमें जलनिगम ने बताया कि 90 साल की आयु के हिसाब से बांध के लिए 36 एमएलडी पानी की आवयकता पड़ेगी। इसको संचय करने के लिए 40 से 60 मीटर ऊंचा बांध बनना जरूरी है। सिंचाई खंड के अधिकारियों ने बताया कि विभाग ने इंजीनियरों से विद्युत उत्पादन के लिए भी प्रारम्भिक सर्वे करा लिया है, जिसके अनुसार प्रस्तावित बांध से चार मेगावाट विद्युत का उत्पादन हो सकता है। इससे अल्मोड़ा के साथ–साथ नैनीताल को भी बिजली की आपूर्ति की जा सकती है।
99	14	अगस्त 22, 2006	अमर उजाला	कूड़े की खाद से लहलहाएगी फसल	अल्मोड़ा नगर को ाीघ्र ही कूड़े की समस्या से निजात मिलेगी। नगर पालिका परिषद ाहर के कूड़े के निस्तारण के लिए 32 लाख की लागत से ट्रैचिंग ग्राउंड बनाने जा रही है। इस ग्राउंड में जैविक कूड़े से वर्मी कम्पोस्ट खाद बनाई जाएगी तथा अजैविक कूड़े को काठगोदाम में स्थापित होने वाले रिसाइकिलिंग प्लांट को भेजा जाएगा। पालिका परिषद एनटीडी के निकट बल्ढोटी जंगल की भूमि में 32 लाख रूपये की लागत से ट्रैचिंग ग्राउंड बनाने जा रही है। इस भूमि का वन अधिनियम 1990 से अनापाि प्राप्त करने के लिए प्रस्ताव प्रदेा ाासन के पास भेजा गया है। अनापाि मिलते ही इस जमीन में ट्रैचिंग ग्राउंड बनाया जाएगा। इसके लिए 32 लाख की धनराि पालिका को मिल गई है। कम्पोस्ट खाद और रिसाइकिलिंग प्लांट भेजे जाने वाले कूड़े से पालिका को आय भी होगी।
100	14	सितम्बर 5, 2006	दैनिक जागरण	डीएमएमसी को ग्लेयिर एक्न प्लान का जिम्मा	आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबंधन केंद्र ने ग्लेयिरों की सुरक्षा तथा उनसे होने वाले संभावित नुकसान से बचने के लिए प्रभावी कार्ययोजना तैयार करने की पहल की है। इस संबंध में आयोजित कार्याला में 10 से अधिक संस्थाओं ने केंद्र को संस्तुतियां दी हैं। केंद्र ने ग्लेयिरों पर हुए ाोध व उनसे संबंधित डाटा एकत्र करने को प्राथमिकता देने का निर्णय किया है, ताकि उत्तरांचल के ग्लेयिरों का प्रबंधन बेहतर ढंग से हो सके। विाेषज्ञों ने कहा कि बढ़ते जैविक दबाव को ध्यान में रखते हुए ग्लेयिरों की सुरक्षा पर विाेष ध्यान दिए जाने की आवयकता है। उत्तरांचल में अनेक ग्लेयिर है और इनसे 11 बड़ी नदियां निकल रही हैं। ऐसे में ग्लेयिरों की सुरक्षा और बढ़ जाती है। विाेषज्ञों ने कहा कि उत्तरांचल में जो ग्लेयिर हैं, उनके संबंध में अभी तक जो ाोध हुए हैं, उनको एकत्र किया जाना चाहिए। ग्लेयिरों से जुड़े डाटा के संग्रह का कार्य भी तेजी से किया जाना चाहिए। ाोध व डाटा संग्रह से यह जानकारी अपडेट होती रहेगी कि ग्लेयिरों की ताजा स्थिति क्या है और उनकी सुरक्षा के लिए किस तरह से कार्य किया जाना चाहिए।

101	14	सितम्बर 17, 2006	दैनिक जागरण	राज्य के जंगल में 28 और टाइगरों की दस्तक	उत्तरांचल के जंगलों में 28 नए टाइगरों की मौजूदगी की कैमरा ट्रेप से पुष्टि हुई है। छह अन्य का भी सुराग मिला है। यदि इसकी भी पुष्टि हो गई तो जिम कार्बेट नेानल पार्क का कालागढ़ रेंज देा का ही नहीं विव भर में निर्धारित घनत्व में सबसे ज्यादा बाघ की जनसंख्या वाला क्षेत्र बन जाएगा। उत्तरांचल स्थित जिम कार्बेट नेानल पार्क में आने वाले कालागढ़ के 85 स्क्वायर किमी0 के दायरे में बरसात के दिनों में लगाए गए कैमरों के ट्रेप में आचर्यजनक तथ्य सामने आए हैं। ट्रेप के मुताबिक क्षेत्र में 28 नए टाइगरों की दखल हुई है। यह पहला अवसर है, जब यहां पर इतनी बड़ी तादाद में टाइगर की मौजूदगी को रिकार्ड किया गया है। इसके अलावा छह अन्य फुटमार्क भी पहचाने गए हैं पर इन ट्रेपों में दोनों ओर से धारियां पहले के फुटमार्क से मिलती जुलती हैं। लिहाजा अभी यह मानकर चला जा रहा है कि यहां पर 28 टाइगर ही नए हैं। वन विभाग के आला अफसरों का दावा है कि यदि आगे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह छह टाइगर भी नए हैं तो कालागढ़ देा में नहीं विव में टाइगर का सबसे अधिक घनत्व वाला क्षेत्र हो सकता है।
102	14	सितम्बर 20, 2006	दैनिक जागरण	नैनीतालवासी अब पियेंगे शुद्ध पानी	पेट की बीमारियों एवं कपड़े धोने में जरूरत से ज्यादा साबुन घिसने को मजबूर नैनीताल वासियों के लिए उत्साह जनक खबर है। उन्हें इसी माह अन्तर्राष्ट्रीय मानकों से भी कम कठोरता एवं अधिक शुद्धता का पानी मिलने जा रहा है। यह संभव होगा उत्तरांचल जल निगम द्वारा स्थापित किये जा रहे 73 लाख रूपये लागत के शुद्धीकरण प्लांट से जो कि आयन एक्सचेंज पद्धति से पानी में घुले भारीपन के कारकों कैलियम एवं मैग्नीयिम तत्वों को दूर कर देगा। सरोवर नगरी कैलियम एवं मैग्नीयिम तत्वों युक्त कैल्केरियस चट्टानों से घिरी है। इन्ही चट्टानों के स्त्रोतों से निकला पानी नैनी झील में पहुंचता है। यहां पेयजल के लिए झील के किनारे कुएं खोदकर झील का रिसा हुआ पानी लिया जाता है। इस प्रक्रिया में पानी में निलम्बित कैलियम एवं मैग्नियिम तत्वों की 450 पीपीएम यानी मिलीग्राम प्रति लीटर तक हो जाती है। इसी कारण नगर में कठोर पानी की आपूर्ति होती है। 10 एमएलडी यानी 10 लाख लीटर प्रतिदिन क्षमता के इस प्लांट में पानी को जियोलाइट रेजिन के एक मीटर मोटे बैड से गुजारकर कैलियम एवं मैग्नीयिम की मात्रा 200 से 250 पीपीएम तक की जा सकेगी। इसके अलावा जल में पूर्व की तरह फिटकरी की जगह क्लोरीन गैस से अतिरिक्त शुद्धता प्रवाहित की जायेगी।
103	14	सितम्बर 21, 2006	अमर उजाला	उत्तरांचल ने बनाया बायोडीजल	उत्तरांचल में पहली बार बायोडीजल का उत्पादन किया गया। जैट्रोफा के बीज से तेल निकाल कर ट्रांस स्टेरीफिकेान प्लांट द्वारा सूबे में पहली बार यह अजूबा किया गया। इस बायोडीजल को डीजल के साथ 80:30 के अनुपात में मिलाकर प्रयोग किया जा सकता है। डीजल में इसकी मिलावट से उपभोक्ता के डीजल खर्चे में कमी आ जाएगी। इसके अलावा इस प्रक्रिया में ग्लेसरॉल का भी उत्पादन होता है, जिससे ग्लिसरीन बनाई जाती है। बायोफ्यूल बोर्ड के अधिकारियों का कहना है कि इस पायलट यूनिट के बाद अब बिहारीगढ़ के पास 25 एकड़ जमीन खरीदने का प्रस्ताव है। ताकि, इसके लिए एक बड़े उत्पादन यूनिट की स्थापना की जा सके। पहले चरण में यहां प्रतिदिन 50 टन बायोडीजल का उत्पादन किया जाएगा। इसके बाद हर साल यह उत्पादन 100 टन प्रतिदिन के हिसाब से बढ़ाया जाएगा। इस बढ़ोत्तरी की सीमा 600 टन प्रतिदिन तक होगी। स्कूटर के पेट्रोल में ल्यूब्रिकेंट के लिए 2टी ऑयल मिलाया जाता है, उसी प्रकार बायोडीजल डीजल के साथ मिल कर ल्यूब्रिकेंट का काम करेगा। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत पांच फीसदी मिलाने की जरूरत है, जो दिसम्बर 2007 के बाद मजबूरी बनेगी। जैट्रोफा का बायोडीजल सर्वोत्तम माना गया है। सूबे में 15,000 हेक्टेयर में जैट्रोफा की रोपाई की गई है। बीज तैयार होने से पहले साल, नीम और चावल की भूसी के तेल का प्रयोग कर बायोडीजल का उत्पादन किया जाएगा।

104	14	अक्टूबर 12, 2006	दैनिक जागरण	बेडू–तिमिल से भी दौड़ेंगी गाड़ियां	बेडू के पौधे में जैव ईंधन बनाने की क्षमता भी है। इसके साथ ही इसमें प्रचुर मात्रा में पाये जाने वाले हाइड्रो कार्बन तत्वों के कारण इसके तेल से डीजल–पेट्रोल के विकल्प निर्माण पर अध्ययन ारू हो गया है। इसके अलावा प्रदेा की तिमिल सहित दर्जन भर वनस्पतियों से भी जैव ईंधन बनाने की संभावनाएं तलाी जा रही हैं। पेट्रोल–डीजल के विकल्प के रूप में जैव ईंधन के लिए मैक्सिको के जेट्रोफा के पौधे को उपयुक्त पाया गया है। केंद्रीय सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय में जैव प्रौद्योगिकी विभाग के संयुक्त निदेाक ने बताया कि हाइड्रो–कार्बन की प्रचुरता वाले बेडू व तिमिल सहित दर्जन भर अन्य वनस्पतियों का भी जैव ईंधन बनाने के लिए चयन किया गया है। उनके अनुसार उत्तरांचल में मोरेसी कुल के बेडू, तिमिल, गूलर, पाकड़, पिलखन, बगगेड़, पीपल, दुधीला, च्यूनिया या जड़खड़ी, कटहल, यूफोरबेसी कुल के जेट्रोफा, खिन्ना, तारचरबी, पुत्रनजीवा, पंचसेमल, घमार, रोहिनी व अरंडी, एस्क्लीपीयाडेसी कुल के आक या मदार, व विभिन्न प्रजाति की गाजर घास तथा सरसों व सोयाबीन आदि में हाइड्रो–कार्बन उपलब्ध हैं, जोकि जैव ईंधन का मूल घटक होता है। कुमाऊं विवविद्यालय में जैव प्रौद्योगिकी विभागाध्यक्ष प्रो0 बीना पांडे ने कहा कि केन्द्र में इन वनस्पतियों से जैव ईंधन तैयार करने व ऊतक संवर्धन विधि से इनका उत्पादन बढ़ाने को ाोध किये जायेंगे। यह प्रयोग सफल हुए तो जैव विविधता से परिपूर्ण उत्तरांचल के लोगों के लिए रोजगार के नये अवसर भी खुल सकते हैं।
105	14	अक्टूबर 17, 2006	अमर उजाला	वेदनी कुंड का अस्तित्व खतरे में, सूख चुका पानी	रहस्यमयी नर कंकालों वाले रूपकुंड के बाद अब धार्मिक महत्व व नंदादेवी राजजात यात्रा का मुख्य पड़ाव वेदनीकुंड का अस्तित्व भी खतरे में पड़ गया है। कुंड मिट्टी के टीले से पटने से सूख चुका है। जिसके कुल 420 मीटर परिधि के मात्र एक फीसदी भाग में ही पानी बचा हुआ है। वह भी सूखने के कगार पर है। धार्मिक महत्व वाला यह कुंड न सिर्फ विव विख्यात श्री नंदादेवी राजजात यात्रा का मुख्य पड़ाव है, अपितु धार्मिक मान्यताओं के अनुसार इस कुंड में बड़ी संख्या में लोग अपने पितरों को तर्पण देते हैं। लेकिन, 13 हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित 420 मीटर परिधि व 120 मीटर व्यास वाला यह कुंड अब धीरे–धीरे मिट्टी के टीले का आकार लेता जा रहा है। जिसके कुछ हिस्से में ही अब पानी ोष बचा हुआ है, जो रिसाव के कारण सूखने के कगार पर है। वेदनी कुंड व बुग्याल के निरीक्षण से लौटे बदरीनाथ वन प्रभाग के प्रभागीय वनाधिकारी के अनुसार इसके मूल स्वरूप को बचाए रखने के लिए वन विभाग कुंड के बीचोबीच आकार ले चुके इस टीले को बाहर निकालेगा साथ ही वाण से वेदनी तक के 14 किलोमीटर पैदल मार्ग व लोहाजंग–आली–वेदनी तक के पैदल मार्ग को भी दुरूस्त किया जाएगा।

106	14	अक्टूबर 25, 2006	अमर उजाला	लेंटाना के समूल नाा को नई तकनीक	लेंटाना यानी कूरी की जिस झाड़ी को अब तक भू–कटाव रोकने और बंजर भूमि को हरा–भरा रखने में मददगार माना जा रहा था, नए ाोध के बाद इसके बारे में राय बदल गई है। दिल्ली विवविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर डा0 सी0आर0 बाबू ने लंबे ाोध के बाद लेंटाना के बारे में ने केवल कई नई जानकारियां दी हैं, बल्कि इसे नष्ट करने की एक नई तकनीक से भी वाकिफ कराया है। इस तकनीक को आधार बनाकर वन महकमे ने कार्बेट टाइगर रिजर्व के तीन क्षेत्रों में 160 हेक्टेयर में लेंटाना को नष्ट कर घास और अन्य प्रजातियों के पौधों का रोपण कर दिया है। अब वन महकमा बड़े पैमाने पर इसे नष्ट करने की मुहिम ाुरू कर रहा है। प्रोफेसर डा0 सी0आर0 बाबू ने लेंटाना के बारे में जो ाोधपत्र प्रस्तुत किया है, उससे साफ हो गया है कि लेंटाना कोई सायल बैंकर नहीं है और न ही मिट्टी को बांधने वाला यानी सायल बाइंडर ही है। इस तरह लेंटाना के बारे में भू–कटाव को रोकने वाली वनस्पति की धारणा गलत साबित हुई है। अब यह तय हो गया है कि लेंटाना भू–क्षरण को बढ़ावा देने वाली वनस्पति है। इससे यह सोच भी गलत साबित हुई है कि भूमि को हरा–भरा रखने वाली इसकी कोई भी प्रजाति सही है। ग्रीन कवर के लिए सही प्रजाति का रोपण जरूरी है। उत्तरांचल में अवनत वन और बंजर भूमि में लेंटाना प्रचुरता से पाया जाता है। लेंटाना के नीचे कुछ नहीं उगता। लेंटाना की जड़ से जिस रसायन का रिसाव होता है वह दूसरे बीज को नहीं उगने देता। फिर, इसकी जड़ से ऐसे किसी चिपचिपे पदार्थ का रिसाव नहीं होता जो मिट्टी को बांध दे। जबकि घास की जड़ से ऐसे चिपचिपे पदार्थ का रिसाव होता है। यही वजह है कि लेंटाना के नीचे मिट्टी लूज रहती है और थोड़ी बारि में यह बह जाती है।
107	14	अक्टूबर 25, 2006	अमर उजाला	उत्तरांचल में है समुद्री जीवामों का भण्डार	प्रदेा में जहां आज हिमालय है, वहां कभी समुद्र था। लगभग छह से दो करोड़ वर्ष पूर्व तक भारतीय भू प्लेट के एाियाई प्लेट से टकराने पर यहां भू सतह ऊंची उठकर हिमालय पर्वत के रूप में ऊपर उठ गई थी। इस समय यहां पर मौजूद समुद्र भी कुछ स्थानों पर ऊंचा उठ गया था। इसकी पुष्टि प्रदेा के पिथौरागढ़ जनपद के सीमांत लेप्थल क्षेत्र में मौजूद समुद्री सीपों–घोंघों के जीवामों के भण्डार की मौजूदगी से होती है। विदेाी बाजारों में यह जीवाम बेाकीमती हैं। इस कारण संरक्षण के अभाव में इसकी तस्करी का खतरा पैदा हो गया है। कुमाऊं विवविद्यालय के भूगर्भ विज्ञान विभाग के अध्यक्ष प्रो0 चारू पंत बताते है कि पूर्व में धरती केवल उत्तरी एवं दक्षिणी गोलार्ध के दो भागों में थी तथा वहां पर टेथिस नाम का समुद्र था। लगभग छह से दो करोड़ वर्ष पूर्व तक भारतीय प्लेट के एाियाई प्लेट में टकराते रहने से हिमालय पर्वत का जन्म हुआ। इसी समय में यहां मौजूद हिमाचल, उत्तरांचल, नेपाल एवं अरूणाचल तक कई स्थानों पर 4500 मीटर की ऊंचाई तक टेथियस श्रृंखला के रूप में उठ गया। नंदादेवी बायोस्फियर रिजर्व क्षेत्र के लेप्थल में स्थित लिलंग व गर्ब्यांग आदि पिथौरागढ़ जनपद के गांवों में दस हजार हेक्टेयर क्षेत्र में समुद्री सीपों–घोंघों की मुख्यतः नौटिलस, अम्मोनाइट्स व वैलमनाइट्स प्रजातियों के समुद्री जीवाम तथा अब समुद्र से भी लुप्त हो चुके मृदाम व चूनाम भी मिलते हैं। मान्यता है कि स्थानीय भाषा में ाालीग्राम कहे जाने वाल इन जीवामों को घर में रखने से समृद्धि आती है। प्रो0 पंत बताते है कि लघु हिमालय क्षेत्र लगभग 57 करोड़ वर्ष पुराना है। नैनीताल के आल सेंट एवं भवाली क्षेत्र में कई स्थानों पर करोड़ों वर्ष पुराने जैव जीवाम मौजूद हैं। किन्तु इनके संरक्षण के साथ ही इनका प्रचार किया जाना भी बेहद जरूरी है। इससे ईको टूरिज्म एवं जियो टूरिज्म के रूप में बहुत अधिक लाभ मिल सकता है।

108	14	अक्टूबर 26 2006	अमर उजाला	उत्तरांचल में वाटर हार्वेस्टिंग से फसल दोगुनी	उत्तरांचल के पर्वतीय टीलों पर रेन वाटर हार्वेस्टिंग बेहद मुफीद साबित हो रही है। इसके जरिए जहा पानी की कमी को दूर किया जा रहा है, वहीं फसल भी दोगुनी हुई है। परंपरागत फसलों के अलावा किसानों ने सब्जियां भी उगानी ाुरू कर दी है। उत्तरांचल के अल्मोड़ा एवं टिहरी गढ़वाल जिले में किए गए अपने अध्ययन से वैज्ञानिक इस नतीजे पर पहुंचे है। वैज्ञानिकों ने एलडीपीई तालाब यानी कम घनत्व पॉलीथिलीन से बने तालाबों को वाटर हार्वेस्टिंग के लिए सर्वोत्तम बताया है। उत्तरांचल में ऐसे तालाब सफल साबित हुए हैं। आईआईटी रूड़की में हुए एक सेमिनार के दौरान पंतनगर विवविद्यालय के कालेज ऑफ टेक्नोलाजी के विोषज्ञों ने इस अध्ययन के नतीजे प्रस्तुत किए है। 'टेक्नो इकोनॉमिक फीजिविलिटी स्टडी ऑफ वाटर हार्वेस्टिंग स्ट्रक्चर्स इन उत्तरांचल' नामक अपने ाोधपत्र में विोषज्ञों ने अध्ययन की जानकारी सहित नतीजों की विस्तार से चर्चा की। विोषज्ञों ने बताया कि टिहरी गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जिले में मौजूद चुनिंदा 17 वाटर हार्वेस्टिंग स्ट्रक्चर का अध्ययन किया गया। इसके तहत इन तालाबों के बनने से पहले एवं बाद में वहां कृषि पैटर्न का अध्ययन किया गया। साथ ही वाटर हार्वेस्टिंग टैंक, उसकी स्थिति दिाा, निमार्ण वर्ष, लागत, फंडिंग एजेंसी, उद्देय, टैंक की मौजूदा स्थिति, वहां की प्राकृतिक अवस्था, सालाना रेनफाल, होने वाले लाभ आदि पहलुओं पर भी व्यापक सर्वे किया गया। वैज्ञानिकों ने दोनों जिलों में चुनिंदा 17 एलडीपीई तालाबों में से 15 को पूरी तरह सफल पाया, जबकि दो तकनीकी कारण से सफल नहीं हुए। ये तालाब खेतों में सबसे निचले स्थान पर बनाए गए हैं, ताकि बारि का पानी नीचे बहकर तालाब में इकट्ठा हो सके।
109	14	दिसम्बर 16, 2006	दैनिक जागरण	'चीड़ महावृक्ष' को लगा गंभीर रोग	टोंस वन प्रभाग पुरोला के अंतर्गत देवता रेंज में स्थित एयिा का सबसे लंबा चीड़ वृक्ष एक अज्ञात रोग का ाकिार हो गया है। रोग की वजह से वृक्ष का तना धीरे–धीरे क्षीण होने के साथ सूखने के कगार पर है। यदि समय रहते इसका उपचार ाुरू न किया गया तो एयिा की इस अमूल्य धरोहर का अस्तित्व समाप्त हो सकता है। वन विभाग के अधिकारियों ने इस 'चीड़ महावृक्ष' के रोगग्रस्त होने की पुष्टि की है। देवता रेंज देहरादून जिले की सीमा से सटा हुआ है। रेंज के अन्तर्गत लूनागाड़ व खूनीगाड़ के मध्य चीड़ का घना वन है। वन के बीचों–बीच 60.05 मीटर लम्बा व 2.70 मीटर गोलाई का चीड़ का वृक्ष स्थित है। वन विभाग के अनुसार यह एयिा का सबसे लंबा चीड़ वृक्ष है। इसकी आयु 212 वर्ष है। इसकी विोषता यह है कि इसके मुख्य तने से ााखाएं नहीं निकली हैं। सिर्फ इसके ीर्ष पर ही ााखाओं का एक झुंड है। वर्तमान में यह वृक्ष एक रोग की चपेट में आ गया है। महावृक्ष के रोगग्रस्त होने से वन विभाग के अधिकारियों के माथे पर चिंता की लकीरें खिंच गई हैं। मामले को गंभीरता से लेते हुए विभाग ने रोग की पहचान व उपचार के लिए फारेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट (एफआरआई) देहरादून के वैज्ञानिकों को देवता रेंज आमंत्रित किया है।

110	14	दिसम्बर 17, 2006	दैनिक जागरण	नैनीताल बांज व रानीखेत चीड़ सेंचुरी घोषित होंगे	जेव विविधता की दृष्टि से अस्कोट व मसूरी की तरह ाीघ्र ही नैनीताल को बांज (ओक) सेंचुरी व रानीखेत को चीड़ (पाइन) सेंचुरी घोषित किया जायेगा। फारेस्ट आफ इंण्डिया ने इसका सर्वे कर प्रस्ताव केन्द्र को भेज दिया है। नैनीताल नगर क्षेत्र में पूरे उत्तरांचल के बांज वनों की अपेक्षा काफी विविधता पायी जाती है। सर्वे के अनुसार रानीखेत क्षेत्र में चीड़ वनों को उत्कृष्ट पाया गया है। इस विविधता व उत्कृष्टता को संरक्षण दिये जाने को इन्हें सेंचुरी घोषित किया जाना है। नैनीताल नगर में बांज की पांच प्रजातियां विस्तृत क्षेत्र में पायी जाती है जिनमें बांज, खंरसू, तिलौंज, रियांज व फल्याट ाामिल हैं। नैनीताल क्षेत्र में बांज वनों की वोिषता यह है कि यहां सामान रूप से इसकी प्रजातियां मिल जाती हैं जबकि अन्य बांज वनों में इसकी प्रजातियां अलग–अलग ऊंचाईयों में पायी जाती है। अन्य वनों में तिलौंज व खंरसू सबसे अधिक ऊंचाई में जबकि रियांज बांज मध्यवर्ती क्षेत्रों में पाया जाता है। नैनीताल के इन वनों को सेंचुरी घोषित करने की कवायद चल रही है। इसी तरह रानीखेत में की गई सर्वे के अनुसार इस क्षेत्र के चीड़ जंगलों में उत्कृष्टता पायी गयी है। ऊंचे व काफी गोलाई के चीड़ दरख्त पाये जाते है। सर्वे के मुताबिक नैनीताल को बांज सेंचुरी व रानीखेत को पाइन सेंचुरी घोषित करने के लिए वन एवं पर्यावरण मंत्रालय में कार्रवाई चल रही है।
111	15	अप्रैल 3, 2007	अमर उजाला	मौसम का मिजाज, बिन बारिश बाढ़	हिमालय की ऊंची चोटियों पर इस बार हुई भारी बर्फबारी से गर्मियों में हिमालय क्षेत्रा से निकलने वाली नदियों के जलस्तर में वृद्धि की आशंका जाहिर की गई है। वैज्ञानिकों का कहना है कि तापमान जैसे ही 40 डिग्री से ऊपर जाएगा, बर्फ पिघलने की रफ्तार तेज हो जाएगी। यदि मानसूनी बारिश अच्छी हो गई तो बाढ़ के हालात उत्पन्न हो सकते हैं। मौसम विभाग इसरो के उपग्रहों की मदद से ग्लेशियरों के पिघलने और नदियों के जलस्तर पर अभी से पैनी निगाह रखे हुए है। मौसम वैज्ञानिकों के अनुसार इस बार मार्च के मध्य में भारी बर्फबारी होने से हिमालय के ग्लेशियरों में 11 से 15 फीट तक बर्फ जमी, लेकिन इससे तेजी से पिघल रहे ग्लेशियरों को खास लाभ नहीं हो रहा है। जाने माने ग्लेशियर वैज्ञानिक प्रोफेसर इकबाल हुसनैन के अनुसार देर से गिरी बर्फ को क्रिस्टल स्वरूप धारण करने के लिए जरूरी समय ही नहीं मिल पाया है। इसके लिए कम से कम तीन महीने का कम तापमान का अंतराल चाहिए तभी वह क्रिस्टल में परिवर्तित होती है और ग्लेशियरों का आकार बढ़ाती है, लेकिन बर्फबारी होने के बाद से ही तापमान बढ़ना शुरू हो गया था और बर्फ धीरे–धीरे पिघलनी शुरू हो गई। राष्ट्रीय मध्यम अवधि मौसम पूर्वानुमान केंद्र के वैज्ञानिक डा0 के0के0 सिंह के अनुसार बर्फ पिघलने से बाढ़ के हालात भले ही नहीं हों, लेकिन इतना तय है कि इस बार हिमालयी नदियों में पानी खूब रहेगा भले ही बारिश कम ही क्यों न हो।

112	15	अप्रैल 5, 2007	दैनिक जागरण	उत्तराखण्ड ग्रेटअर्थक्वेक के मुहाने पर	उत्तराखण्ड राज्य ग्रेटअर्थक्वेक यानी आठ से अधिक मैग्नीट्यूड के बड़े भूकंप के मुहाने पर है। यहां पिछली एक–दो शताब्दियों में बड़े भूकंप नहीं आए हैं। तथा इस क्षेत्रा में आधा दर्जन से अधिक बड़े थ्रस्ट व फाल्ट स्थित हैं साथ ही भारतीय भूगर्भीय प्लेट के एशियाई प्लेट में धंसने से धरती के गर्भ में बड़ी मात्राा में ऊर्जा एकत्रित हो रही है। यह ऊर्जा बड़े भूकंप के रूप में कभी भी बाहर आकर भू–पटल पर तांडव मचा सकती है। डीएसटी भी इसी कारण राज्य को सर्वाधिक महत्व दे रहा है। नैनीताल स्थित भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्राालय–डीएसटी की परियोजना 'सेस्मिक नेटवर्क इन कुमाऊं हिमालया' के मुख्य परामर्शदाता प्रो0 चारू पंत ने निकट भविष्य में 'ग्रेटअर्थक्वेक' की आशंका जताते हुए कहा कि राज्य में पिछली एक–दो शताब्दियों में बड़े भूकंपों का न आना यहां गंभीर खतरे के संकेत हैं। इस कारण राज्य को भूकंप के लिहाज से सर्वाधिक संवेदनशील मानते हुए 'लाक्ड पोर्सन' इंगित कर दिया गया है। राज्य के पर्वतीय क्षेत्राों में नैनीताल से गुजरने वाला मेन बाउंड्री थ्रस्ट–एमबीडी, चमोली–मुनस्यारी–धारचूला से गुजरने वाले मेन सेंट्रल थ्रस्ट, नार्थ अल्मोड़ा थ्रस्ट, रामगढ़ थ्रस्ट व बेरीनाग थ्रस्ट जैसे कई बड़े भूगर्भीय थ्रस्ट व फाल्ट मौजूद हैं। इसके अलावा लद्दाख से ब्रह्मपुत्रा नदी के साथ–साथ मानसरोवर से गुजरते हुए आसाम तक भारतीय भू–प्लेट एशियाई प्लेट के भीतर प्रतिवर्ष छः से आठ सेमी की दर से समा रही है। इन कारणों से कई स्थानों पर धरती का 11 मिमी प्रतिवर्ष की दर से ऊपर उठना भी रिकार्ड किया जा रहा है। इस प्रक्रिया में भूगर्भ में बहुत बड़ी मात्राा में ऊर्जा एकत्रा हो रही है, जो कभी भी भूकंप के रूप में भू–पटल पर तबाही मचा सकती है।
113	15	अप्रैल 19, 2007	अमर उजाला	कहीं मिट न जाए गांवों का अस्तित्व	टिहरी बांध के जलाशय से लगी ढलानों के दरकने से आसपास के दस से अधिक गांवों को खतरा पैदा हो गया हैं। भारतीय भूगर्भीय सर्वेक्षण (जीएसआई) के सर्वे में इस बात का खुलासा किया गया है। इस रिपोर्ट से महत्वाकांक्षी टिहरी बांध परियोजना पर खतरे के बादल मंडराने लगे हैं। रिपोर्ट में ढलानों पर बसे दस गांवों में सुरक्षा उपाय करने की सिफारिश की गई है। सर्वे के अनुसार इन ढलानों में आई दरारों के कारण भागीरथी घाटी के बरोला, कंसाली, रौलाकोट, नकोट, तल्लाउप्पु, भाल्ड, बधान और हदियारी गांवों पर गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। यह सर्वे भागीरथी के दाहिने और भिलंगना नदी के बाएं किनारे पर किया गया है। सर्वे में सोड उप्पु, बालडोगी और मुंद्रा सेरा की निचली ढलानों को भी असुरक्षित बताया गया है। टिहरी बांध परियोजना ने सर्वे की रिपोर्ट सुप्रीम कोर्ट में पेा की है। 29 मार्च 2007 को हुए इस सर्वे की रिपोर्ट के बाद जीएसआई के निदेशक पी0सी0 नवानी ने कहा है कि जलाशय की परिधि पर पानी के प्रभाव का असर जानने के लिए झील को 830 मीटर तक भरना होगा। इसके लिए उन्होंने सूक्ष्म मानीटरिंग की सिफारिश की है।

114	15	मई 22, 2007	दैनिक जागरण	संकट : गोमुख का आकार घटा	गंगोत्री–गोमुख क्षेत्रा में बढ़ते वैश्विक तापमान के साथ ही मानवीय आवाजाही तथा पर्यावरण के लिए नुकसानदेह गतिविधियों के कारण उच्च हिमालयी क्षेत्रा में ग्लेशियरों पर संकट मडराने लगा है। इससे जहां नदियों का जल स्तर दिनोंदिन घट रहा है, वहीं संरक्षित सूची में शामिल जीव व वनस्पतियों के लुप्त होने की कगार पर आने से पर्यावरण असंतुलन का खतरा विकराल रूप लेने लगा है। पर्यावरण वैज्ञानिकों के मुताबिक गंगोत्री–गोमुख क्षेत्रा का आकार घटता जा रहा है। यदि समय रहते इस ओर नियंत्राण व संरक्षण को लेकर सटीक नीति न बनी तो वह दिन दूर नहीं जब ग्लेशियरों का अस्तित्व समाप्त होने के बाद देशभर में पानी के लिए त्राहि–त्राहि मच जाएगी। ऐसे में गंगा के उद्गम स्थल गोमुख क्षेत्रा की ओर पर्यटकों व पर्वतारोहियों द्वारा फैलाए जा रहे जैविक व अजैविक कूड़े करकट से भी ग्लेशियरों के साथ पर्यावरण को संतुलित बनाने में अहम भूमिका निभाने वाले दुर्लभ श्रेणी में शामिल बरड़, कस्तूरा, मौनाल, स्नो लैपर्ड, हिरन जैसे जीव–जंतुओं पर भी संकट के बादल मंडराने लगे हैं। जबकि पवित्रा भोजपत्रा कैल, देवदार, थुनेर प्रजाति के वृक्ष भी पर्यावरणीय प्रदूषण की चपेट में आने से विलुप्त होने की कगार पर पहुंच गए हैं। बहरहाल गंगोत्री–गोमुख क्षेत्रा में सैरगाह के नाम पर पर्यटकों की बढ़ती आवाजाही से धार्मिक आस्था को ठेस पहुंच रही है। साथ ही पर्यावरण के विपरीत चल रही गतिविधियों से ग्लेशियरों पर संकट मडराना भी स्वाभाविक है। ऐसे में लगभग 28 किमी0 आकार के गोमुख का मात्रा 26 किमी0 रहने तथा शेष हिस्से के तेजी से पिघलने पर पेयजल संकट के गहराने से भी इंकार नहीं किया जा सकता है।
115	15	जून 7, 2007	अमर उजाला	विदेश में फैलेगी प्रदेश के फूलों की खुशबू	प्रदेश से फूलों के निर्यात बढ़ने की संभावना बलवती हुई है। प्रदेश सरकार की ओर से विश्व की सबसे बड़ी फूलों की मंडी (हालैंड) में भेजे गए सैंपल स्वीकार कर लिए गए हैं। इससे प्रदेश में फूलों की खेती को बढ़ावा मिलने की उम्मीद है। खास बात यह है कि यह सैंपल ग्लेडुलस के हैं, जिनकी उपज इस राज्य में सबसे अधिक हो रही है। फूलों के निर्यात में प्रदेश को पिछले दो सालों में खास सफलता नहीं मिली। वर्ष 2004–2005 में 3.4 मीट्रिक टन और 3.59 लाख रूपये मूल्य का निर्यात हुआ था। वर्ष 2005–2006 में तो कुल 1.18 मीट्रिक टन और 2.1 लाख रूपये मूल्य का ही निर्यात किया जा सका। इस वर्ष यह तस्वीर बदलने की उम्मीद की जा रही है। इस समय करीब 525 हेक्टेयर में 558 मीट्रिक टन फूल उगाए जा रहे हैं और क्षेत्राफल के हिसाब से इसमें से करीब 80 प्रतिशत हिस्सेदारी ग्लेडुलस और मैरीगोल्ड की है। उत्पादन में भी इन दो किस्सों के फूलों का हिस्सा करीब 82 प्रतिशत है। शासन से मिली जानकारी के मुताबिक अब विश्व की मंडी में फूलों के बेहतर दाम मिलने की संभावना रहेगी।

116	15	जून 20, 2007	अमर उजाला	उत्तर भारत में आठ भूकंपीय फाल्ट	इस समय पूरे उत्तर भारत को भूंकपीय दृष्टि से 8 फाल्ट्स से खतरा है। ये सभी फाल्ट हिमालय, खासकर उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्राों से होकर निकल रहे हैं। आई0आई0टी0, रूड़की इंस्टीट्यूट की ओर से जारी सिस्मिक हेजार्ड इन द नार्दन इंडिया रीजन नामक रिपोर्ट में इनके विषय में भी बताया गया है, जहां पर भूकंप आने की दशा में पृथ्वी की सतह हिलने वाली है। उत्तर भारत के भूकंपीय क्षेत्रा के संदर्भ में किए गए अध्ययन की ताजा रिपोर्ट में इस बात को दर्शाया गया है कि आने वाले समय में किन किन स्थानों पर पृथ्वी की सतह हिलेगी। इनमें उत्तर भारत के दो दर्जन से अधिक स्थान हैं। इनमें दिल्ली तथा उत्तराखण्ड में नैनीताल हरिद्वार, टिहरी, देहरादून, उत्तरकाशी, धारचूला तथा पिथौरागढ़; उ0प्र0 में बिजनौर, बरेली, बुलंदशहर, सहारनपुर; हरियाणा में अंबाला, रेवाड़ी तथा रोहतक; चण्डीगढ़ के अलावा हिमाचल प्रदश के चंबा, मनाली, मंडी, शिमला प्रमुख स्थान हैं। पिछले लम्बे समय से हिमालयन रीजन की भूकंपीय स्थिति का सबसे सटीक अध्ययन करने वाले विशेषज्ञ रोजर बिल्हम हैं। उनके शोध हिमालयन सिस्मिक हेजार्ड सी साइंसेज 2001 नामक रिपोर्ट से जो निष्कर्ष निकले हैं, उनके अनुसार प्रत्येक 100 से 300 वर्ष के बीच 8 या उससे भी बड़े मैग्नीट्यूड का भूकंप आता है। यह बड़ी तबाही लाने के लिए काफी होता है। इसका समय अब आ गया है। हालांकि भूकम्प के अध्ययन में अभी तक भविष्यवाणी किए जाने जैसी खोज नहीं की गई है, लेकिन प्रो0 बिल्हन ने 24 अगस्त 2001 को जारी अपनी रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया था कि उत्तर भारत के क्षेत्रा में आठ या उससे भी अधिक तीव्रता वाला भूकंप आने वाला है। उन्होने अपने शोध में बताया कि 1905 में आए कांगड़ा भूकंप के बाद से हिमालयन क्षेत्रा में इतनी अधिक मात्राा में ऊर्जा इकट्ठी हो गई है कि उससे करीब 10 मैग्नीट्यूड का भूकंप आ सकता है।
117	15	जून 27, 2007	दैनिक जागरण	सपना हो जायेगी भंगीरे की चटनी व कुणी की खीर	परम्परागत फसलों की उपेक्षा अब पहाड़ के लोगों को मंहगी पड़ने वाली है। पर्वतीय क्षेत्राों में होने वाली चार महत्वपूर्ण फसलें खत्म होने के कगार पर पहुंच चुकी हैं। प्रदेश सरकार ने इन्हें लुप्त हो रही फसलों की श्रेणी में शामिल कर लिया है, लेकिन इन्हें बचाने के लिए अभी तक कोई पहल नहीं हो पायी है। उल्लेखनीय है कि पर्वतीय क्षेत्राो में कई फसलें अनूठी हैं। देश के कई हिस्सों में इन फसलों का उत्पादन नहीं होता। परम्परागत ढंग से उगाई जाने वाली ये फसलें पौष्टिक होने के साथ ही साथ औषधीय महत्व की भी हैं, लेकिन पिछले कुछ समय से पर्वतीय क्षेत्रा की फसलें उपेक्षा का शिकार हैं। कृषि विभाग ने इस ओर कदम उठाते हुए प्रदेश के सभी जिलों को संकटग्रस्त फसलों के सर्वेक्षण के निर्देश दिये। पिथौरागढ़ के सीमांत जिले में हुए सर्वेक्षण में यह बात सामने आई कि चार महत्वपूर्ण फसलें काकून (कुणी), लाल राजमा, भगिंरा और फाफर खत्म होने के कगार पर है। इनमें कुणी खरीफ की फसल है। इसमें चावल की तरह गोल दाने निकलते है। कुणी की खीर पर्वतीय क्षेत्राों में बेहद लोकप्रिय रही है। इसी तरह लाल राजमा आठ दस हजार फिट से अधिक की ऊंचाई पर पैदा होती है। सामान्य राजमा से छोटे आकार की लाल राजमा बेहद पौष्टिक और स्वादिष्ट है, इसी ऊंचाई पर पैदा होता है फाफर। धार्मिक दृष्टि से पवित्रा माने जाने वाला फाफर का आटा तीज प्यौहारों में उपयोग में लाया जाता है, लेकिन किसानों ने अब इसकी जगह व्यावसायिक फसलों को अधिक तवज्जो देना jरू कर दिया है। पहाड़ी भांग की चटनी मैदानों में भी लोकप्रिय है। भंगिरा से बनने वाली चटनी का स्वाद शायद निकट भविष्य में लोग नहीं ले पायेंगे क्योंकि यह भी संकटग्रस्त फसलों की श्रेणी में शामिल हो गयी है। प्रदेश के कृषि मकहमे द्वारा किये गये एक सर्वे के बाद इन्हें संकटग्रस्त फसलों की श्रेणी में शामिल किया गया है। संकटग्रस्त घोषित होने के बाद भी इनकी खेती को बढ़ावा देने के लिए फिलहाल कोई पहल नहीं हो रही है।

118	15	जुलाई 8, 2007	दैनिक जागरण	हिमालयी क्षेत्रा के लिए विकास नीति जरूरी	गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान, कोसी–कटारमल में हिमालयी क्षेत्रा के 'बायोस्फेयर रिजर्व क्षेत्रों के बेहतर प्रबंधन' पर हुई दो दिनी कार्यशाला का उद्घाटन करते हुए मुख्य अतिथि, केंद्रीय पर्यावरण व वन मंत्राालय के अतिरिक्त सचिव बी0एस0 परसीरा ने कहा कि हिमालयी क्षेत्रा सबसे अधिक संवेदनशील होने के नाते इस क्षेत्र में स्थित 10 जैवमंडलों के वैश्विक बदलाव एवं मानव गतिविधियों के मद्देनजर विकास नीति बनाने की जरूरत है। उन्होंने कहा कि हिमालयी बायोस्फेयर रिजर्व जल प्रवाह व ईको टूरिज्म की दृष्टि से भी अद्वितीय है। तथा जैव व मानव केंद्रित प्रयासों के गठजोड़ से जैवमंडल क्षेत्रों के लिए स्थायी विकास का माडल तैयार करना है। इस मौके पर उन्होंने संस्थान एवं वन विभाग सिक्किम एवं आसाम द्वारा संयुक्त रूप से विकसित कंचनजंगा एवं पनास बायोस्फेयर रिजर्व को यूनेस्को के मानव एवं जैवमंडल कार्यक्रम में शामिल करने हेतु विभिन्न रिपोर्टों का भी विमोचन किया।
119	15	अगस्त 23, 2007	दैनिक जागरण	ग्लेशियरों के पिघलने की गति चिंताजनक नहीं	ग्लेशियर पिघलना एक सामान्य प्रक्रिया है। भारतीय भू सर्वेक्षण विभाग के उप महानिदेशक और हिम विज्ञानी डा0 दीपक श्रीवास्तव का कहना है कि हिमालयी क्षेत्रा में ग्लेशियरों के पिघलने की गति किसी भी स्थिति में चिंताजनक नहीं है। करोड़ों सालों से ग्लेशियरों का बनना और पिघलना जारी है। उन्होंने कहा कि सदैव से पिघलते आ रहे ग्लेशियरों के कारण ही गंगा एवं अन्य नदियों में पानी आ रहा है। ग्लेशियर यदि नहीं पिघलेंगे तो ज्यादा नुकसान होगा। वर्तमान इंटर ग्लेशियर काल है। दो हिमयुग के बीच इंटर ग्लेशियर काल आता है। एक युग का समय करोड़ों साल होता है। 25 किमी लंबे गंगोत्री ग्लेशियर के 17 मीटर पीछे खिसकने के संदर्भ में उन्होंने कहा कि यह स्थिति एक दो वर्ष नहीं वरन कई वर्षो की औसत गति के बाद आयी है, जिसे चिंताजनक नहीं कहा जा सकता है। ग्लेशियर के पीछे खिसकने की गति कभी कम होती है तो कभी अपेक्षाकृत ज्यादा होती है। केदारनाथ धाम के पीछे लगभग 7 किमी लंबा चोरवाडी ग्लेशियर 7–8 मीटर पीछे गया है। बांयी ओर से इसके साथ मिल रहे लगभग 9 किमी लंबे कम्पेनियन ग्लेशियर के पिघलने की गति ना के बराबर है। पिछले 35 सालों से ग्लेशियर पर अनुसंधान कार्य कर रहे हिम विज्ञानी डा0 दीपक श्रीवास्तव इस बात से पूरी तरह नाइत्तिफाक रखते हैं कि ग्लेशियर के पिघलने से कोई संकट आने वाला है।
120	15	अगस्त 24, 2007	दैनिक जागरण	जीव व पौधे का अनोखा मेल है यार्सा गम्बो	तीन से साढ़े चार हजार मीटर की ऊंचाई वाले हिमालयी क्षेत्रा में पायी जाने वाली इस कीड़ा जड़ी का वैज्ञानिक नाम कार्डइसिपस सिनेसिइस है। तिब्बत में इसे यार्सा गम्बो के नाम से जाना जाता है। जीव और पौधे के अनोखे मेल इस कीड़ा–जड़ी में, कार्डइसिपस सिनेसिइस पौधे का जन्म हैपीएलम वीरेसिनम जंतु के लार्वा के सिर पर होता है। इस जड़ी की जानकारी रखने वाले बताते हैं कि यार्सा गम्बो बर्फ में रहने वाले कीड़े का परिवर्तित रूप है। यह कीड़ा बर्फ पिघलने के बाद जमीन के नीचे चला जाता है और कुछ समय बाद इस कीड़े के सिर पर लगभग चार इंच पत्तीनुमा घास निकल आती है। तिब्बत और चीन की देसी चिकित्सा पद्धति में यार्सा गम्बो का काफी समय से उपयोग होता रहा है। वर्तमान में भारत में रक्षा कृषि अनुसंधान इकाई इस पर शोध कर रही है। प्रारम्भिक चरणों में इसके शक्तिवर्द्धक होने की बात साबित हो चुकी है।

121	15	नवम्बर 4, 2007	दैनिक जागरण	सेब उद्यान की तरह होगा हर्बल गार्डन का विकास	हिमालयी क्षेत्रों में पाए जाने वाली बहुमूल्य जड़ी–बूटियों के संरक्षण व संवर्धन के लिए सेब उद्यान की तर्ज पर चौबटिया में हर्बल गार्डन की स्थापना की जा रही है। इस उद्यान में विभिन्न प्रजातियों की दुर्लभ हिमालयी जड़ी–बूटियों का रोपण किया जाएगा। चौबटिया में एक हेक्टेयर भूमि में जल्द ही हाईटेक हर्बल गार्डन की स्थापना की जा रही है। इसका मुख्य उद्देय हिमालयी क्षेत्रा में पाये जाने वाली एक वर्षीय, बहु वर्षीय जड़ी–बूटियों का रोपण करना है। इसके जरिए जड़ी–बूटियों के बारे में वैज्ञानिक जानकारी, उपयोगिता आदि आम काश्तकारों तक पहुंचाई जाएगी। इसके अलावा जड़ी–बूटियों का बीज पौध उत्पादन, कृषकों को प्रशिक्षण आदि का कार्य भी किया जाएगा। इससे काश्तकार को इन जड़ी–बूटियों का सही प्रकार से उत्पादन कर आर्थिक लाभ मिलना संभव हो सकेगा। हर्बल गार्डन में जड़ी–बूटियों पर शोध कार्य भी किए जाएंगे। जिसके अन्तर्गत हिमालयी जड़ी–बूटियों की कृषि तकनीक विकसित की जाएगी। इसका सीधा लाभ स्थानीय किसानों को मिलेगा। हर्बल गार्डन का उद्देश्य सेब उद्यान की तरह पर्यटकों को आकर्षित कर पर्यटन व्यवसाय को बढ़ावा देना भी है।
122	15	नवम्बर 15, 2007	अमर उजाला	चिरायता का अस्तित्व संकट मे	अंधाधुंध दोहन के चलते छह से आठ हजार फिट उच्च हिमालयी क्षेत्राों पर होने वाली चिरायता नाम की जड़ी बूटी लुप्त होने के कगार पर पहुंच गयी है। बुखार, मलेरिया रोग के निदान, बलवर्धक आदि के काम आने वाली चिरायता नाम की जड़ी बूटी का इस्तेमाल सालों से होता आ रहा है। यह विशिष्ट औषधि उच्च हिमालयी क्षेत्राों में पायी जाती है। लेकिन इस बीच इसके अंधाधुंध दोहन से यह जंगलों से गायब होने लगा है। हिमालयी क्षेत्रा में वन विभाग की आंखों में धूल झोंककर जड़ी बूटियों के तस्कर इस वन संपदा को लूट रहे हैं। इस कारण इसके अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लग गया है।
123	15	नवम्बर 22, 2007	अमर उजाला	अल्मोड़ा में खुलेगा पक्षी प्रजनन केंद्र	हिमालयी इलाके में चार हजार से 10 हजार फीट तक की ऊंचाई में पाया जाने वाला खूबसूरत पक्षी चीड़ फीजेंड लुप्त होने के कगार पर है। इस प्रजाति को बचाने के लिए अब इसका प्रजनन केंद्र खोलने का फैसला हुआ है। अनुकूल जलवायु देखते हुए अल्मोड़ा में यह केंद्र स्थापित किया जाना है। केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण ने इसे मंजूरी दे दी है। उत्तराखण्ड में चीड़ फीजेंड का यह पहला प्रजनन केंद्र होगा। चीड़ फीजेंड (कैटरिअस वालिची) हिमालयी क्षेत्रा में चार हजार से 10 हजार फीट तक की ऊंचाई पर जंगलों में पाया जाता है। इस पक्षी की तादाद लगातार घट रही है। इनके संवर्धन के लिए केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण ने अल्मोड़ा में प्रजनन केंद्र खोलने का निर्णय लिया है। इस सिलसिले में अल्मोड़ा के प्रभागीय वनाधिकारी ए0के0 त्रिापाठी दो अन्य वन अधिकारियों के साथ हिमाचल प्रदेश के चैल में स्थित प्रजनन केंद्र का अध्ययन करके लौट आए हैं। अल्मोड़ा मृग विहार के एक भाग में प्रजनन केंद्र खोला जाएगा व प्रजनन केंद्र का प्रारूप जल्द ही केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण को भेजा जाएगा। हिमाचल प्रदेश से चीड़ फीजेंट के जोड़े लाकर प्रजनन केंद्र स्थापित किया जाएगा। प्रजनन केंद्र में उत्पन्न होने वाले चीड़ फीजेंट को वनों में छोड़ा जाएगा, ताकि इस लुप्त प्रायः पक्षी का अस्तित्व बना रह सके।

124	15	नवम्बर 22, 2007	अमर उजाला	लद्दाख में अठखेलियां करता था समंदर	एडवेंचर के शौकीनों की पसंद लद्दाख में जहां बर्फ का साम्राज्य है, वहां कभी सागर लहराता था। वाडिया हिमालयन भू–विज्ञान संस्थान देहरादून और बीरबल साहनी पेलियो बॉटनी रिसर्च इंस्टीट्यूट लखनऊ के संयुक्त अध्ययन में यह साबित हुआ है। यहां 33 से 45 मिलियन साल पहले की अवधि के पाम ट्री के फासिल्स मिले हैं। तटीय इलाकों की तरह ये पाम ट्री यहां की खूबसूरती बढ़ाते थे। सात साल से ज्यादा समयावधि के अध्ययन में सामने आया कि आज बर्फीले रेगिस्तान में तब्दील हो चुका लद्दाख तब आज जितनी ऊंचाई यानी, समुद्र तल से 5000 मीटर पर नहीं था। 'स्ट्रक्चरल डिफॉरमेशन ऑफ इंटीरियर अर्थ' प्रोजेक्ट के तहत जम्मू–कश्मीर में वैज्ञानिक दल को पूर्वी लद्दाख क्षेत्रा में सोकर के निकट प्लांट फॉसिल्स (पौधों के जीवाश्म) का सेट मिला। यही निष्कर्ष का आधार बना। जमीनी रहस्य उजागर करने के लिए शुरू हुए प्रोजेक्ट में शामिल बीरबल साहनी पेलियो बॉटनी इंस्टीटयूट के पांच वैज्ञानिकों की टीम का नेतृत्व वाडिया हिमालयन भू–विज्ञान संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिक डा0 एस0के0 पाल ने किया। डा0 पॉल के मुताबिक पाम ट्री की उपस्थिति साबित करती है कि 'मिडिल लेट ई–ओशीन पीरियड' में वाकई पाम उस क्षेत्रा में था। प्रोजेक्ट के तहत जमीन के भीतरी रहस्य जाने जा रहे हैं। अन्य विदेशी वैज्ञानिक भी नए तथ्यों के सामने आने के बाद प्रोजेक्ट में दिलचस्पी ले रहे हैं। लिहाजा, काफी रहस्यों से परदा उठ सकता हैं।
125	15	नवम्बर 26, 2007	अमर उजाला	खटाई में पड़ी बांध बनाने की योजना	कोसी नदी में बर्शिमी नामक स्थान पर बांध बनाने को सिंचाई विभाग द्वारा सर्वे के लिएशासन को 97 लाख रूपये का प्रस्ताव भेजा गया है, लेकिन पांच माह बाद भी इसे स्वीकृति नहीं मिल सकी है। इससे बांध बनाने का काम अधर में लटका हुआ है। उल्लेखनीय है कि नगर तथा आसपास के क्षेत्रों की पेयजल समस्या के मद्देनजर कोसी नदी में पिछले काफी समय से बांध बनाने की मांग की जा रही है। इससे जहां अल्मोड़ा का पर्यटन की दृष्टि से विकास होता वहीं स्थानीय लोगों को रोजगार के अवसर मिलते और मछली पालन को भी बढ़ावा मिलता। बांध से बिजली उत्पादन भी किया जा सकता है। प्रदेश के पेयजल मंत्री भी पूर्व में प्रस्तावित बांध स्थल बर्शिमी का निरीक्षण कर चुके हैं। उन्होंने विभाग को इसकी कार्ययोजना बनाकर शासन को भेजने के निर्देश दिए थे। सिंचाई विभाग ने बांध के सर्वे के लिए 97 लाख का प्रस्ताव बनाकर शासन को पांच माह पूर्व भेज दिया है। जिसे अभी तक मंजूरी नहीं मिली है। सर्वे के तहत बर्शिमी से प्रस्तावित डूब क्षेत्रा मटेला तक का भूगर्भीय सर्वेक्षण, सुरंग खोदना, राक की जांच, बांध स्थल तक रास्ता निर्माण, स्टाफ के रहने के लिए भवन बनाना आदि कार्य किए जाएंगे। बांध की ऊंचाई 60 मीटर होने पर यहां विद्युत उत्पादन भी किया जा सकता है। सिंचाई विभाग के अधिशासी अभियन्ता ने बताया कि विभाग द्वारा बर्शिमी में प्रस्तावित बांध क्षेत्रा का अक्टूबर 2006 में भारत सरकार के भूगर्भीय वैज्ञानिकों से सर्वेक्षण कराया गया था। इस स्थल को वैज्ञानिकों ने बांध के लिए उपयुक्त बताया है।

126	15	दिसम्बर 7, 2007	दैनिक जागरण	मोनाल व कस्तूरा पंहुचे मध्य हिमालयी भूभाग में	प्रदेश के राजकीय पशु कस्तूरा और राजकीय पक्षी मोनाल भारी हिमपात के चलते उच्च हिमालयी भूभाग से मध्य हिमालय की ओर रूख कर चुके हैं। शीतकाल मध्य हिमालय में बिताने के बाद दोनों अपने पसंदीदा स्थल उच्च हिमालय रवाना होंगे। उत्तराखण्ड के राजकीय पशु और पक्षी कस्तूरा और मोनाल उच्च हिमालयी जंतु हैं। हिमरेखा के निकट रहने वाले इन दोनों को शीतकाल में मध्य हिमालय की 10 हजार फीट ऊंचाई पर चोटियों तक आना पड़ता है। दिसम्बर से लेकर मध्य मार्च तक का समय दोनों मध्य हिमालय में ही गुजारते हैं। पिछले कुछ वर्षों में हिमपात देर से होने के कारण मोनाल और कस्तूरा देर से मध्य हिमालय की ओर आते थे। इस बार दिसम्बर की शुरूआत में ही उच्च और मध्य हिमालय की ऊंची चोटियों पर भारी हिमपात होने के कारण इन दुर्लभ पशु–पक्षियों को दिसम्बर के शुरू में ही नीचे आना पड़ा है। कस्तूरा और मोनाल मुनस्यारी के मल्ला जोहरी और धारचूला के दारमा, ब्यास घाटियों में पाये जाते हैं। जहां पर बर्फ गिर कर जमती है उसी के आसपास दोनों डेरा डालते हैं। जानकारों के अनुसार दोनों का आव्रजन काल उनके जीवन के लिए खतरे का समय होता है। हिमालयी मोर कहा जाने वाला मोनाल अपने खूबसूरत पंखों और कस्तूरा नाभि में कस्तूरी के लिए प्रसिद्ध है। प्रकृति चक्र के अनुसार इन दोनों को साल में दो बार नीचे आना जाना पड़ता है। इसी दौरान ये शिकारियों के निशाने पर रहते हैं।
127	15	दिसम्बर 9, 2007	दैनिक जागरण	तीन पत्तियां खाओ, शुगर फुर्र	गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर के वैज्ञानिकों की कवायद सफल रही तो आने वाले दिनों में मधुमेह रोगियों को अंग्रेजी दवाओं और इंसुलिन के झंझट से मुक्ति मिल सकेगी। विकल्प के रूप में ऐसे पौधे पर शोध शुरू हुआ है जो डायबिटिक मरीजों के लिए कारगर है। पौधे की तीन पत्तियों का रोजाना सेवन करने से इंसुलिन लेने की जरूरत नहीं पड़ेगी। पौधे को नाम दिया गया है ''इंसुलिन प्लांट''। शाकीय कुल का यह पौधा दक्षिण भारत के गरम और नम स्थानों में पाया जाता है। पुदीने की तरह चिर हरित पौधे को वहां की जनजातियां शुगर रोग से मुक्ति के लिए बरसों से इस्तेमाल कर रही हैं। बुखार के बाद हुई कमजोरी को दूर करने के लिए भी इसकी जडों को टॉनिक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसका फूल पीला आता है। गरम जलवायु के इस पौधे को फरवरी–मार्च में रोपा जा सकता है।
128	15	दिसम्बर 10, 2007	दैनिक जागरण	शीतकाल में फिर संकट में आई गोल्डन महाशीर	विलुप्त होने के कगार पर पहुंच चुकी महाशीर मछली एक बार फिर शीतकाल शुरू होते ही संकट में आ गई है। इसके संकटग्रस्त होने का मुख्य कारण जाडों में बर्फीले पानी से बचने के लिये बड़ी नदियों से छोटी नदियों की तरफ रूख करना है। कम जल स्तर की ओर आने वाली महाशीर मछलियों में से 95 प्रतिशत मछलियों का अवैध शिकार हो जाता है जबकि शेष पोचिंग के कारण मर जाती हैं। 'कोल्ड वाटर फिशेज' की श्रेणी में आने वाली गोल्डन महाशीर (टारपिट्टूटोरा) मुख्य रूप से उत्तराखण्ड की नदियों में पाई जाती है। जिनमें पिथौरागढ़ जनपद की काली नदी मुख्य है। मछली पर संकट का मुख्य कारण डायनामाइट विस्फोट से अवैध शिकार, डैम निर्माण, तथा छोटी नदियों में ब्लीचिंग पाउडर का प्रयोग प्रमुख है। इसके अतिरिक्त शीतकाल में गर्म स्त्रोतों की ओर जाने की प्रवृति ने भी महाशीर को खतरे में डाल दिया है। पांच से बीस किलो वजनी महाशीर मछली ीतकाल शुरू होते ही गर्म पानी वाली नदियों की ओर रूख करने लगती हैं। इन नदियों की ओर आना ही इस मछली के लिये संकट का कारण बन जाता है। कम जल स्तर की नदियों में पहुंचते ही यह शिकारियों का निशाना बन जाती हैं। इन तमाम कारणों से महाशीर प्रजाति की कई मछलियां विलुप्त हो चुकी हैं।

129	15	दिसम्बर 14, 2007	दैनिक जागरण	उगते ही बिक जाएंगी उत्तराखण्ड की जड़ियां	जड़ी–बूटी प्रदेश के नाम से प्रचारित उत्तराखण्ड में प्राकृतिक रूप से मिलने वाली जड़ी–बूटियों का भंडार मौजूद है। इनका दोहन पहले से ही औषधीय उत्पादों के लिए किया जा रहा है, पर यह कम ही लोग जानते हैं कि यहां की जमीन और आबोहवा कई देशी व विदेशी प्रजातियों की जड़ी–बूटियों की खेती के लिए मुफीद है। इसे ध्यान में रखते हुए सेंटर फार एरोमेटिक प्लांट (कैप) सेलाकुई की एक महत्वाकांक्षी योजना अंतिम चरण में है। इस योजना के तहत किसानों को जड़ी–बूटियों की खेती के लिए बीज, प्रंसस्करण केंद्र, ग्रेडिंग प्रयोगशाला और विपणन की सुविधा एक ही छत के नीचे मौजूद रहेगी। प्रसंस्करण यूनिट लगाने के लिए कैप ने अमेरिकी तकनीक पर आधारित सुपर क्रिटिकल फ्लूइड एक्सट्रैक्शन (एससीएफई) यूनिट के लिए केंद्रीय कामर्स मंत्रालय से लगभग तीन करोड़ रूपए की सहायता प्राप्त करने में सफलता पा ली है। अगले वर्ष तक शुरू होने वाली इस यूनिट को सेलाकुई में स्थापित किया जाएगा। अपनी तरह की इस अत्याधुनिक तकनीक की सहायता से शत–प्रतिशत शुद्धता से जड़ी बूटियों का प्रसंस्करण कर औषधि तेल प्राप्त किया जाएगा। इसके अलावा कैप की विश्व स्तरीय प्रयोगशालाओं में प्रसंस्कारित तेल की ग्रेडिंग भी की जाएगी। दूसरी समस्या विपणन के लिए भी पुख्ता इंतजाम कर लिए गए हैं। तैयार तेल को खरीदने के लिए इंडिया ग्लाइकोल लिमिटेड (आईजीएल) के साथ समझौता भी किया गया है। एससीएफई तकनीक व विपणन के लिए आईजीएल से लगभग 32 करोड़ रूपए का समझौता किया गया है। उत्पादित तेल सीधा आईजीएल को चला जाएगा। लिहाजा किसान को केवल जड़ी बूटियों की खेती करनी है। सचिव उद्यान ने बताया कि अमेरिकी तकनीक पर आधारित प्रसंस्करण केंद्र अगले वर्ष के अंतिम सप्ताह तक काम शुरू कर देगा। कैप के माध्यम से किसानों से एक वर्ष में 80 टन अर्टीमीशिया, 50 टन स्टीविया व अन्य जड़ी बूटियों का उत्पादन कराया जा रहा है। स्थापित किए जा रहे केंद्र ने किसानों की इस समस्या का समाधान तो किया ही है ग्रेडिंग व विपणन की समस्या भी दूर कर दी है। इसके अलावा सगंध पौधों के प्रसंस्करण के लिए पूरे राज्य में लगभग 27 आसवन केंद्र बनाए जा चुके हैं। जड़ी–बूटी के लिए फिलहाल कोई केंद्र नहीं था।

130	15	दिसम्बर 17, 2007	दैनिक जागरण	हाथियों के मूवमेंट का तैयार होगा मानचित्र	वन्य जीव वैज्ञानिक की मेहनत सफल हुई तो आने वाले दिनों में हाथियों के मूवमेंट की जानकारी लगाकर उनके महत्वपूर्ण गलियारे को जानने के बाद उसका नक्शा तैयार किया जा सकेगा। नक्शा हाथियों के चलने की दूरी, किन क्षेत्रों में उनका प्रवास और कौन–कौन से मौसम में वह कहां भ्रमण कर रहे हैं, यह सब जानना आसान हो जायेगा। फिलहाल राजाजी के चीला और हरिद्वार रेंज में इस कवायद को वन्य जीव वैज्ञानिक शुरू करने जा रहे हैं। आधुनिक तकनीक की जीपीएस के द्वारा यह सब संभव होगा। हाथियों के मूवमेंट को लेकर देश के कई वैज्ञानिक कार्य कर रहे हैं लेकिन उनके मूवमेंट की सही स्थिति की जानकारी के लिए अभी तक कोई ठोस प्रमाण नहीं मिल पाया है। हाथियों की जहां साइटिंग हो रही है, उसे ही मूवमेंट बताया जा रहा है। जिससे हाथी के गलियारों का अध्ययन काफी हद तक सटीक तरीके से जंगलात के अधिकारी और वनकर्मी नहीं कर पा रहे हैं। अब वन्य जीव वैज्ञानिक राजाजी के चीला रेंज और हरिद्वार रेंज में आधुनिक तकनीक से युक्त जीपीएस से हाथियों के मूवमेंट को लेने की कवायद में जुटें है। जीपीएस की इस तकनीक के तहत पहली बार हाथियों के भ्रमण क्षेत्रा के बारे में सही जानकारी जुटाई जाएगी। जब यह जानकारी पूरी हो जाएगी तो इसका एक नक्शा तैयार होगा, जिसमें हाथियों के मूवमेंट को दर्शाया जाएगा। इस विधि से एक फायदा यह भी मिलने वाला है कि हाथियों का मूवमेंट किन–किन मौसम में किस ओर होता है, यह जानना आसान होगा। इसके अलावा जो महत्वपूर्ण जानकारी पता चलेगी उसमें हाथियों के मूवमेंट का किलोमीटर जाना जा सकता है। यदि वह नदी, जंगल या कहीं और प्रवास कर रहे हैं तो वह भी जाना जा सकेगा। तकनीक से रात्रिा भ्रमण की जानकारी लेना भी अब आसान होगा। वन्य जीव वैज्ञानिक डा0 रितेश जोशी ने बताया कि हालांकि यह बेहद कठिन और मेहनत से भरा काम है, बावजूद चीला रेंज में इस कार्य को शुरू किया जा रहा है। उन्होने बताया कि जब हाथियों के मूवमेंट की ठोस जानकारी लग जाएगी तो रेंज के नक्शे पर इसे रख दिया जाएगा। जो एलीफेंट मूवमेंट के लिए मील का पत्थर साबित होगा। उन्होंने बताया कि हाथियों की समुद्र तल से ऊंचाई मापी जा सकेगी। यानि इससे यह भी पता चलेगा कि किस समय हाथी कितनी ऊंचाई से आवागमन कर रहे हैं।

131	15	दिसम्बर 27, 2007	अमर उजाला	वर्ल्ड हेरिटेज में चमकेगा सबसे बुजुर्ग चिनार	मुगलकाल के राजशाही पेड़ चिनार की चमक रियासत में आज भी बरकरार है। इस चमक को दुनियां के सामने और बढ़ाने जा रहा है एक सबसे बुजुर्ग चिनार। कश्मीर के बड़गाम जिले के छतरगाम में मौजूद इस चिनार को दुनिया में सबसे ज्यादा पुराना होने का दावा संयुक्त राष्ट्र के सामने होने जा रहा है। मकसद वर्ल्ड हेरिटेज की लिस्ट में इसको शामिल कराने का है। कश्मीर की पहचान बन गए चिनार को सैकड़ों साल पहले मुगल शासकों ने घाटी में रोपा था। तबसे चिनार के दरख्त, पत्तियां और इसकी छांव ने अपनी पहचान कायम रखी है। सात सौ साल पुराने इस पेड़ के तने की परिधि 31.85 मीटर तथा पेड़ की ऊंचाई 14.78 मीटर है। रियासत के प्रसिद्ध पर्यावरण विद् मुहम्मद सुलतान वादू अपनी किताब 'द ट्री ऑफ आवर हेरिटेज' में सालों पहले ही इसके दुनिया का सबसे पुराना चिनार होने का दावा कर चुके हैं। चिनार की प्रमाणिक उम्र के लिए 'कार्बन डेटिंग' तकनीक का सहारा लिया जाएगा। इस तकनीक में चिनार के पौधे का थोड़ा हिस्सा लेकर प्रयोगशाला में कार्बन क्षरण की दर देखकर उम्र का पता चल जाएगा। इसके लिए राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान की मदद ली जाएगी। रियासत में एक तरफ सात ातक पुराना राजशाही पौधा अपनी नई पहचान बनाने जा रहा है वहीं मुगलकाल में कमीर में लगे चिनार के पेड़ पिछले तीन दशक में कम हो रहे हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार तीस हजार से ज्यादा पेड़ काट दिए गए हैं। सन् 1976 में राज्य में करीब 42000 चिनार के पेड़ थे, जो अब घटकर मात्रा 16000 रह गए हैं। चिनार विकास प्राधिकरण घाटी में चिनार के पौधे मुफ्त में बांट रहा है।
132	16	फरवरी 5, 2008	दैनिक जागरण	बदले मौसम चक्र के साथ लहलहाएंगी फसलें	मौसम के बदले मिजाज के हिसाब से ही अब फसलें मौसम चक्र को मात देते हुए लहलहाएंगी। बदले मौसम की चाल भांपकर फसलों की बर्बादी रोकने के लिए हथियार होगा नया मौसम चक्र। इस नई पहल को मूर्त रूप देने के लिए पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय ने चुनिंदा 31 कृषि वैज्ञानिकों की टॉस्क फोर्स तैयार कर ली है। उन प्रमुख बिन्दुओं को भी तय कर लिया गया है, जिन पर शोध व सर्वेक्षण किया जाना है। मौसम पर आधारित फसल–चक्र तैयार करने की दिशा में देश भर के कृषि विश्वविद्यालयों में पंतनगर विश्वविद्यालय का यह पहला कदम बताया जा रहा है। समय पर बरसात न होने, दिन में गर्मी और रात में सर्दी, कहीं–कहीं बेमौसमी बेहिसाब पाला पड़ने , फसली रोग आदि लगने से आम आदमी को आर्थिक क्षति तो है ही, स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव पड़ रहा है। फल और सब्जियां तो इससे जबरदस्त प्रभावित हो रही हैं। टास्क फोर्स में मौनपालन, बीज, मत्स्य, पशु चिकित्सा, फसल और फल अनुसंधान, जल संरक्षण एवं प्रबंधन समेत विभिन्न क्षेत्रों के वैज्ञानिकों को शामिल किया गया है। वातावरण में क्या परिवर्तन हो रहे हैं, कितना और कितनी तीव्रता से फर्क आ रहा है, इससे कृषि, जानवरों, प्लांटेशन, प्रजनन, पोषण, आपूर्ति, सरवाइवल व उत्पादकता पर असर, वातावरण को नियंत्रित करने के उपाय, नया फसल चक्र क्या हो, कौन सी प्रजातियां विकसित हों, जल संरक्षण और संवर्धन कैसे हो, आदि बिंदुओं पर टॉस्क फोर्स काम करेगी। हिमालयी राज्यों के साथ ही मैदानी क्षेत्रों में भी शोध और सर्वेक्षण बारीकी से होगा।

133	16	फरवरी 9, 2008	दैनिक जागरण	बासमती के बाद अब महकेगा जैविक धनियां	प्रदेश में ऑरगेनिक पैकेज की कवायद तेज हो गई है। बासमती व गन्ने के बाद अब तराई में जैविक धनिया 'कोरियंडर सटाइवस' भी महक बिखेरेगा। तीन साल के शोध के बाद इसका प्रामाणिक बीज तैयार कर सफल प्रयोग कर लिया गया है। फिलहाल इसकी पौध 15 एकड़ क्षेत्राफल में लहलहा रही है। खास बात यह है कि किसानों को इसके दाम आम धनिये की तुलना में ज्यादा मिलेंगे। बाजार भाव चढ़ा तो उन्हें 20 प्रतिशत प्रीमियम का लाभ भी मिलेगा। यदि कृषि विशेषज्ञों का मिशन कामयाब रहा तो आने वाले दौर में मिट्टी की घटती ताकत को बढ़ाया भी जा सकता है। इस योजना को मूर्त रूप देने को गत वर्ष जैविक उत्पाद परिषद् की पहल पर राज्य के विभिन्न जिलों में किसानों का फेडरेशन तैयार किया गया। शुरूआत हुई जैविक बासमती से। इसके बाद कृषि विभाग व जैविक उत्पाद परिषद् के संयुक्त प्रयासों से जैविक गन्ने के क्षेत्रा में भी कदम रखा गया। बहरहाल बासमती व गन्ने के बाद अब जैविक धनिया भी उगा लिया गया है। हालांकि यह 15 एकड़ भूमि में ही लगाया गया है, मगर इसका प्रामाणिक बीज तैयार होने के बाद कृषि विशेषज्ञों की बांछें खिल उठी हैं।
134	16	फरवरी 26, 2008	दैनिक जागरण	अब उत्तर भारत के हाथियों को भी भाया यूकेलिप्टस	अब तक दक्षिण भारत के ही हाथी यूकेलिप्टस खाते थे, लेकिन अब उत्तर भारत के हाथी भी यूकेलिप्टस खा रहे हैं। हरिद्वार वन प्रभाग व राजाजी नेशनल पार्क के हालिया अध्ययन में वैज्ञानिकों ने पाया कि यहां कुछ नर हाथी यूकेलिप्टस को बड़े चाव से खा रहे हैं। हालांकि यह प्रारम्भिक आंकड़े हैं, लेकिन वैज्ञानिकों ने इस पर अपना ध्यान केंद्रित कर दिया है। यूकेनिप्टस में पानी की मात्राा अधिक होती है, लिहाजा प्यास मिटाने के लिए बेहद उपयोगी माना जाता है। पिछले वर्ष हरिद्वार वन प्रभाग के श्यामपुर रेंज की अंजनी बीट में नर हाथियों को यूकेलिप्टस की छाल खाते देखा गया, जिसके चलते वैज्ञानिकों ने इन पर विशेष नजर रखनी शुरू कर दी। वन्य जीव वैज्ञानिक डा0 रितेश जोशी को राजाजी की चीला रेंज के मुंडाल में नर हाथी यूकेलिप्टस की छाल खाते दिखाई दिए। फिलहाल अभी इस तरह के दो हाथियों को चिन्हित किया गया है। डा0 जोशी बताते हैं कि इससे पहले राजाजी में हाथी, कुल 53 प्रजातियों को भोजन के रूप में इस्तेमाल करते थे। उसके बाद सागौन, जिसे हाथी कभी पसंद नहीं करता था, 2002 के बाद उसे भी भोजन के रूप में प्रयोग करने लगा। दरअसल सागौन में भी पानी की काफी मात्राा होती है।
135	16	मार्च 17, 2008	अमर उजाला	भारत के लिए खतरे की घंटी	यूनाइटेड नेशन इनवायरमेंट प्रोग्राम (यूएनइपी) ने चेतावनी दी है कि हिमालय पर्वत श्रृंखला पर ग्लेशियरों का संकुचन भारत के लिए कई समस्याएं पैदा कर सकता है। इसके कारण खेती से लेकर ऊर्जा उत्पादन और शीतकालीन खेलों पर भी बुरा असर पड़ सकता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि विश्व भर के ग्लेशियर बहुत तेजी से संकुचित हो रहे हैं और अगर यही रफ्तार रही तो कुछ दशकों में इनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। नौ पर्वत श्रृखंलाओं के 30 ग्लेशियरों के अध्ययन के बाद यह पता चला कि इनके पिघलने और क्षीण होने की रफ्तार वर्ष 2006 में सबसे अधिक थी। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि भारत की नदियों में हिमालय श्रृखंला के ग्लेशियर से पानी आता है और अमेरिका के पूर्व कछार को रॉकी पर्वत से पानी की आपूर्ति होती है।

136	16	मार्च 22, 2008	अमर उजाला	विलुप्त हो रहे पीपल, बरगद के पेड़	हिंदू धर्म में धार्मिक महत्व से पूजे जाने वाले पीपल और बरगद (वटवृक्ष) के पेड़ धीरे–धीरे विलुप्ति के कगार पर पहुंच चुके हैं। ये वृक्ष आस्था से लेकर सामाजिक सरोकारों से जुड़े हैं। धार्मिक आयोजन हो या गांव की चौपाल सबका ठिकाना पीपल और वटवृक्ष रहते हैं। इन पेड़ों को देवतुल्य माना जाता है, लेकिन इनके रोपण और संरक्षण पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यदि यही स्थिति रही तो आने वाले समय में पूजा के वक्त पीपल के पत्ते ढूंढे नहीं मिलेंगे। पौराणिक काल से ही लोग सुख समृद्धि, शांति और दीर्घायु कामना के लिए चतुर्दशी का व्रत लेकर शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि को पीपल और बड़ के पौधों का रोपण किया करते थे। गांव में हर घर की चौखट पर पीपल और आम के पत्तों की माला आज भी दिखाई देती है। वहीं, पीपल के पेड़ों के चारों ओर धागे लपेटने की परंपरा भी रही है, लेकिन चिंता यह है कि वर्षों पुराने ये वृक्ष सिमटते जा रहे हैं। लोगो में भगवान के नाम पर व्रत रखने की परम्परा तो कायम है, लेकिन व्रत के साथ पीपल और बरगद के पौधों को लगाने की परम्परा समाप्त हो चुकी है। पुरखों द्वारा इनको गांवों के चौपलों और आम रास्तों पर गर्मी के दिनों में छाया के लिए लगाया जाता था। वन विभाग का कहना है कि वृक्षारोपण महोत्सव के मौके पर बरगद और पीपल के पौधों का रोपण किया जाता है।
137	16	मार्च 30, 2008	अमर उजाला	परम्परागत दालों के बीज भी तैयार करेगी टीडीसी	पर्वतीय जिलों में गहत और कुलथ जैसी परम्परागत दालों के बीज की कमी से भी किसानों को जल्द निजात मिलेगी। तराई बीज विकास निगम पंतनगर विश्वविद्यालय के सहयोग से दालों के बीज तैयार करने जा रही है। यह बीज कितना होगा और किन क्षेत्राों की क्या जरूरत है, इसके लिए निगम सर्वे भी कराने जा रहा है। पर्वतीय क्षेत्राों में परम्परागत दालों के बीज के लिए किसानों के सामने परेशानी खड़ी होने लगी है। इसका कारण परम्परागत खेती में फसल से ही बीज को निकालकर उपयोग करने को माना जा रहा है। इस कारण बीजों की गुणवत्ता पर फर्क पड़ रहा है। दूसरी तरफ पर्वतीय क्षेत्राों में असिंचित भूमि की अधिकता और बीज प्रतिस्थापन की मात्राा कम होने से भी पर्वतीय जिलों के किसानों को बीजों की किल्लत का सामना करना पड़ रहा है। हांलाकि पर्वतीय जिलों के लिए कोर वैली बीज परियोजना भी संचालित की जा रही है, पर अभी तक इसके अपेक्षित परिणाम सामने नहीं आ पाए हैं। तराई बीज विकास निगम ने पर्वतीय जिलों में परम्परागत दालों के बीज तैयार करने का निर्णय लिया है। निगम के अधिकारियों के मुताबिक आधार बीज की डिमांड की सटीक जानकारी के लिए अब सर्वे की तैयारी भी की जा रही है। इस सर्वे से यह पता लगाया जाएगा कि किस क्षेत्रा में किस तरह के और कितनी मात्राा में बीजों की जरूरत है। इस सर्वे से सामने आने वाले परिणाम के बाद ही बीजों को तैयार करने की शुरूआत होगी।
138	16	अप्रैल 7, 2008	दैनिक जागरण	राज्य में लहलहाएंगे दो करोड़ बांज के वृक्ष	पर्यावरण संतुलन व वानस्पतिक विविधता के अलावा जल स्रोतों की रिचार्जिंग के लिए वन विभाग पर्वतीय क्षेत्राों में भारी मात्राा में बांज की नई पौध रोपने की तैयारी में है। इसके लिए सभी विभागीय नर्सरियों में पौध तैयार कर ली गई है। 2000 फीट ऊंचाई से ऊपर के वनों में ओक प्रजातियों को वर्ष के अंत तक रोप दिया जाएगा। पौधरोपण के खास अभियान में ग्राम समूहों व व्यक्तियों को भी शामिल किया जाएगा। इसके लिए उन्हें भुगतान भी किया जाएगा। वन विभाग के अपने संसाधनों से चलाई जा रही परियोजना में 5 करोड़ से अधिक की लागत आने का अनुमान है। कुमाऊं व गढ़वाल मंडल में ओक प्रजातियों फल्यांट, रियांज, खर्सू आदि के 2 करोड़ से अधिक वृक्षों की पौध सन् 2010 तक राज्य के वनों में लहलहा उठेगी। बांज के एक स्वस्थ पौधे को तैयार होने में दो से ढाई साल का समय लग जाता है। हरिद्वार, ऊधमसिंह नगर व देहरादून को छोड़ दोनों मंडलों के पर्वतीय क्षेत्राों में परियोजना के तहत कार्य होगा।

139	16	अप्रैल 8, 2008	दैनिक जागरण	ऊंचाई वाले क्षेत्रा में होगा ट्राउट मछली का संरक्षण व उत्पादन	प्रदेश के मध्यम ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रा में ट्राउट मछली के संरक्षण व विकास के लिए फ्रांस के इंस्टिट्यूट ऑफ टिसी कोटा के साथ अनुबंध के बाद 121 करोड़ की योजना पर पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय के मत्सय विभाग ने कवायद शुरू कर दी है। इससे लुप्त प्रायः प्रसिद्ध ट्राउट मछली का संरक्षण व उत्पादन में सफलता मिल सकेगी। इसके अलावा मध्यम ऊंचाई के नदी, झीलों, तालाबों में महाशीर मछली के संरक्षण का कार्य भी जारी है। निकट भविष्य में ईको टूरिज्म के तहत पर्यटकों के आकर्षित होने के साथ ही स्थानीय लोगों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी। मध्यम ऊंचाई के पर्वतीय क्षेत्रा में वर्तमान में कालागढ़, पंचेश्वर, जागेवर क्षेत्रा में सुनहरी मछली हैं। उक्त मछली की पर्यावरण संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका है। चंपावत जिले के यामलाताल, चमोली के देवरियाताल समेत मध्यम ऊंचाई की सातताल, खुर्पाताल, भीमताल, नैनी आदि में सुनहरी महाशीर के संरक्षण व उत्पादन की योजना है।
140	16	अप्रैल 18, 2008	अमर उजाला	मधुमेह रोगियों के लिए मडुवा रामबाण	मधुमेह रोगियों के लिए मडुवे का फूड सप्लीमेंट रामबाण साबित हो सकता है। पर्वतीय इलाके में बहुतायत में होने वाले मडुवे पर पंतनगर कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय में चल रहे शोध के उत्साहजनक परिणाम ऐसा ही संकेत दे रहे हैं। बच्चों और गर्भवती महिलाओं के लिए भी यह सप्लीमेंट फायदेमंद रहेगा। मडुवा ऊर्जा का अक्षय भंडार माना जाता है। इसी मान्यता को ध्यान में रखते हुए पंतनगर विश्वविद्यालय के मॉलिक्यूलर बायोलॉजी एवं जेनेटिक्स विभाग ने मडुवे पर शोध शुरू किया। शोध में पता चला कि मडुवा में फ्लो रिलिजिंग शुगर होता है। सामान्य भोजन करने पर शरीर में शुगर की मात्राा तेजी से बढ़ती है जबकि मडुवे से बना भोजन करने पर शरीर में शुगर धीरे–धीरे बढ़ता है। इसी गुण के चलते मडुवे से बना कोई भी पदार्थ मधुमेह रोगियों को नुकसान नहीं करेगा। शोध के दौरान मडुवे में 45 प्रतिशत अमीनो एसिड पाया गया। वैज्ञानिकों के अनुसार अमीनो एसिड शरीर में किसी पदार्थ के सेवन से ही पहुंच सकता है। इस लिहाज से भी मडुवा मधुमेह रोगियों के लिए लाभदायक साबित होगा।
141	16	अप्रैल 23, 2008	दैनिक जागरण	एवरेस्ट पर भी उगेंगे पेड़	पिछले पांच दशकों से हिमालय की जलवायु में जारी बदलाव इसी रफ्तार से जारी रहा तो बहुत संभव है कि आने वाले समय में दुनिया की सबसे ऊंची चोटी एवरेस्ट पर भी पेड़ उगने लगें। आप भले ही भरोसा न करें लेकिन ग्लोबल वार्मिंग के कारण मध्य हिमालय में समुद्र तल से 4000 मीटर ऊंचाई वाले वे हिमालयी क्षेत्रा भी पेड़ उगने लायक हो जायेंगे, जहां वनस्पतियां तक नहीं उग पाती थीं। वैज्ञानिकों के मुताबिक समूचे विश्व के पर्यावरण के लिए यह शुभ संकेत नहीं है। इसरो के स्पेस एप्लिकेशन सेंटर अहमदाबाद के वैज्ञानिकों और जाने माने पारिस्थितिकी विज्ञानी प्रो0 एस0पी0 सिंह के संयुक्त शोध के निष्कर्ष तो यही इशारा करते हैं। मध्य हिमालय के ऊंचाई वाले क्षेत्राों के टेंपोरल सेटेलाइट रिमोट सेंसिंग डाटा के अध्ययन से यही निष्कर्ष निकले हैं। शोध से पता चला है कि 1960 में जहां नंदादेवी बायोस्फेयर रिजर्व के 15 प्रतिशत भूभाग में ग्लेशियर, 38 फीसदी में बर्फ और 44 फीसदी क्षेत्रा में चट्टानों का मलबा था जबकि वनस्पति के रूप में छिटपुट छोटी झाडियां थी। मार्च 1986 तक इसमें बदलाव आया और 1.4 वर्ग किमी क्षेत्रा में वनस्पतियां दिखने लगीं। लेकिन 1999 में तस्वीर काफी बदल गई। बर्फ कम हो गई, चट्टानों का मलबा बढ़ गया। 2004 आते आते वनस्पति ने बर्फ से लकदक इस इलाके में 60 वर्ग किलोमीटर का इलाका हथिया लिया। 1986 में जहां वनस्पति क्षेत्रा महज एक फीसदी था। 18 साल यानी 2004 में वह 22 फीसदी तक पहुंच गया। बर्फीले ग्लेशियर का इलाका भी नब्बे फीसदी से घटकर 35 फीसदी ही रह गया। इतना ही नहीं 1986 तक जहां 3900 मीटर से ज्यादा ऊंचाई पर ही इमारती लकड़ी वाले पेड़ उगते थे 2004 तक वे 4300 मीटर की ऊंचाई पर भी उगने लगे। प्रो0 सिंह के मुताबिक टुंड्रा वनस्पति रेखा भी 5300 मीटर तक जा पहुंची है।

142	16	अप्रैल 29, 2008	अमर उजाला	दावानल : बेकाबू हालत, कमजोर उपाय	जंगल धधक रहे हैं। धूं–धूं कर जल रहे हैं। दावाग्नि से निबटने के लिए सरकारी मशीनरी फिर जद्दोजहद कर रही है। जंगलो में आग सभी जगह है, मगर गढ़वाल मंडल की चुनौती ज्यादा तगड़ी है। अभी तक सामने आए दावाग्नि के मामलों में 80 फीसदी गढ़वाल क्षेत्रा से ही संबंधित है। इसमें भी रिजर्व फारेस्ट क्षेत्रा में सबसे ज्यादा आग लग रही है। अग्निकाल शुरू होने से पहले वन विभाग ने जो कसरत की थी, अब उत्तराखण्ड के हर जिले में उसकी कड़ी परीक्षा हो रही है। हालात बद से बदतर होने को कुछ इस तरह समझा जा सकता है। वर्ष 2006 में पूरे फायर सीजन में 600 हेक्टेयर से भी कम क्षेत्रा का नुकसान हुआ था। इस वर्ष फायर सीजन अभी आधा गुजरा है और प्रभावित होने का आंकड़ा इससे आगे निकल चुका है। गढ़वाल मंडल में वनाग्नि के सबसे ज्यादा करीब ढाई सौ मामले सामने आए हैं। इसमें भी डेढ़ सौ से ज्यादा मामले रिजर्व फारेस्ट क्षेत्रा में है। पौड़ी और चमोली जिले सबसे ज्यादा प्रभावित हैं। कुमाऊं क्षेत्रा में गढ़वाल के मुकाबले कम जंगल जले हैं। यहां जितने भी वनाग्नि के मामने सामने आए है, वे रिजर्व फारेस्ट और सिविल सोयम–वन पंचायत में बराबर–बराबर हैं।
143	16	अप्रैल 29, 2008	अमर उजाला	पहाड़ से रूठ रही प्रकृति, स्रोतों की शामत	पहाड़ से प्रकृति का प्रेम अब शायद पहले जैसा नहीं रहा। भीषण गर्मी में पहाड़ आग उगल रहे हैं। पर्वतीय क्षेत्रा में पीने के पानी का आधार माने जाने वाले प्राकृतिक स्रोतों पर भी प्रकृति की मार पड़ी है। दून, पिथौरागढ़, चंपावत जैसे जिलों में पानी के प्राकृतिक स्रोतों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचा है। स्रोतों के 40 से 90 फीसदी तक सूखने की सूचनाएं मिल रही हैं। आपदा प्रबंधन विभाग की कसरत से जो तस्वीर उभरी है, वह आम आदमी के होश उड़ाने के लिए काफी है। पर्वतीय क्षेत्रा में पहले से ही पानी की दिक्कत है। स्रोत सूख जाने के बाद पेयजल संकट और बढ़ना तय है। प्राकृतिक जल स्रोतों के सूखने के मामले पर्वतीय क्षेत्राों में ज्यादा सामने आए हैं। यह स्थिति इसलिए भी चिंताजनक है, क्योंकि पर्वतीय क्षेत्राों की सवा पांच हजार पेयजल योजनाओं का आधार प्राकृतिक जल स्रोत ही है। आपदा प्रबंधन विभाग की रिपोर्ट में खास तौर पर दून, पिथौरागढ़, चंपावत, टिहरी जैसे जिलों में प्राकृतिक स्रोत सूखने की सूचनाएं सामने आई हैं। इसका सीधा नुकसान 700 से ज्यादा गांवों की पेयजल आपूर्ति पर पड़ने की आशंका है।
144	16	अप्रैल 29, 2008	अमर उजाला	अब प्रदेश में होगी कांट्रेक्ट खेती	प्रदेश में भी अब कांट्रेक्ट खेती शुरू होने जा रही है। सामूहिक खेती के लिए आगे आए पौड़ी जिले के दिखेत गांव के लोग अब इंडियन ग्लाइकोल की मदद से गेंदे के फूलों की खेती करने जा रहे हैं। इसके लिए प्रत्येक प्रवासी ने फिलहाल एक हजार रूपये अपनी तरफ से मिलाएं हैं और आईजीएल ने फूलों के बीज उपलब्ध कराने का विश्वास दिलाया है। कांट्रेक्ट या ठेके पर खेती को लेकर बहस का दौर जारी है। इसके स्याह पक्ष को लेकर भी आवाज उठाई जाती रही है। ठेके पर खेती की अभी प्रदेश में शुरूआत नहीं हो पाई है। नया मंडी एक्ट लागू न होने के कारण यह मामला अधर में लटका है। दूसरी ओर सामूहिक खेती की पहल करने वाले दिखेत गांव के प्रवासियों ने इसी ठेके पर खेती की परंपरा की जाने–अनजाने प्रदेश में नींव डाल दी है। प्रवासियों की ओर से इंडियन ग्लाइकोल के साथ इस संदर्भ में जल्द ही अनुबंध हो रहा है। कृषि मंत्रालय के सूत्रों के अनुसार आईजीएल कंपनी गांव के लोगों को गेंदे के बीज उपलब्ध कराएगी और साथ ही फूल तैयार हो जाने पर तीन रूपया प्रति फूल के हिसाब से खरीददारी भी करेगी। अनुमान लगाया जा रहा है कि करीब तीन लाख रूपये की पूंजी निवेश कर गांव के लोग 26 लाख रूपये कमा पाएंगे।

145	16	अप्रैल 30, 2008	दैनिक जागरण	नर्सरी लगाकर महिलाएं बनेंगी आत्मनिर्भर	अब बागवानी के क्षेत्रा में भी महिलाएं स्वावलंबी बनेंगी। वे खुद पौधे उगायेंगी और उनकी बिक्री भी खुद करेंगी। वे खुले बाजार में बिक्री के साथ ही विभाग को भी पौध देंगी। इसके लिए महिला समितियों का गठन होगा और किसान महिला नर्सरियों की स्थापना की जायेगी। यह पहल करने जा रहा है वन विभाग। शासन के निर्देश पर वन पंचायत विभाग ने 1ण्60 करोड़ का प्रस्ताव उसको भेज दिया है। योजना के तहत राज्य में 158 महिला काश्तकार समूह बनेंगे और बीस, तीस चालीस व पचास हजार पौध क्षमता की नर्सरियां लगाई जाएंगी। प्रथम चरण में राज्य के 20 प्रभागों में कार्य होगा। पर्वतीय क्षेत्रा में बांज, चीड़, उतीस, हरड़, बहेड़ा, आंवला, आदि और मैदानी क्षेत्रा में वहां की परिस्थितियों के अनुरूप प्रजातियों के पौधों को उगाया जाएगा। नर्सरी तैयार करने के लिए विभाग से सहायता व तकनीकी जानकारी दी जाएगी। वन विभाग के माध्यम से प्रस्ताव मांगे जाएंगे। नर्सरी में 20 प्रतिशत फलदार वृक्षों के पौध तैयार करने की भी बात शामिल है।
146	16	मई 8, 2008	दैनिक जागरण	ग्लोबल वार्मिंग निगल जाएगी बांज के जंगल	एक वक्त ऐसा भी आएगा जब पहाड़ की लोक कथाओं लोक गीतों में बसने वाला बांज का जंगल अतीत की बांज हो जाएगा। लुप्त हो जाने वाले ये दुनिया के पहले वन होंगे। ग्लोबल वार्मिंग हिमालय पर ऐसा ही बुरा असर डालने वाली है। गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान के वैज्ञानिकों का शोध बांज के जंगलों के बारे में यही भविष्यवाणी करता है। वैज्ञानिक सुब्रत शर्मा और एस0पी0 सिंह के शोध के मुताबिक हिमालयी क्षेत्रा अपनी विशेष भौगोलिक परिस्थितियों, जलवायु के कारण बेहद संवेदनशील है। ग्लोबल वार्मिंग की वजह से हो रहे जलवायु परिवर्तन का सीधा असर यहां उच्च हिमालय में स्थित बांज वनों पर पड़ेगा। वैज्ञानिकों का कहना है कि जैसे–जैसे ग्लोबल वार्मिंग की वजह से जलवायु परिवर्तन हो रहा है। बांज के जंगलों के लिए मुफीद स्थान उनके लायक नहीं रह गया है। शोध के मुताबिक बांज प्रजाति प्राकृतिक रूप से गर्म स्थान से ठंडी जगह पर शिफ्ट हो जाता है, लेकिन यह प्रक्रिया बेहद धीमी है। बांज के वन अक्सर चोटियों के पास उगते हैं। बांज के बीज एक तो पिंडज प्रकृति के होते है और उनके उगने की दर भी अन्य पेड़ों की अपेक्षा कम होती है। इतना ही नहीं बहुत से बीजों को भालू, बंदर आदि जानवर खा जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में बहुत आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि एक दिन हिमालयी क्षेत्रों से बांज के वन विलुप्त हो जाएं। पहाड़ों में जल स्तर बनाए रखने और जल संचय में बांज वृक्षों को बहुत उपयोगी समझा जाता है। बांज की जड़ें पानी का स्त्रोात समझी जाती है। ऐसे में बांज के वन विलुप्त हो गए तो पहले से ही जल संकट से जूझ रहे पहाड़ को और भारी जल संकट का सामना करना पड़ सकता है।
147	16	मई 12, 2008	अमर उजाला	ग्लेश्यिर में मानीटरिंग केंद्र स्थापित किया	देश के हिमालय क्षेत्रा में साढ़े तीन सौ से भी ज्यादा छोटे–बड़े ग्लेशियर हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन के खतरों के बावजूद इनके अध्ययन की दिशा में केंद्र सरकार ने कोई कदम नहीं उठाया है। सिक्किम सरकार ने इस दिशा में पहल की है। पश्चिमी सिक्किम में नेपाल बार्डर पर स्थित ईस्ट राठोंग ग्लेशियर में एक मानीटरिंग केंद्र की स्थापना की गई है। इसके जरिये ग्लेशियर के पिघलने की रफ्तार, कारण और हर साल होने वाली बर्फबारी का आंकलन किया जाएगा। ग्लेशियरों के अध्ययन के लिए देश में उठाया गया यह पहला कदम है। ग्लेशियर वैज्ञानिक इकबाल हसनैन ने बताया कि ईस्ट राठोंग ग्लेशियर का बेंचमार्क ग्लेशियर के तौर पर अध्ययन किया जाएगा। यह केंद्र 5 हजार मीटर की ऊंचाई पर स्थापित किया गया है। मानसून के दौरान इस क्षेत्रा में बर्फबारी होती है जिससे ग्लेशियर का आकार बढ़ना चाहिए। लेकिन यह ग्लेशियर तेजी से पिघल रहा है और अनुमान के अनुसार पिछले दस सालों में लगभग 2ण्5 किलोमीटर मीटर पिघल चुका है। इसी के मद्देनजर यहां मानीटरिंग केंद्र स्थापित किया गया है ताकि इसके कारणों की पड़ताल की जा सके।

148	16	मई 12, 2008	अमर उजाला	अंटार्कटिक में डीडीटी से पिघल रहे हैं ग्लेशियर	अंटार्कटिक में ग्लेशियरों के पिघलने का प्रमुख कारण जहरीले रसायन डीडीटी का अंधाधुंध इस्तेमाल है। हांलाकि अब डीडीटी का इस्तेमाल सीमित कर दिया गया है लेकिन दो दशक पहले तक पूरी दुनिया में बतौर कीटनाशक इसका खूब इस्तेमाल होता था। वैज्ञानिकों का कहना है कि हवा के साथ डीडीटी के अंश ग्लेशियरों तक पहुंचे और ऊंचे ग्लेशियरों की बर्फ में भंडारित होते गए जो अब बर्फ को गलाकर पानी बना रहे हैं। हाल में किए गए शोध में अंटार्कटिक में पाए जाने वाले पेंगुइन के रक्त में डीडीटी के अंश मिले हैं। इस आधार पर वैज्ञानिकों का दावा है कि ग्लेशियरों में अभी भी डीडीटी के कण मौजूद हैं जो इनके पिघलने का कारण बन रहे हैं। डब्लूएचओ के अनुसार 1980 में दुनिया में डीडीटी का इस्तेमाल 40 हजार टन सालाना था जो अब सिर्फ एक हजार टन रह गया है। सिर्फ उन्हीं देशों में इसका सीमित इस्तेमाल होता है जहां मच्छर या बैक्टर बार्न बीमारियों का प्रकोप ज्यादा है। भारत में इसका सीमित इस्तेमाल होता है। सांइस पत्रिका 'न्यू साइंटिस्ट' की रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका की वरजीनिया इंस्टीट्यूट ऑफ मैरीन साइंस की शोधकर्ता हैदी जेइज की टीम ने अंटार्कटिका में पेंगुइन के रक्त के नमूनों की जांच में उनमें डीडीटी की मात्राा की पुष्टि की है। वैज्ञानिकों का आगे का अनुसंधान बताता है कि अंटार्कटिका में बर्फ में डीडीटी के अंश भारी मात्राा में जमे हुए हैं। यहीं से वे पेंगुइन के शरीर में भी पहुॅचे हैं।
149	16	मई 25, 2008	अमर उजाला	अब बचाया जा सकेगा शीशम	शीशम के सूखने की बीमारी अब विशेषज्ञों की चिंता का सबब नहीं बनेगी। फारेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट ने पांच क्लोन विकसित किए हैं। ड्राई क्लाइमेट यानी शुष्क वातावरण के शीशम को उसकी बीमारी से यह क्लोन निजात दिला सकेंगे। शीशम के हजारों पेड़ तना सूखने की बीमारी से ग्रसित हो तकरीबन खत्म हो चुके हैं। बीमारी का इलाज ढूंढने का जिम्मा एफआरआई के वैज्ञानिकों ने उठाया। सालों की मेहनत के बाद इन वैज्ञानिकों ने आखिर इलाज ढूंढ निकाला। उन्होंने ऐसी जगहों के पेड़ों के लिए क्लोन विकसित करने में कामयाबी हासिल कर ली है, जहां ड्राई क्लाइमेट है। अब ऐसी जगहों के लिए क्लोन बनाने की कोशिश की जा रही है, जहां वाटर लेवल ज्यादा है। बिहार जैसे राज्य वैज्ञानिकों के लिए चुनौती बने हुए हैं। दरअसल, दोनों जगह वृक्षों के पनपने की परिस्थितियों की भिन्नता के चलते दोनों तरह के शीशम को बीमारी से बचाने के लिए अलग–अलग तरह के क्लोन विकसित किए जाने की जरूरत पहले से ही समझ ली गई थी।
150	16	जून 2, 2008	अमर उजाला	टाइगर–जेड' रखेगा प्रदूषण पर नजर	प्रदूषण पर 'टाइगर–जेड' नजर रखेगा। नेशनल एयरोनाटिक्स एंड स्पेस एडमिस्ट्रेशन (नासा) ने प्रदूषण और ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ते खतरे को देखते हुए आर्यभट्ट प्रेक्षण विज्ञान शोध संस्थान (एरीज) में टाइगर–जेड प्रोजेक्ट के तहत एयरोनाट सेंटर विकसित किया है। सेंटर से ग्राउंड, सेटेलाइट और हवा तीनों जगह से प्रदूषण पर हर पल नजर रखी जा सकेगी। अभी तक विशेषकर उत्तराखण्ड में प्रदूषण के आंकलन, अध्ययन और उससे पड़ने वाले प्रभाव को लेकर कोई ठोस पहल नहीं हुई थी केवल एरीज में प्रारम्भिक तौर पर वायुमंडलीय अध्ययन शुरू हुआ है। एयरोनाट सेंटर में कई अत्याधुनिक उपकरण लगाए गए हैं। स्वचालित यह उपकरण जमीन के साथ सेटेलाइट के माध्यम से प्रदूषण पर नजर रखेंगे। इसके अलावा हवाई जहाज के माध्यम से हवा से एरोसॉल (डस्ट पार्टिकल) का अध्ययन किया जाएगा। वायुमंडल विभाग के वैज्ञानिकों के अनुसार एरोसॉल रोबोटिक नेटवर्क सिस्टम सेटेलाइट से नियंत्रित होगा। इसके माध्यम से वातावरण में सूक्ष्म कणों के घनत्व का तो पता लगेगा। इसके अलावा नासा ने उत्तर भारत में प्रदूषण के अध्ययन के लिए बरेली, पंतनगर विश्वविद्यालय, और आई0आई0टी0 कानपुर में यह सेंटर विकसित किया है।

151	16	जून 2, 2008	दैनिक जागरण	जंगल जलने से बचाएगा मॉडल	भारतीय वन अनुसंधान संस्थान (एफआरआई) और इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गनाइजेशन (इसरो) के वैज्ञानिकों की कोशिशें अगर कामयाब हुईं तो अगले कुछ सालों में प्रदेश के जंगलो को बेकाबू आग से मुक्ति मिल सकती है। एफआरआई और इसरो के वैज्ञानिक ऐसा वैज्ञानिक मॉडल बनाने का प्रयास कर रहे हैं, जिससे जंगल की आग पर काबू पाया जा सके और अलग–अलग मौसम में जंगल की आग का पूर्वानुमान लगाया जा सके। यह भी पता लगाया जा सके कि प्रदेश में जल्द आग पकड़ने वाले वन कितने हैं और अगर जंगल में आग लग जाए तो उसका फैलाव कहां तक हो सकता है, आग लगने पर धुआं कहां तक फैल सकता है। एफआरआई के वैज्ञानिकों की एक टीम प्रदेश के तेरह जिलों के वनावरण के आंकड़े जुटा रही है। वैज्ञानिक इन आंकड़ों का विश्लेषण भी करेंगे और इसके साथ ही इसरो के वैज्ञानिक इन आंकड़ों और उनके विश्लेषण के आधार पर मॉडल विकसित करने का कार्य करेंगे। इसके लिए भारत के उपग्रहों से प्राप्त चित्रों और डाटा का सहारा लिया जाएगा। मॉडल अगर सफल रहा तो उसे अन्य राज्यों में भी लागू किया जाएगा।
152	16	जून 14, 2008	अमर उजाला	प्रदेश का मौसम केंद्र सेटेलाइट इमेज से जुड़ा	मौसम में होने वाले तत्कालिक परिवर्तनों पर भी समय से निगरानी कर उसकी सूचना जारी की जा सकेगी। इसके लिए राज्य मौसम केंद्र को अत्याधुनिक सुविधाओं और यंत्राों से लैस किया जा रहा है। सब कुछ ठीक और समय पर हुआ तो आने वाले चंद दिनों के अंदर मौसम में एक घंटे के भीतर होने वाले परिवर्तनों का भी समय से पता लगाया जा सकेगा। राज्य मौसम केंद्र ने अपने लिए रडार की मांग पहले ही की हुई है। इसके अलावा मौसम केंद्र को और भी अत्याधुनिक तकनीकों से जोड़ा जा रहा है। मौसम केंद्र को सीधे सेटेलाइट इमेज से जोड़ दिया गया है। सेटेलाइट से सीधे इमेज प्राप्त होने के बाद तत्काल आंकलन कर मौसम की जानकारी जुटाई जा रही है। उत्तराखण्ड में अधिकतर एरिया पहाड़ी होने के कारण यहां मौसम में बड़ी तेजी से परिवर्तन होता है। अचानक होने वाले परिवर्तनों के समय से पता नहीं चलने से काफी नुकसान का भी सामना करना पड़ रहा है। इसलिए ऐसी तकनीकों से मौसम केंद्र को जोड़ा जा रहा है जो यहां एक घंटे में होने वाले मौसम के परिवर्तन पर भी नजर रख सके। इसका सबसे अधिक लाभ आपदा से होने वाले नुकसान को रोकने में मिलेगा।
153	16	जून 17, 2008	अमर उजाला	द्रोण पर्वत पर संजीवनी खोजेंगे विशेषज्ञ	त्रेतायुग में संजीवनी ने लक्ष्मण के प्राण बचाए थे। उत्तराखण्ड सरकार कलियुग में इससे आम आदमी के प्राण बचाना चाहती है। स्वास्थ्य मंत्राालय की योजना जल्द ही विशेषज्ञों की एक टीम को द्रोणागिरी पर्वत भेजने की तैयारी कर रही है। द्रोणागिरी के साथ ही सुमेरू और छोटा कैलाश पर्वत पर भी टीम भेजने की सिफारिश की गई है। संजीवनी को लेकर स्वास्थ्य मंत्राालय ने आठ महीने पहले कसरत शुरू की थी। कोलंबो में एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन से लौटने के बाद स्वास्थ्य मंत्राी ने इस पर काम शुरू कराया है। सरकार के जड़ी–बूटी सलाहकार से रिपोर्ट भी मांगी गई। इस रिपोर्ट के आधार पर द्रोणागिरी पर्वत भेजने वाली टीम की काफी कुछ शक्ल तैयार कर ली गई है। रिपोर्ट में स्थानीय वैद्यों से लेकर जड़ी–बूटी विशेषज्ञ, रसायन शास्त्राी, जीवाश्म विशेषज्ञ, पुरातत्वविद्, फाइटो कैमिस्ट आदि तक को विशेषज्ञ के तौर पर टीम में रखने का सुझाव दिया गया है। इसके अलावा टीम को कार्तिक और भादों के महीने में ही भेजने का सुझाव दिया गया है। माना जाता है कि इन महीनों में जड़ी–बूटी परिपक्व अवस्था में रहती हैं।

154	16	जुलाई 5, 2008	दैनिक जागरण	टाइगर रिजर्व के बाहर सुरक्षित नहीं बाघ	टाइगर रिजर्व में भले ही बाघ (टाइगर) के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गंभीर प्रयास हो रहे हों, लेकिन इससे बाहर के क्षेत्रों में बाघ सुरक्षित नहीं हैं। यही वजह है कि शिकारी खुले आम बाघों का शिकार कर जैव विविधता के लिए खतरा बनते जा रहे हैं। देश में अब तक 28 टाइगर रिजर्व थे। हाल ही में पांच अन्य वन्यजीव अभयारण्यों को भी टाइगर रिजर्व का दर्जा दिया गया, जिससे इनकी तादाद अब 33 हो गई है। वर्तमान में देश भर में बाघों की तादाद 1400 से 1500 के बीच है, जिनमें से काफी संख्या में टाइगर रिजर्व के बाहर के क्षेत्रों में भी मौजूद हैं। इसके बावजूद बाघ संरक्षण की जितनी भी योजनाएं राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संचालित हो रही हैं, वे सिर्फ टाइगर रिजर्व के लिए ही हैं। बाहरी क्षेत्रों में बाघ के संरक्षण के प्रति कोई भी एजेंसी गंभीर नजर नहीं आती। उत्तराखण्ड में ही टाइगर रिजर्व के अलावा लैंसडौन, हल्द्वानी, रामनगर व हरिद्वार वन प्रभागों में बाघों की मौजूदगी है। लेकिन इनके संरक्षण की दिशा में आज तक न तो केंद्र सरकार के स्तर से कोई पहल हुई और न ही प्रदेश सरकार के।
155	16	जुलाई 7, 2008	दैनिक जागरण	भारत के कई द्वीपों का अस्तित्व खतरे में	जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियरों के पिघलने और समुद्र के जलस्तर में वृद्धि के चलते भारतीय उपमहाद्वीप के कई द्वीपों और प्रशांत महासागरीय क्षेत्रा के देश 'तुवालू' पर अस्तित्व का संकट मंडराने लगा है। जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय समिति (आईपीसीसी) के अध्यक्ष राजेन्द्र पचौरी ने बताया कि वर्तमान विश्व के समक्ष जलवायु परिवर्तन सबसे बड़े खतरे के रूप में उभर कर सामने आया है। जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियर पिघल रहे हैं। इस कारण समुद्र में पानी की मात्राा तेजी से बढ़ रही है और समुद्र का जलस्तर बढ़ रहा है। इससे स्वाभाविक तौर पर समुद्र के बीच स्थित द्वीपों और तटीय इलाकों के डूबने का खतरा उत्पन्न हो गया है। इसमें भारतीय उपमहाद्वीप के कई इलाके भी शामिल हैं। इनमें पड़ोसी देश मालदीव भी है। पचौरी का यहाँ तक कहना था कि जलवायु परिवर्तन के कारण पेयजल संकट सबसे गंभीर समस्या के रूप में उभर रहा है। कई क्षेत्रों में पेयजल की आपूर्ति नदियों से होती है, जबकि जलवायु परिवर्तन के कारण उनका मार्ग बदलने लगा है। इससे कहीं बाढ़ तो कहीं सूखा जैसी स्थिति उत्पन्न होने लगी है।
156	16	अगस्त 8, 2008	दैनिक जागरण	फूलों की घाटी में पौलीगोनियम का प्रकोप	पौलीगोनियम नामक एक अन्य फूल की प्रजाति जिस तरह ' वैली आफ फ्लावर' के अंतिम छोर तक फैल चुकी है उससे संकेत मिल रहे हैं कि नाना प्रजाति के फूलों को उगाने वाली विश्व की एकमात्रा इस घाटी का अस्तित्व जल्द ही मिट जाएगा। 87ण्5 हेक्टेयर के विशाल भू–भाग में 500 के करीब फूलों की प्रजातियां कभी यहां पाई जाती थीं। अब घाटी के अधिकांश हिस्से पर पौलीगोनियम फैल चुका है जो लगातार अन्य फूलों को समाप्त कर रहा है। फूलों की घाटी में बहने वाले बामनदौड़, स्विचंद आदि गदेरों तक पौलीगोनियम पसर चुका है। इससे कई प्रकार की बेसुमार जड़ी बूटियां भी अब देखने को नहीं मिल रही हैं। इस पौधे की लंबाई एक मीटर के करीब होने से छोटी प्रजाति के पुष्प नहीं पनप पाते हैं। हांलाकि यह पौधा भूस्खलन रोकने मे सहायक होता है। नंदा देवी राष्ट्रीय पार्क के डी एफ ओ ने माना कि पौलीगोनियम यहाँ पनप रहा है और इसके जल्दी बढ़ने से छोटी प्रजाति के फूल नहीं खिल पा रहे। पौलीगोनियम की करीब चार प्रजातियां फूलों की घाटी में विकसित हुई हैं। पौलीगोनियम की उगने की क्षमता अधिक होती है। यह बड़ी तेजी से री–जेनरेट करता है और अपने आस–पास दूसरे पौधों को उगने नहीं देता है। यह अन्य पौधों की तुलना में ज्यादा स्ट्रांग भी होता है।

157	16	अगस्त 22, 2008	दैनिक जागरण	दुनियां का सबसे बड़ा व मीठा सेब विलुप्त	आकार और स्वाद में विश्व का सबसे उत्कृष्ट सेब लगभग विलुप्त हो गया है। कभी अंतर्राष्ट्रीय मानकों को बदलवा देने वाले इस सेब को सरकारें बाजार तक उपलब्ध नहीं करा सकीं। मुनस्यारी तहसील की गोरी घाटी में धारचूला और मुनस्यारी तहसीलों की सीमा पर स्थित गांव बौना–तौमिक सेब और राजमा उत्पादन के लिए मशहूर रहा है। आठ हजार फिट से अधिक ऊँचाई पर बसे इस गांव में सेब की फसल बहुतायत में होती थी। बेहद मीठा और खूबसूरत यहां का सेब न सिर्फ स्वाद में लाजवाब था बल्कि बाजारों में उपलब्ध अन्य सेबों से आकार में भी काफी बड़ा था। बताते हैं कि चार दशक पूर्व जब इस सेब की विशेषता का पता चला तो पिथौरागढ़ के तत्कालीन जिला उद्यान अधिकारी ने बौना गांव का दौरा किया। बाद में इसे अंतर्राष्ट्रीय सेब प्रदर्शनी में भेजा गया। जहां इसने ऐसी धाक जमायी कि इसके सामने सारी प्रजातियां बौनी पड़ गईं। इसके साथ ही देश–विदेश के योजनाकारों का ध्यान बौना गांव के सेब की ओर गया। सेब की विशेषता को देखते हुए इस क्षेत्रा को हिमाचल प्रदेश की तर्ज पर तैयार करने का निर्णय लिया गया। कुमाऊं मंडल विकास निगम को यहां के सेब के विपणन का दायित्व सौंपा गया। किन्तु निगम के रेट इतने न्यूनतम थे कि मदकोट में जमा सेब सितम्बर और अक्टूबर में खुले स्थान पर पड़ा रहा और अंत में सड़कर नष्ट हो गया। सेब उत्पादकों को न तो अपना सेब खाने को मिला और न ही उसकी कोई कीमत मिल सकी। सेब की इस दुर्गति को देखते हुए ग्रामीणों ने भी इसके उत्पादन से तौबा कर ली। कुछ बचे हुए पेड़ों पर बीमारी लग चुकी है। इस तरह सरकारी महकमों की प्रवृत्ति से विश्व में सबसे बड़े आकार का घोषित सेब लगभग विलुप्त हो गया।
158	16	सितम्बर 8, 2008	दैनिक जागरण	पांच गुनी बढ़ी बासमती की जैविक खेती	बासमती की खुशबू को बचाने की मुहिम अब रंग लाने लगी है। वैज्ञानिकों, कृषि विभाग व किसानों की त्रिास्तरीय कोशिश से उत्तराखण्ड में फीकी पड़ चुकी बासमती धान की रौनक फिर से सैकड़ों गांवों के खेतों में लौट आई है। सूबे में पांच वर्ष में बासमती धान की जैविक खेती पांच गुनी बढ़ी है। इस मुकाम तक पहुंचने के लिए चार जिलों देहरादून, नैनीताल, ऊधमसिंह नगर व हरिद्वार के 13 विकास खंडो में किसानों के 600 स्वयं सहायता समूह बनाए गए। समूहों के अध्यक्ष व उपाध्यक्ष को दो बार एक–एक सप्ताह के प्रशिक्षण पंतनगर स्थित गोविन्द बल्लभ पंत कृषि विश्वविद्यालय में दिए गए। जहां वर्ष 2003 में जैविक बासमती की खेती को प्रमोट करने के लिए राज्य सरकार को 40 लाख रूपये खर्च करने पड़े थे, वहीं अब पांच साल बाद खर्च घटकर 10 लाख रूपये रह गया है। जैविक बासमती चावल की मांग विदेशों में अत्यधिक है। मगर किसानों को वाजिब कीमत नहीं मिलने के कारण जैविक खेती सिकुड़ती चली गई। सूबे में वर्ष 2003 में सिर्फ 1500 हेक्टेयर में ही बासमती की जैविक खेती होती थी। आज यह बढ़कर 7500 हेक्टेयर हो गई है। राज्य के 284 गांवों के 16 हजार किसान आज बासमती की प्रमाणित जैविक खेती कर रहे हैं।
159	16	सितम्बर 8, 2008	दैनिक जागरण	विदेशी सेब की खुशबू से महका चौबटिया	चौबटिया गार्डन इन दिनों विदेशी सेबों की खुशबू से महका हुआ है। यह विदेशी सेब पककर तैयार हो गया है। विदेशी सेबों को व्यापक स्तर पर उगाने के लिए विभाग ने कार्य योजना तैयार कर ली है। 2012 तक प्रदेश में 15 हजार हेक्टेयर पर सेब की खेती की योजना है। प्रदेश को फलपट्टी के रूप में विकसित करने के उद्देश्य से उद्यान विभाग सेब की खेती को बढ़ावा देने के लिए युद्ध स्तर पर कार्य कर रहा है। राज्य बनने के बाद अब तक विभागीय योजना व हार्टिकल्चर टेक्नोलॉजी मिशन द्वारा 3212 हेक्टेयर क्षेत्रा में सेब की खेती की जा रही है। 2012 तक सेब की खेती का विस्तार 15 हजार हेक्टेयर करने का है। चौबटिया में योजना के तहत अमेरिका, इटली सहित कई देशों के सेबों की विदेशी प्रजातियां लगाई गई हैं। विदेशी सेब उत्पादन, गुणवत्ता व बाजार के रूप में सर्वोत्तम है।

160	16	सितम्बर 8, 2008	दैनिक जागरण	जहरीली वनस्पतियों से औषधीय पौधों को खतरा	जड़ी–बूटी और औषधीय पौधों के लिये उपयुक्त माना जाने वाले शिवालिक और मध्य हिमालय के वन्य क्षेत्राों में जहरीली वनस्पतियों की दस्तक से औषधीय पौधों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। कृषि भूमि को बंजर बनाने के बाद वन्य क्षेत्राों तक पहुंची आयातित लेंटाना और पार्थेनियम जैसी कई जहरीली वनस्पतियों के लगातार फैलाव से धरती के बंजर होने का खतरा भी पैदा हो गया है। वनस्पति शास्त्रियों के मुताबिक इस समय चार से साढ़े चार हजार फीट की ऊँचाई तक फूल वाले पौधों की आठ हजार प्रजातियां, जिम्नो स्पर्म की 44 प्रजातियां और 600 प्रजातियां टेरीडोफाइट की पाई गयी हैं। परन्तु पिछले एक दशक में अधिकांश वन्य क्षेत्राों में जहरीली वनस्पतियों के उगने से इन प्रजातियों को गंभीर खतरा पैदा हो गया है। यह वनस्पतियां कितनी घातक हैं, इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि जिस स्थान पर इनका फैलाव हुआ है वहां से हजारों वर्ष पुराने पौधे और घास नष्ट हो गयी है। यहां के पेड़ पौधों और औषधीय गुणों वाली प्रजातियों को संकट में डालने वाली जहरीली वनस्पतियों में लेंटाना, पार्थेनियम, कलघरिया बेशरम, पाती और चलमौड़ा प्रमुख हैं। इन जहरीली वनस्पतियों के उन्मूलन के लिये अभी तक कोई प्रयास नहीं किये जाने से न केवल घास किस्म की वनस्पति बल्कि बड़े पेड़ पौधों का अस्तित्व भी खतरे में पड़ गया है। जहरीली आयातित वनस्पतियों के कारण न केवल यहां के पौधों पर संकट आ गया है बल्कि पेयजल स्रोतों के निकट बहुतायत में पाया जाने वाला फर्न भी समाप्त होता जा रहा है।
161	16	अक्टूबर 31, 2008	दैनिक जागरण	इतिहास बन जाएंगी दर्जनों पौराणिक झीलें	एक समय था जब नैनीताल देश में लेक डिस्ट्रिक के रूप में जाना जाता था। तब जिले में पांच दर्जन से अधिक छोटी–बड़ी झीलें हुआ करती थीं। किंतु अब जिले में चंद झीलें ही शेष रह गई हैं। सातताल की सात झीलों में से अब मात्रा चार झीलें ही जिंदा हैं। भीमताल व नौकुचिया ताल दिनों दिन प्रदूषित होती जा रही हैं। लेक डिस्ट्रिक में अब अधिकांश झीलों के तो अवशेष भी मिलने मुश्किल हैं। क्योंकि झीलों के स्थान पर बड़ी आबादी बस चुकी है या फिर उन स्थानों पर खेती–बाड़ी की जाने लगी है। जिले की सबसे बड़ी झीलों में भीमताल स्थित भीम सरोवर का नम्बर सबसे ऊपर आता है। करीब दो किलोमीटर परिधि में फैली इस झील का उचित रखरखाव नहीं होने से दिनों दिन प्रदूषित होती जा रही है। यही हाल यहां से मात्रा पांच किलोमीटर दूर स्थित नौ कोनों वाली प्रसिद्ध पौराणिक नौकुचियाताल झील का है। झील में कई जगहों से भारी मात्राा में मलवा व गंदगी समा रही है। सातताल में भरत, शत्राुघ्न व हनुमान ताल में पानी नहीं होने से उनके अवशेष मात्रा बचे हैं जो विलुप्त की होने की कगार पर हैं। जिले में झील संरक्षण को बनाया गया झील विकास प्राधिकरण भी करोड़ों खर्च करने के बावजूद आज तक कुछ खास नहीं कर सका। यदि समय रहते शेष बची इन झीलों की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो बहुत जल्द ही यह झीलें इतिहास बन जाएंगी।

162	16	नवम्बर 9, 2008	दैनिक जागरण	उत्तराखंड में मक्खन के पेड	देवभूमि उत्तराखण्ड में वास्तव में ऐसे वृक्ष हैं, जिनके फल का गूदा मक्खन की तरह डबलरोटी में लगा कर खाया जाता है। यह बात अलग है कि आम लोगों को इस फल की जानकारी देने तक में राज्य सरकार अब तक विफल रही है। हांलाकि उत्तराखण्ड में इसे मक्खन वाला पेड़ ही कहते हैं। यह मधुमेह और ब्लड प्रेशर के रोगियों के लिए गुणकारी है। विदेशी इसका लुत्फ उठाते हैं, मगर राज्य में इसकी खूबियों की जानकारी बहुत कम लोगों को है। बिना खास प्रयास किए उद्यान महकमा केवल यह उम्मीद करता है कि कभी ट्रेंड बदलेगा और बटर फ्रूट लोकप्रिय होगा। एवोकैडो बटर फ्रूट नामक ये पौधे वर्ष 1950 में मैक्सिको से लाये गये थे। ये पौधे सबसे पहले बागेश्वर और ज्योलीकोट (नैनीताल) में लगाए गए। धीरे–धीरे यह राज्य के अन्य हिस्सों में पहुंचा। बटर फ्रूट एवोकैडो में पर्याप्त प्रोटीन होता है, जबकि कोलेस्ट्राल व शुगर नहीं होता। यह तीन से छह हजार फीट की ऊँचाई पर लगता है और इसमें फल पांच–छह साल में आते हैं। प्रदेश में जहां यह फल मिलता है, वहां आने वाले विदेशी सैलानी और भारतीय जानकार इसे बड़े चाव से खाते हैं। दुर्भाग्य से कम लोग ही इसके बारे में जानते हैं। यही इसके व्यावसायिक स्वरूप न ले पाने का प्रमुख कारण है।
163	16	नवम्बर 14, 2008	दैनिक जागरण	फिर लौट आएगा हिमयुग	वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि जल्द ही हम नहीं चेते तो अगले दस हजार सालों में पृथ्वी पर हिमयुग की वापसी हो सकती है। वैज्ञानिकों ने छोटे समुद्री जीवाश्मों और पृथ्वी की बदलती कक्षा के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है। ग्लोबल वार्मिंग की समस्या से पार पाने की कोशिशों में जुटे वैज्ञानिकों का कहना है कि शीतयुग का अगला दौर ज्यादा भीषण होगा। ब्रिटेन और कनाडा के शोधकर्ताओं के मुताबिक इसके पीछे कारण होंगे वातावरण को जहरीला बनाती ग्रीनहाउस गैसें और बेकाबू पर्यावरण प्रदूषण। धरती के गर्म होने का दौर लगभग पांच करोड़ साल पहले शुरू हुआ था। हिमयुग और आज की गर्म जलवायु के बीच का समय लगभग नौ लाख साल पुराना है। लेकिन इसमें तेजी से बदलाव होते रहे है। जलवायु माडलों से पता चलता है कि स्थायित्व का अभाव हमें एक नई, अधिक ठंडी लेकिन स्थायी धरती के बारे में आगाह कर रहे है। आंकलन के अनुसार हिमयुग में उत्तरी गोलार्ध से अंटार्कटिका (दक्षिणी ध्रुव) के चारों तरफ हर कहीं बर्फ की चादर फैल जाएगी। इसमें रूस और अलास्का को जोड़ने वाला मार्ग भी शामिल होगा। समुद्र की सतह लगभग 300 मीटर नीचे चली जाएगी। पिछले हिमयुग में समुद्र के जल स्तर में 130 मीटर की कमी आई थी। तब रूस का अधिकांश हिस्सा बर्फ की एक बड़ी चादर में बदल गया था।
164	16	नवम्बर 30, 2008	दैनिक जागरण	औषधीय गुणों से भरपूर है काकू	काकू में औषधीय गुण के कारण आजकल लोगों में यह काफी लोकप्रिय हो रहा है। यह फल विभिन्न रोगों के इलाज में काम आता है। डायबिटीज, ब्लड प्रेशर आदि के रोगों में काकू को रामबाण माना जाता है। इसके औषधीय गुणों की वजह से लोग इसकी ओर ज्यादा आकर्षित होते है। काकू का बॉटनिकल नाम 'परसिमोन' है और यह ठंडे प्रदेशों में ही होता है। इसका रंग नारंगी होता है। काकू का फल नवम्बर में लगना शुरू होता है। इसको पेड़ से तोड़कर कुछ दिनों तक रख दिया जाता है ताकि यह पक कर तैयार हो जाए। यह बड़ा स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्द्धक होता है। इसके इसी गुण को देखकर इसकी मांग लगातार बढ़ रही है। जापान व रूस के विदेशी पर्यटक इसको बहुत अधिक पंसद करते हैं। इन देशों में भी काकू का उत्पादन व्यापक पैमाने पर होता है। सरकार को इस ओर पहल कर काकू जैसे गुणकारी फल के उत्पादन को बढ़ावा देना चाहिए।

165	16	दिसम्बर 5, 2008	अमर उजाला	एक बार बुआई करो और अठाइस बार काटो	बहुउपयोगी लेमन घास ने किसानों के सामने भारी मुनाफा देने वाली खेती के द्वार खोल दिए हैं। सरकार लेमन घास उत्पादन करने वाले किसानों को अनुदान दे रही है। हांलाकि, आम किसानों को इसकी जानकारी नहीं है। लेमन घास ढाई हजार फीट ऊंचाई तक खुष्क तथा बदलते वातावरण में उगाई जा सकती है। यह मैदानी क्षेत्रा में नदियों के किनारे पाई जाने वाली लंबी नुकीली पत्तियों वाली कांस घास जैसी लगभग आठ दस फीट ऊंची होती है। जुलाई–अगस्त तथा फरवरी–मार्च में इसकी पौध लगाई जाती है। एक एकड़ लेमन घास उगाने में लगभग आठ–दस हजार रूपया खर्च आता है। एक बार उगाने पर सात साल तक इसकी फसल होती है। एक साल में इसे चार बार काटा जाता है। एक कटाई में प्रति एकड़ 25 किलो तेल निकलता है। बाजार भाव प्रति किलो लगभग 500 रूपया है। इसके तेल का उपयोग सुगंधित साबुन, टूथपेस्ट, चाय, नमकीन, इत्रा, कोल्डड्रिंक और टूथपेस्ट आदि वस्तुओं में किया जाता है। इसे तराई, भाबर और मध्य हिमालयी क्षेत्रों में समान रूप से उगाया जा सकता है। इसकी नर्सरी पंतनगर, टिहरी और गोपेश्वर से प्राप्त की जा सकती है। नर्सरी पर राज्य सरकार 50 फीसदी अनुदान देती है। हांलाकि यह अनुदान पंजीकृत किसानों को ही देने की व्यवस्था है। उत्तराखण्ड में पांच टन तक लेमन ग्रास की खपत हो सकती है। जड़ी–बूटी शोध एवं विकास संस्थान गोपेश्वर ने संबंधित किसानों की सूची बनाई है। इसमें नैनीताल जिले के सर्वाधिक 400 किसानों समेत कुल 2763 किसान शामिल हैं।
166	17	जनवरी 05, 2009	अमर उजाला	'टेम्परेचर स्ट्रेस' से असमय आए बागों में फल	ग्लोबल वार्मिंग का असर बागों से लेकर खेतों तक मे दिखाई देने लगा है। जिन पेडों पर फरवरी के दूसरे सप्ताह तक बौंर दिखाई देते थे, वहां फल लग रहे है। बढते तापमान के चलते अब सेब के बागों को छह हजार फीट से ज्यादा ऊंचाई पर ले जाने की योजना पर काम शुरू कर दिया गया है। गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों ने इस बदलाव के लिए 'टेम्परेचर स्ट्रेस' को जिम्मेदार बताया है। वैज्ञानिकों के मुताबिक पिछले दशकों में तापमान में करीब तीन डिग्री सेल्सियस की वृद्वि हुई है। अब इसका असर फल और फसल चक्र पर भी दिखाई देने लगा है। सूबे में सेब, लीची, नाशपाती और आम के बागानों पर बदलते तापमान का असर दिखाई देने लगा है। कुमाऊं में मुक्तेश्वर, रानीखेत, चौबटिया, रामगढ, खेतीखान, शहर फाटक, चंपावत के कुछ हिस्सों में सेब के लकदक पेड दिखाई देते थे, लेकिन तापमान बढने से सेब की पैदावार के लिए आवश्यक चिलिंग रिक्वायरमेंट (सात डिग्री से कम का तापमान सौ से डेढ सौ घंटे) में गिरावट आई है। इससे सेब का उत्पादन घटा है। हालातों को देखते हुए अब सेब के बागानों को एक हजार फीट से ज्यादा ऊंचाई की तरफ शिफ्ट किया जा रहा है। तापमान वृद्वि के चलते सेब और नाशपाती में जहां फूल (बौंर) फरवरी में आना चाहिए, वहां रानीखेत के बागानों में दिसंबर–जनवरी में फल तक आ गए है।

167	17	जनवरी 21, 2009	अमर उजाला	'इकोलॉजी टेररिस्ट' ने उडाई नींद	वन भूमि पर तेजी से फैल रही लेंटाना घास जैव विविधता को प्रभावित कर रही है। इसका बढता प्रभाव पारिस्थितिकी तंत्र (इकोलाजी) के लिए खतरा बन रहा है। इसे देखते हुए वन अधिकारियों की नींद उड गई है। लेंटाना पर लगाम लगाने के लिए फारेस्ट रिसर्च इंस्टीटयूट (एफआरआई) की टीम ने हल्द्वानी में डेरा डाल दिया है। वन विभाग ने एक अभियान के दौरान कार्बेट पार्क में कुछ स्थानों से लेंटाना हटा अधिकारियों और वनस्पति शास्त्रीयों ने अध्ययन किया तो उनके होश उड गए। जहां लेंटाना घास लगी थी, वहां स्थानीय केवल 18 प्रकार की वनस्पतियां उग पाई। जहां लेंटाना नहीं थी, वहां पर 45 प्रकार की घास और वनस्पतियां निकली थी। तराई केंद्रीय वन प्रभाग के डीएफओ डा. पराग मधुकर धकाते कहते हैं कि लेंटाना आक्रमणकारी प्रजाति है, यह तो जानकारी थी लेकिन वह तेजी से अन्य वनस्पति की प्रजातियों को खत्म कर रही है, यह अध्ययन से पता चला। अगर लेंटाना यूं ही फैलती रही तो पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित होने की आशंका है। लेंटाना के इसी खतरे को देखते हुए वनाधिकारियों ने लेंटाना को 'इकोलॉजी टेररिस्ट' नाम दिया है। लेंटाना के बढते दायरे को रोकने के लिए उन्मूलन कार्यक्रम शुरू किया गया है, इसके बाद भी लेंटाना काबू में नहीं आ रही है। इसका दायरा जंगल से निकल कर कृषि योग्य भूमि की तरफ बढना शुरू हो गया है। ऐसे में एफआरआई की टीम ने यहां डेरा डाला हुआ है, हल्द्वानी में टांडा के पास टीम अध्ययन में जुटी है।
168	17	जनवरी 25, 2009	अमर उजाला	प्रयोगशाला में तैयार हुई यारसा गंबू	उच्च हिमालयी क्षेत्र में मिलने वाला यारसा गंबू (कीडा जडी) प्रयोगशाला मे तैयार हो गया है। करीब चार साल के शोध के बाद डिफेंस एग्रीकल्चर रिसर्च लैबोरेटरी (डीएआरएल) को इस दुर्लभ औषधी को लैब मे कल्चर (प्रसंस्करण) करने में सफलता मिली है। शोध मे लगे वैज्ञानिकों के अनुसार यह औषधी केवल सेक्सुअल पावर में नहीं बल्कि शरीर की क्षमता (स्टेमिना) बढाने में भी कारगार है, जो विशेषकर विषम परिस्थितियों में रहने वाले सैनिको के लिए संजीवनी साबित होगी। रक्षा जैव ऊर्जा अनुसंधान संस्थान जल्द ही इस उपलब्धि को पेंटेंट कराने जा रहा है। यारसा गंबू की तस्करी से इसके लुप्त होने का खतरा उत्पन्न हो गया है। इसे देखते हुए करीब चार साल पहले डीएआरएल ने इसको कृत्रिम तौर पर विकसित करने की योजना बनायी। इसके लिए वैज्ञानिकों ने शोध शुरू किया। चार साल बाद वैज्ञानिक प्रयोगशाला में यारसा गंबू के फंगस माइसेलियम को (कल्चर) करने में सफल हो गए है। शोध के दौरान वैज्ञानिक यारसा गंबू की कई खूबिया जानने मे सफल रहे है। वैज्ञानिकों के अनुसार यारसा गंबू ऊर्जा का असीमित भंडार है, जो केवल सेक्सुअल क्षमता को ही नहीं बढाता बल्कि शरीर के कई भागों के लिए रामबाण है। उच्च हिमालयी क्षेत्रों मे जहां आक्सीजन की मात्रा कम होती है, वहां शरीर इसकी आपूर्ति और कमी से होने वाले प्रभाव को कम करने में सफल रहता है। किडनी, जोडों के दर्द से लेकर रक्त कैसर में भी यह मुफीद है।

169	17	जनवरी 28, 2009	अमर उजाला	प्रदेश में मत्स्य पालन से किसानों की बदलेगी तकदीर	उत्तराखण्ड में मछली पालन से किसानों की तकदीर बदलने की योजना बनाई जा रही है। पंत कृषि विश्वविद्यालय का मत्स्य महाविद्यालय फ्रांस की संस्थाओं के सहयोग से उत्तराखंड में ट्राउट मछली के विकास के लिए काम कर रहा है। विश्वविद्यालय ने फ्रांस के सहयोग से 121 करोड रूपये की परियोजना तैयार की है। विदेशी नस्ल की ट्राउट मछली ठंडे पानी में पाली जाती है। इसे कश्मीर और हिमाचल प्रदेश में बृहद स्तर पर पाला जा रहा है। मत्स्य महाविद्यालय के अधिष्ठाता डा.एपी शर्मा ने बताया कि फ्रांस के तकनीकी सहयोग से शुरू की गई परियोजना के अंतर्गत केंदीय स्थान पर हैचरी बनाई जाएगी। गोपेश्वर स्थित हैचरी का आधुनिकीकरण किये जाने की योजना है। लगभग तीन सौ किसानों को अंगीकृत कर उन्हें तकनीक, बीज और चारा उपलब्ध कराया जाएगा। परियोजना के अंतर्गत 25 सौ टन ट्राउट पैदा करने का लक्ष्य है। इससे राज्य के दस हजार से ज्यादा लोंगों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिलेगा। उन्होनें बताया कि अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों के लिए रेनबो ट्राउट बहुत उपयोगी है। इसे ठंडे पानी वाली नदियों और झरनों में पालना उपयोगी रहेगा। डा. शर्मा ने सलाह दी कि मछली पकडने के लिए डाइनामाइट और जहर के इस्तेमाल से बचना चाहिए। ऐसा करने से मछलियों को नुकसान पहुंचता है और जल भी प्रदूषित हो जाता है।
170	17	जनवरी 28, 2009	अमर उजाला	सुरक्षित नहीं है राज्य पक्षी का अस्तित्व	उत्तराखण्ड के वनों में राज्य पक्षी मोनाल का अस्तित्व सुरक्षित नहीं दिखाई दे रहा है। जंगलों मे इनकी संख्या उंगलियों मे गिनने लायक रह गई है। गढवाल वृत के चार प्रभागों में तो सिर्फ 26 ही मोनाल रह गए है। राज्य पक्षी मोनाल उत्तराखंड में 23 सौ से पांच हजार मीटर ऊंचाई वाले जंगलों में पाया जाता है। जानकारों के अनुसार पहले यह जंगलों में काफी दिखाई देता था, लेकिन धीरे–धीरे इसकी संख्या घटती जा रही है। विगत जून माह में वन्य जीवों के साथ–साथ वन विभाग द्वारा मोनाल, चील, गिद्व आदि पक्षियों की गणना की गई तो इस पक्षी की संख्या उंगलियों मे गिनने लायक निकली। वन विभाग के अनुसार पहली बार हुई इस पक्षी की गणना में गढवाल वृत्त के चार प्रभागों में मात्र 26 मोनाल ही पाए गए, जिनमें सर्वाधिक 19 मोनाल बद्रीनाथ वन प्रभाग बाकी सात मोनाल गढवाल वन प्रभाग पौडी के दूधातोली और कोदिया बगड के जंगल में पाए गए। रूद्रप्रयाग और सिविल सोयम वन प्रभाग पौडी में एक भी राज्य पक्षी नहीं दिखाई दिया।
171	17	फरवरी 05, 2009	दैनिक जागरण	प्रसिद्व महाशीर मछली का अस्तित्व संकट में	रामगंगा सहित पहाड की अन्य नदियों मे बहुतायत पाये जाने वाली महाशीर मछली अब विलुप्ति की कगार पर हैं। नदियों में इनकी संख्या नगण्य सी रह गयी है। कारण नदियों में अवैधानिक तरीके से हो रहे डायनामाइटिंग, विद्युत प्रवाह व विषैले रसायनों का प्रयोग माना जा रहा है। मत्स्य विभाग के विशेषज्ञ इससे चितिंत है। कुमाऊं तथा गढवाल मंडलों में जल धाराओं के करीब 700 किमी लम्बे भूभाग में पूर्व से महाशीर मछली की उपलब्धता रही है। कुमाऊं मंडल मे इसकी दो प्रजातियां टारटार एवं टार प्यूटीटोरा 400 से 1200 मीटर की ऊंचाई वाली जल धाराओं में पायी जाती है। जानकार लोग बताते है, कि पूर्व में बहुतायत रूप से दिखाई देने वाली यह प्रजाति अब धीरे–धीरे विलुप्त होती जा रही है। यहां रामगंगा नदी में भी महाशीर प्रजाति की संख्या बहुत कम रह गयी है। जानकार लोगों का कहना हैं कि बीते कुछ वर्षों से नदियों व जल धाराओं में आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इस प्रजाति की बडे पैमाने पर अवैधानिक तरीकों से शिकारमाही होती आई है, तथा आज इसकी उपलब्धता में भारी कमी आ गई है। विभाग के सहायक निदेशक एलएम जोशी का मानना हैं कि यदि विषैलें रसायनों, विस्फोटों व विद्युत प्रवाह जैसे तौर–तरीकों पर प्रभावी नियत्रांण नहीं हुआ तो पर्वतीय जल धाराओं में यह बहुमूल्य प्रजाति लुप्त हो जायेगी। यहां रामगंगा नदी में भी बहुतायत संख्या में पायी जाने वाली इस प्रजाति का अस्तित्व खतरें में है। वर्तमान मे खीडा व चौखुटिया क्षेत्र के बीच नदी में यह मछली बहुत कम दिखाई दे रही है।

172	17	अप्रैल 01, 2009	दैनिक जागरण	ढाई सदी पहले शुरू हो गई थी ग्लोबल वार्मिंग	दुनिया में ग्लोबल वार्मिंग करीब ढाई सदी पहले शुरू हो गई थी। 18वीं सदी के मध्य में शुरू हुई इस ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव सबसे पहले हिमालय के ग्लेशियरों पर पडना शुरू हो गया था। ये नए तथ्य हैं दून स्थित वाडिया इंस्टीट्यूट आफ हिमालयन जियोलाजी के वैज्ञानिक रवीन्द्र कुमार के एक अध्ययन नामी विज्ञान शोध पत्रिका 'करंट साइंस' में भी प्रकाशित हुआ है। रवीन्द्र कुमार ने केदारनाथ धाम के पास स्थित चारेबाडी ग्लेशियर के अध्ययन से ये नए तथ्य उजागर किए है। रूद्रप्रयाग जिले में स्थित चोरबाडी ग्लेशियर केदारनाथ डोम के दक्षिणी ढाल पर पैदा होकर मंदाकिनी नदी को जन्म देता है। रवीन्द्र कुमार का कहना हैं कि 18वीं सदी के मध्य से जब से ग्लोबल वार्मिंग शुरू हुई, यह ग्लेशियर भी सिकुडना शुरू हुआ था। रवीन्द्र ने वैज्ञानिकों के साथ ग्लेशियर के घुमावों के मोरन्स में मौजूद लाइकेन्स का विस्तृत अध्ययन किया। मोरेन्स या हिमोढ ग्लेशियर के बहाव के साथ आई चट्टानों और मिट्टी के जमाव से बनते है। अध्ययन के तहत 2000 से ज्यादा लाइकेन की माप–जोख की गई। इन लाइकेन में एक मिमी प्रतिवर्ष की बढत पाई गई। ग्लेशियर के आगे बडने और पीछे खिसकने को दर्शाने वाले चार चरणों में ग्लेशियर द्वारा लाए गए मलबे की क्षैतिज काट में बडे गोल पत्थरों पर 173, 155, 94 और 92 मिली के लाइकेन पाए गए। रविन्द्र कुमार के मुताबिक वातावरण से संपर्क के बाद लाइकेन की वृद्वि दर और उसके उगने मे लगा समय बताता है कि इस क्षेत्र में 258 वर्ष पहले ही जलवायु परिवर्तन शुरू हो गया था। उनके मुताबिक चोरबाडी ग्लेशियर 14वीं सदी के मध्य में बनना शुरू हुआ और लधु हिमयुग के साथ यानी सन साथ यानी सन् 1748 तक आगे बढता रहा। आज वैज्ञानिक तथ्य इशारा कर रहे है, कि लघु हिमयुग 19वीं सदी के बजाय 1750 से 1800 के बीच अपने चरम पर था। पिछले 400 वर्षों मे 1600 ई, से 1700 ई, तक ग्लेशियर लगातार आगे बढते रहे और 18वीं सदी यानी 1780 से लेकर 1795 तक अपने चरमोत्कर्ष पर रहे।
173	17	अप्रैल 01, 2009	अमर उजाला	थुनेर के पौध उगाने में मिली सफलता	वन विभाग को उच्च हिमालयी क्षेत्र में कैंसर के उपचार के काम आने वाले बेशकीमती थुनेर के पौध उगाने में सफलता मिली है। विभाग के कपकोट स्थित रेंज कार्यालय के समीप बनी हाईटेक पौधशाला में इस समय छतीस हजार पौंधे लहलहा रही है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इससे बनने वाली दस ग्राम दवा की कीमत इस समय तीन लाख रूपये बताई जा रही है। विभाग का बरसात में विभिन्न जंगलों में इन पौधों को रोपित करने का लक्ष्य है। वन अधिकारी मोहन सिंह भंडारी को उच्च हिमालयी क्षेत्र के करीब छह हजार फीट की ऊंचाई में होने वाली बेशकीमती थुनेर के पौधों को उगाने में सफलता मिली है। रेंज कार्यालय की पौधशाला 1230 मीटर की ऊंचाई पर हैं श्री भंडारी ने बताया कि पौधों के लिए यहां हाइटैक पालीहाउस बनाए गए है। इनके देखरेख के लिए नियमित श्रमिक लगाए गए है, जबकि वह खुद भी सुबह शाम नर्सरी देख रहे है। उन्होने बताया कि हाइटेक पाली हाउस में इस समय 36 हजार पौधें तैयार हो रहे है। बरसात में इनका रोपण होगा। श्री भंडारी के अनुसार गत वर्ष भी नर्सरी में 22 हजार पौध तैयार हुए। उन्होंने कहा कि विभाग इस बार तैयार हुए पौधों को मिकिलाखल्पट्टा, बडी पन्याली तथा मल्खाडुंगर्चा के 40 हैक्टेयर वन क्षेत्रा मे बरसात मे रोपित करेगा।

174	17	अप्रैल 04, 2009	दैनिक जागरण	हिमालय में हो सकेगी भूकंपों की भविष्यवाणी।	भूकंप की दृष्टि से संवेदनशील माने जाने वाले उत्तराखंड समेत सभी हिमालयी राज्यों के साथ ही नेपाल, भूटान, बांग्लादेश और मयांमार तक के हिमालयी क्षेत्रों में भूकंपीय गतिविधि का पूर्वानुमान लगाने में जल्द ही मदद मिल सकेगी। भारतीय भूर्गभ सर्वेक्षण विभाग (जीएसआई) जम्मू–कश्मीर से उत्तर पूर्वी राज्यों, यहां तक कि भूटान, म्यांमार तक की भूगर्भीय हलचलों के अध्ययन के लिए एक नेटवर्क स्थापित कर रहा है। दुनिया में भूकंप के मद्देनजर छठा सबसे ज्यादा संवेदनशील क्षेत्र मानते है, जबकि भारत सरकार ने जम्मू–कश्मीर, हिमाचल, उत्तराखंड, उत्तर बिहार के कुछ इलाके व उत्तर पूर्व के राज्यों को भूकंप की दृष्टि से सबसे संवेदनशील क्षेत्रों की श्रेणी मे रखा है। जीएसआई का नेटवर्क स्थापित होने पर स्थानीय व क्षेत्रीय स्तर के भूकंपों का अध्ययन संभव हो सकेगा, जिसके पैटर्न का अध्ययन कर संवेदनशील हिमालयी क्षेत्र व उत्तर पूर्वी क्षेत्रों के लिए एक स्ट्रेस पैटर्न मॉडल बनाया जा सकेगा। हाल में ही जीएसआई के महानिदेशक पीएम तेजाले ने भी इसी सिलसिले में त्रिपुरा की राजधानी अगरतला स्थित त्रिपुरा–मिजोरम प्रभाग में मल्टी पैरामीट्रिक जियोफिजिकल ऑब्जरवेट्री कस उद्घाटन किया है। इस सेसमिक ऑब्जरवेट्री मे डिजिटल ब्रॉड बैंड व शॉर्ट पीरियड सेस्मोग्राफ भी लगाया गया है। ऑब्जरवेट्री में सैटेलाइट आंकडों के साथ ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस) की भी सुविधा रहेगी।
175	17	अप्रैल 24, 2009	अमर उजाला	बांज और बुरांश के पेडों पर फर्न का प्रकोप	लगभग पांच हजार से दस हजार फीट की ऊंचाई पर उगने वाले बांज और बुरांश के पेड हिमालय में पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण माने जाते है। पिछले कुछ समय से इन वृक्षों का शाखाओं में उगनें वाली एक विशिष्ट फर्न प्रजाति इन बहुमूल्य पेडों को बीमार कर रही है, जिससे कई पेड सूख चुके है। बांज और बुरांश हिमालय के वनो की शान है। पेडों के कारण वनों में हरियाली तो रहती है साथ ही जल स्रोतों के संवर्धन में भी इन पेडों का महत्वपूर्ण योगदान है। इसी को देखते हुए बुरांश को उत्तराखड का राज्य वृक्ष भी घोषित किया गया है। लेकिन पिछले कुछ समय से उच्च हिमालय क्षेत्रों मे इन बहुमूल्य पेडों को गंभीर बीमारी ने घेर लिया है। ब्रहमताल भेकलताल क्षेत्र का भ्रमण करके लौटे कुमाऊं विश्वविद्यालय के प्रो. एनसी ढौडियाल और प्रो. विजया ढौडियाल ने बताया कि 6500 फीट से ऊपर तथा हिमालय क्षेत्र से लगे हुए बुग्यालों की सीमा तक के वन क्षेत्रों में फर्न प्रजाति का प्रकोप स्पष्ट दिखाई पड रहा है। कई पेड सूख चुके है। उन्होने बताया कि आली बेदनी बगजी बुग्याल संरक्षण समिति के अध्यक्ष दयाल सिंह पटवाल ने इस बीमारी के बारे में वन अनुसंधान संस्थान देहरादून के विशेषज्ञों को लिखित रूप से जानकारी दी है। वन विशेषज्ञों ने कई प्रभावित पेडों की जांच भी की है। प्रो. ढौडियाल का कहना है कि बांज और बुरांश के पेडों को बीमारी से मुक्त करने के लिए वन विभाग के अधिकारियों को शीघ्र ठोस कदम उठाने चाहिए।

176	17	मई 21, 2009	अमर उजाला	क्या सूखने लगी है नैनी झीलघ	क्या नैनी झील सूखने लगी है ? उपलब्ध आंकडे और हालात कुछ ऐसा ही बयान कर रहे है। नैनी झील का जलस्तर सारे रिकार्ड तोडता हुआ अभी तक के सबसे निचले स्तर को पार कर शून्य से भी नीचे चला गया, जो मई माह के औसत से चार फुट कम है। झील के 32 वर्षो के रिकार्ड के अनुसार ऐसी स्थिति पहली बार आई है। इससे पहले मात्र दो बार यह स्तर शून्य तक पहुंचा। बीते पांच दिनों से झील का स्तर प्रतिदिन नौ इंच की दर से घट रहा है। नैनी झील का स्तर बीती 15 मई को शून्य से नीचे चला गया था। अमूमन मई माह में यह न्यूनतम सवा चार फुट रहा है। झील के डांठ स्थित कंट्रोल रूम में उपलब्ध 1977 से अब तक के रिकॉर्ड के मुताबिक इससे पहले वर्ष 2004 एवं उससे पूर्व 1980 में कुछ दिन यह स्तर शून्य तक पहुंचा था। कंट्रोल रूम इंचार्ज अवर अभियंन्ता सीएस पांडे ने बताया कि जलस्तर गिरने का मुख्य कारण इस वर्ष कम बारिश है। आंकडो के अनुसार इस वर्ष जनवरी से मई तक मात्र 98 मिलीमीटर वर्षा हुई। बीते वर्षो में इस अवधि मे पर्याप्त वर्षा हुई। कंट्रोल रूम के नंदा बल्लभ पांडे ने बताया कि बीते पांच दिनों से लगातार झील को औसत जलस्तर शून्य से नीचे है। इस अवधि मे झील का औसत जल स्तर सवा चार फुट होना चाहिए था। मई माह के 15 दिनों मे झील का जलस्तर सवा चार फुट से नीचे शून्य हो गया, यानी औसतन प्रतिदिन साढे तीन इंच जलस्तर घटा। फिलहाल यह हालात बेहद चिंताजनक है। तब भी किसी विभाग का इस ओर ध्यान नहीं है।
177	17	जून 14, 2009	अमर उजाला	देश में बनेगें चार नए टाइगर रिजर्व	केंद्रीय वन एवं पर्यावरण राज्यमंत्री जयराम रमेश ने कहा कि देश के चार राज्यों में नए टाइगर रिजर्व बनेगें। साथ ही एसपीएफ के तहत 112 नए जवानों की भर्ती की जाएगी। श्री रमेश ने यह जारकारी शनिवार को कार्बेट टाइगर रिजर्व के ढिकाला टूरिज्म जोन पहुंचने के बाद पत्रकारों से बातचीत में दी। कार्बेट पार्क जाते समय कालागढ वन विश्राम भवन में केंद्रीय मंत्री जयराम रमेश ने कहा कि देश इस समय 37 टाइगर रिजर्व है। अब उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, झारखंड और उडीसा में नए टाइगर रिजर्व बनेगें। स्पेशल प्रोटेक्शन फोर्स के तहत 112 नए जवान भर्ती किए जाएंगे। कालागढ गेट पर वनाधिकारियों ने श्री रमेश का स्वागत किया। इससे पूर्व सीटीआर के 181 वनगूजरों के नंबरदार जनप्रतिनिधियों ने उनसे संरक्षित क्षेत्र से बाहर आबादी के किनारे अन्यत्र विस्थापन और आजिविका मे सुधार की गुहार लगाई। उसके बाद केंद्रीय मंत्री के साथ संरक्षित प्रजाति के वन्यजीवों को बेहतर वासस्थल दिलाने, वन, वन्यजीव संबधी अपराध रोकने और पर्यटन गतिविधियों को पर्यावरण संरक्षण से जोडने पर चर्चा की। इस मौके पर राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण के सदस्य सचिव राजेश गोपाल, प्रदेश के मुख्य वन्यजीव संरक्षक, श्रीकांत चंदोला, कार्बेट टाइगर रिजर्व के निदेशक विनोद कुमार सिंघल, उपनिदेशक सीके कविदयाल, कुंवर विजेद्र सिंह आदि मौजूद थे।

178	17	सितम्बर 18, 2009	दैनिक जागरण	नौ जिलों के लिए जड़ी–बूटी क्लस्टर तैयार	उत्तराखण्ड को हर्बल स्टेट बनाने की योजना के तहत नौ जिलों में 219 क्लस्टर गठित किए जा चुके है। इसके तहत 1950 गाँवों को समेटा गया है। इन गाँवों में 4980 हेक्टेयर क्षेत्र में जड़ी–बूटी का उत्पादन किया जाएगा। अभी चार अन्य जिलों में क्लस्टर तैयार करने की यह प्रक्रिया जारी है। चमोली, रूद्रप्रयाग, पिथौरागढ़, बागेश्वर, चंपावत, नैनीताल, अल्मोड़ा, टिहरी तथा ऊधमसिंह नगर जिलों के 1950 गाँवों को जोड़ते हुए 219 क्लस्टर तैयार किए गए है। इसके लिए जड़ी–बूटी शोध संस्थान गोपेश्वर को नोडल एजेंसी बनाया गया है। संस्थान के निदेशक डा. आर.सी. सुंदरियाल ने बताया कि हर ब्लाक में क्लस्टर बनाए जा रहे हैं। भौगोलिक स्थिति के अनुसार प्रजातियां तय की जा रही है। किसानों को जागरूक करने के प्रयास किए जा रहे हैं। नर्सरी विकसित की जा रहीं हैं। किसानों को रोपण के लिए हरसंभव सहायता एवं प्रशिक्षण दिया जाएगा। उत्पादित माल की मार्केटिंग में भी किसानों को सहयोग किया जाएगा। संस्थान के कुमाऊँ प्रभारी विजय भट्ट कहते हैं कि संपूर्ण कार्ययोजना कृषकों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाई जा रही हैं। जलवायु के हिसाब से प्रजातियों का चयन किया जा रहा है। उच्च हिमालयी क्षेत्रों में कूट, कुटकी, जम्बू, फरण, काला जीरा, गंदरायण उत्पादित किया जाएगा, मध्य ऊँचाई वाले क्षेत्रों में तगर, तावर, बड़ी इलायची, कैमोमाइल, रोजमेरी, तेजपात, आंवला, रीठा का कृषिकरण किया जाएगा। निचली घाटियों में सर्पगंधा, शतावर, लेमनग्रास, मिंट, आर्टीमीसिया और एनुआ आदि का उत्पादन करने की योजना है। क्लस्टर के हिसाब से हर जिले में संबंधित कच्चे माल का उत्पादन करने वाली लघु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की जाएगी।

179	17	सितम्बर 26, 2009	दैनिक जागरण	अब हिमालय की फिक्र 'राष्ट्रीय कार्य योजना' को दिया जा रहा है अंतिम रूप	जलवायु परिवर्तन पर कोपेनहेगन दौर की माथापच्ची से पहले भारत को हिमालय की सेहत की भी फिक्र सताने लगी है। विश्व बिरादरी के आगे अपने तर्को को धार देने की कवायद में सरकार हिमालय क्षेत्र में आने वाले इलाकों में विकास के तौर–तरीकों को नए दिशा–निदेर्शो में बाँधने की तैयार कर रही है। हिमालय क्षेत्र के पारिस्थितिकीय तंत्र के नाजुक ताने–बाने को सहेजने के लिए केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय एक नई 'राष्ट्रीय कार्ययोजना' को अंतिम रूप दे रहा है। इसके तहत जलवायु परिवर्तन के कारण हिमालय की सेहत में हुए बदलावों की वैज्ञानिक पड़ताल के साथ–साथ इसे बचाने के उपायों की फेहरिस्त तैयार की जा रही है। भारतीय हिमालय क्षेत्र की सेहत पर तैयार पर्यावरण मंत्रालय की ताजा रिपोर्ट कहती है कि इस इलाके के नाजुक पारिस्थितिकीय तंत्र को सहेजना अब पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में जीवन के लिए जरूरी हो गया है। मंगलवार को जारी होने वाली गवर्नेस फार सस्टेनिंग हिमालयन ईकोसिस्टम : गाइडलाइंस एंड बेस्ट प्रैक्टिसेज नामक इस रिपोर्ट में सरकार ने माना है कि हिमालय क्षेत्रा इस बड़े दबावों और कड़ी चुनौतियों से जूझ रहा है। लिहाजा भारत के 16 फीसदी से ज्यादा इलाके में फैले हिमालय क्षेत्र में शहरीकरण, पर्यटन, जल सुरक्षा, ऊर्जा, वन प्रबंधन और बुनियादी ढांचे के विकास के मौजूदा तौर–तरीकों में बदलाव की जरूरत है। पर्यावरण मंत्रालय ने रिपोर्ट में माना है कि हिमालय क्षेत्र में अंधाधुंध बढ़ते भूमि के व्यावसायिक उपयोग और टूरिस्ट रिसार्ट के निर्माण ने हिमालय के पारस्थितिकीय तंत्र को काफी नुकसान पहुँचाया है। इसलिए पूरे हिमालय क्षेत्र के राज्यों में भूमि कानूनों में फौरन माकूल बदलाव किए जाने चाहिए। इसके अलावा मंत्रलय के ताजा आकलन में 10 राज्यों और असम व पश्चिम बंगाल के पहाड़ी इलाकों तक फैले हिमालय क्षेत्र में पयर्टन को भी नियंत्रित करने की जरूरत बताई गई है। गंगोत्री, यमुनोत्री, बद्रीनाथ, केदारनाथ, वैष्णोदेवी, अमरनाथ, हेमकुंड साहिब सहित अनेक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थानों का घर कहलाने वाले हिमालय क्षेत्र में पर्यटन के पर्यावरण–मित्र तरीके अपनाने की जरूरत है। इस बीच सरकार बड़े पैमाने पर हिमालय की सेहत का ताजा सूरते हाल जानने के उपाय भी शुरू कर रही है। इसके तहत अल्मोड़ा स्थित जीबी पंत इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन एन्वायरनमेंट एंड डेवलपमेंट (जीबीपीआईएचईडी) और बेंगलूर स्थित सेंटर फॉर मैथमेटिकल मांडलिंग एंड कम्प्यूटर सिमुलेशन मिलकर हिमालय के क्षेत्र में मौसम के मिजाज का पता लगाने के लिये 52 मी0 ऊँचे टावरों की श्रृंखला खड़ी कर रहे हैं। इसके अलावा जीबीपीआईएचईडी पूरे हिमालय क्षेत्र में स्थायी जीपीएस सेंटर भी बना रहा है। गौरतलब है कि जलवायु परिवर्तन पर बने अंतर सरकारी मंच, आईपीसीसी ने 2007 में अपनी चौथी ऑकलन रिपोर्ट के दौरान पूरे हिमालय क्षेत्र को डाटा डेफिशिएंट यानी एक ऐसा इलाका घोषित किया था जिसके बारे में पुख्ता आँकड़े ही मौजूद नहीं हैं।

180	17	अक्तूबर 03, 2009	अमर उजाला	देवी–देवता करेंगे वनों की रखवाली	अब देवी–देवता भी क्षेत्र के जंगलों की रक्षा करेंगे। देव परंपरा से जंगल का संरक्षण करने के लिए वन विभाग विशेष पहल करेगा। इसके तहत देवी देवताओं को जंगलों का संरक्षक घोषित किया जाएगा और मंदिर कमेटी व देव कारिंदे वन विभाग की सहायता करेगें। डीएफओ स्वर्ण सिंह ने बताया कि राजगढ़ में जंगलों की संख्या अधिक है और कुछ लोग इन्हें नुकसान पहुँचा रहे हैं। इसको देखते हुए वन विभाग ने जंगलों को स्थानीय देवी–देवताओं के हवाले करने का निर्णय लिया है। डीएफओ ने बताया कि क्षेत्र में कुछ जंगल पहले ही देवताओं के संरक्षण में है। देवताओं के संरक्षण में जंगलों की हालत काफी अच्छी है। देवताओं की इजाजत के बगैर इन जंगलों में लोग पेड़ों को हाथ नहीं लगाते। इस कारण ये सुरक्षित बचे हुए है। इस तरह की व्यवस्था नौहरा बांदल और छोगटाली गांव में काफी समय से चली आ रही है। इस व्यवस्था के अच्छे परिणामों का खुलासा करते हुए सनियो दीदग के वेद ठाकुर और जियालत ने बताया कि उनके कुलदेवता बिनट महाराज के नाम पर ग्राम बांदल में लगभग 200 साल पहले पौधे लगाए गऐ थे। अब यहां बड़ा जंगल तैयार हो चुका है। देवता के नाम होने के कारण इन जंगलों में पेड़ नही काटते है। इसको देखते हुए वन विभाग ने क्षेत्रा के अन्य जंगलों को भी देवताओं के हवाले करने का निर्णय लिया है। इस परंपरा के अनुसार स्थानीय लोग देवताओं की आज्ञा के बगैर जंगलों से पेड़ नही काटेंगे। विभाग संबंधित जंगलों के देवी–देवताओं की सूची तैयार कर रहा है और लोगों से सलाह ले रहा है। स्थानीय निवासी सुरेन्द्र राठौर, एसजे चौहान, जय प्रकाश, रणवीर, वेद प्रकाश और पृथ्वीराज ने बताया कि वन विभाग द्वारा बनाई जा रही साझा वन प्रबंधन समितियों के साथ मंदिर कमेटियों व सदस्यों को भी जोड़ा जाएगा। इससे वनों के संरक्षण सुनिश्चित होगा।

181	17	अक्तूबर 06, 2009	अमर उजाला	सबसे तेजी से पिघल रहे हमारे ग्लेशियर	वैसे तो ग्लोबल वार्मिंग का असर दुनियाँ भर के ग्लेशियरों पर पड़ रहा है लेकिन भारत और चीन में स्थित ग्लेशियर कुछ ज्यादा ही तेजी से पिघल रहे हैं। हिमालय और तिब्बती पठार में स्थित ग्लेशियर पर अध्ययन करने वाले चीन और भारत के वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है। दुनिया की लगभग आधी आबादी के बीच से होकर गुजरने वाली नदियाँ इन्हीं ग्लेशियरों से निकलती हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि लकड़ी जलाने और डीजल के इस्तेमाल से निकलने वाले धुएँ के बादल इन ग्लेशियरों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचा रहे हैं। गार्जियन अखबार की रिपोर्ट के मुताबिक इस अध्ययन के परिणाम इस माह कश्मीर में होने वाले एक कार्यक्रम में पहली बार घोषित किए जाएंगे। पुराने डीजल इंजनों और चूल्हों में इस्तेमाल से होने वाले उपलों और लकड़ी से निकलने वाले ब्लैक कार्बन के इन बादलों का हिमालयी क्षेत्र के ग्लेशियरों पर बुरा असर पड़ रहा है। वैज्ञानिकों का कहना है कि कार्बन डाई ऑक्साइड से ग्लोबल वार्मिंग को स्वीकार कर लिया गया है लेकिन विकासशील देशों से पैदा होने वाले इस ब्लैक कार्बन की कड़ी आलोचना की जा रही है। वैज्ञानिक कहते हैं कि एक बार ग्लेशियरों पर ब्लैक कार्बन जम जाता है तो यह सूरज की गर्मी सोख लेता है, जबकि सामान्य तौर पर यह यह गर्मी बर्फ के द्वारा परावर्तित कर दी जाती है। इसी वजह से बर्फ पिघल रही है। दिल्ली में एनर्जी एंड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट (टेरी) के प्रोफेसर सैयद हसनैन ने कहा कि यह एक बड़ी समस्या है, जिसकी हम अनदेखी कर रहे है। हमें हिमालय में उन जगहों पर ब्लैक कार्बन जमा मिला है, जिनके बारे में समझा जाता था कि यहाँ पर्यावरण साफ है। इंस्टीट्यूट ने हिमालय क्षेत्र में कश्मीर के खोलाई ग्लेशियर पर और सिक्किम में एक–एक सेंसर लगाए हैं। इस क्षेत्र के ग्लेशियरों से एशिया की अधिकांश प्रमुख नदियाँ निकलती हैं। इन ग्लेशियरों के पिघलने से निचले क्षेत्रों में बाढ़ आने का खतरा भी है। हसनैन कहते हैं कि भारत और चीन दुनियाँ का एक तिहाई ब्लैक कार्बन पैदा करते हैं। इसे रोकने की दिशा में दोनों देशों के प्रयास भी काफी धीमे हैं। चीन में फिर भी सरकार ने कुछ ध्यान दिया है। लेकिन भारत इस मामले में अब भी सो रहा है, जबकि ब्लैक कार्बन का उत्सर्जन कम करना काफी सस्ता है।
182	17	अक्तूबर 24, 2009	अमर उजाला	ग्लोबल वार्मिंग के चलते 'सर्दी' आगे खिसकी	ग्लोबल वार्मिंग के चलते दिन प्रतिदन मौसम मे हो रहे बदलाव से सर्दी का मौसम खिसक कर आगे चला गया है। अक्तूबर माह के अंतिम दिनों में भी लोगों को सर्दी का इंतजार करना पड रहा है। आगे खिसकते सर्दी के मौसम से अक्तूबर माह में तापमान सामान्य से अधिक दर्ज किया जा रहा है। उधर, दिवाली के कारण हुए प्रदूषण से भी वातावरण में गरमी बढ़ी है। अक्तूबर माह के अंतिम सप्ताह में सामान्य तापमान 31 डिग्री सेल्सियस और 14 डिग्री सेल्सियस के आसपास रहता है, जबकि इस वर्ष अधिकतम तापमान तो सामान्य से अधिक चल रहा है, लेकिन वही न्यूनतम तापमान लगातार ऊपर नीचे हो रहा है। इसके चलते मौसम में गर्मी बरकरार है। पिछले कुछ दिनों के तापमान पर नजर दौड़ाई जाए तो अधिकतम तापमान 33 से 31.4 डिग्री के बीच रहा तो वही न्यूनतम तापमान 18 डिग्री सेल्सियस से 13.9 डिग्री सेल्सियस तक दर्ज किया गया। मौसम विभाग के माहिरों के मुताबिक पिछले पांच वर्षों से तापमान में काफी बदलाव आ चुका है। अक्तूबर माह में हल्की ठंड महसूस होने लगती थी। लेकिन अब ऐसा नहीं है क्योंकि अक्तूबर माह का तापमान सामान्य से अधिक रहने लगा है। अगर पश्चिमी विक्षोभ का प्रभाव बनता है तो मौसम में बदलाव हो सकता है। लेकिन इसकी संभावना कम नजर आ रही हैं। उन्होंने कहा कि इस सीजन में धान की बुआई समय पर हुई है, रोक के बाद भी लोक कटाई के बाद पराली को जलाने से नहीं रूक रहे। उधर, फेस्टिवल सीजन में पटाखे जलाने से होने वाला प्रदूषण भी मौसम को प्रभावित करता है।

183	17	अक्तूबर 30, 2009	अमर उजाला	हिमालय को बचाने के लिए एकजुटता जरूरी	पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने में पहाड़ी राज्य महत्वपूर्ण दायित्व निभा रहे हैं। हिमालय बचाने को पहाड़ी राज्यों के एकजुटता के साथ प्रयास जरूरी है। ग्लेशियर, जलवायु परिवर्तन पर हिमालय राज्यों के मुख्यमंत्रियों का सम्मेलन मील का पत्थर साबित होगा। दो दिवसीय सम्मेलन का शुभारंभ हिमांचल की मुख्य सचिव आशा स्वरूप ने किया। उन्होंने कहा कि इसमें प्राथमिकताएं तय कर हिमालयी राज्यों के मुख्यमंत्रीयों के साथ विशेषज्ञों के सुझाव साझा किए जाएंगे। हिमालय को बचाने के लिए आवश्यक है कि पहाड़ी राज्यों में बर्फ से आच्छादित पहाड़, नदियाँ व घने वन स्थायी रूप से मौजूद रहें। देश के सभी पहाड़ी राज्य शहरीकरण व पर्यटन समेत विभिन्न दबाव झेल रहे हैं। उद्घाटन सत्र में उत्तराखण्ड के पूर्व मुख्य सचिव डा. आरएस टोलिया, आईसीआईएमओडी के महानिदेशक एंड्रीज शहल्ड, सीएसआईआर पालमपुर के निदेशक डा. पी एस आहूजा, टीईआरआई दिल्ली के प्रो. एसआई हस्नैन, हिमाचल की अतिरिक्त मुख्य सचिव सरोजनी गंजु ठाकुर समेत विभिन्न संस्थाओं और स्वयंसेवी संगठनों के प्रतिनिधि मौजूद थे। हिमालय नीति अभियान के कुलभूषण उपमन्यु ने सम्मेलन के दौरान कई सवाल उठाए। उन्होंने कहा कि मेकेनिकल एग्रीकल्चर का जलवायु पर विपरीत असर हो रहा है। नेशनल एक्शन प्लान में आरगेनिक खेती पर जोर देने की जरूरत है। पानी रोकने को बड़े बाँध प्रदेश में फिर कई लोगों को बेघर कर सकते हैं। केंद्र सरकार को हिमालय के प्रबंधन के लिए पहाड़ी राज्यों को अतिरिक्त धन देना चाहिए। ग्लोबल वार्मिंग से हिमालय के कई ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे है। हिमाचल का पार्वती, पिंडारी, समुद्र टापू और हामटा ग्लेशियर का दायरा लगातार कम हो रहा है। कनक्लेब के दौरान विशेषज्ञों द्वारा यह खुलासा करते हुए लगातार पिघलते ग्लेशियरों पर चिंता जताई।
184	17	नवम्बर 05, 2009	दिव्य हिमाचल	ग्लेशियरों को मापेंगे वैज्ञानिक	प्रदेश के ग्लेशियरों को जल्द इंटरनेशनल सेंटर फार इंटीग्रेटेड माउंटेन डिवेलपमेंट (इसीमोड) काठमांडू (नेपाल) और गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान अल्मोड़ा के वैज्ञानिक मापेंगे। ग्लोबल वार्मिंग से प्रदेश के ग्लेशियरों पर कितना असर पड़ा है, इसको करीब से देखने के लिए जल्द उक्त तीनों संस्थानों के वैज्ञानिकों का दल ग्लेशियरों के क्षेत्रों की तरफ रवाना होगा। इस बात का खुलासा जी0 बी0 पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान के वैज्ञानिक डा. जेसी कुनियाल व डा. एसएस सामंत ने 'दिव्य हिमाचल' के साथ विशेष भेंट में किया है। उन्होंने कहा कि दो दिन तक ग्लोबल वार्मिंग से हिमालय के ग्लेशियरों पर पड़े 52 वर्षो के असर को एक चित्र प्रदर्शनी में दिखाया गया, लेकिन अब जल्द ही प्रदेश के ग्लेशियरों पर भी एक ऐसी प्रदर्शनी का आयोजन इसीमोड व जी0 बी0 पंत के वैज्ञानिकों द्वारा किया जाएगा। उन्होंने बताया कि किन्नौर, लाहुल–स्पीति, शिमला, चंबा के पांगों व भरमौर, सिरमौर जैसे क्षेत्रों में ग्लेशियरों पर बढ़ती ग्लोबल वार्मिंग का कितना असर पड़ा है, इस पर शोध कर चित्रों सहित वैज्ञानिकों द्वारा लोगों को बताया जाएगा। अब तक आधुनिक मशीनों द्वारा प्राप्त आंकड़ों के मुताबिक ही यह बताया जा रहा है कि ग्लोबल वार्मिंग से दर्जनों ग्लेशियरों का वजूद हिमालय में खत्म हो चुका है। वैज्ञानिकों का एक दल जल्द उनके संस्थान में जुटेगा और योजनाबद्ध तरीके से वह प्रदेश के उक्त जिलों के ग्लेशियरों की खैर खबर लेने के लिए रवाना होंगे। श्री कुनियाल ने बताया कि तेजी से पिघल रहे ग्लेशियरों से जहां निकट भविष्य में पानी के लिए प्रदेश में हाहाकार मचेगा, वहीं अकाल जैसी स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है। उधर इस बारे में डा. जेसी कुनियाल ने कहा कि प्रदेश के ग्लेशियरों की जमीनी सच्चाई जानने के लिए वैज्ञानिकों ने खाका तैयार किया है।

185	17	नवम्बर 10, 2009	अमर उजाला	घाटी में हिमपात मौसम परिवर्तन का नतीजा	लाहौल–स्पीति और पर्यटन नगरी मनाली में हुए हिमपात ने लोगों को आश्चर्य चकित कर दिया है। तकरीबन चार साल के पश्चात इस प्रकार असमय हिमपात हुआ है। इससे पहले वर्ष 2004 में अक्तूबर महीने में बर्फ के फाहे गिर गए थे। हालांकि, नवम्बर महीने में हुआ यह हिमपात कृषि, बागवानी और ग्लेशियरों के लिए फायदेमंद माना जा रहा है, मगर पर्यावरणीय वैज्ञानिक इसे मौसम परिवर्तन का ही नतीजा मान रहे हैं। पर्यावरणीय वैज्ञानिकों के अनुसार दिसंबर महीने के दूसरे पखवाड़े को बर्फवारी का सीजन माना जाता है। देशी–विदेशी सैलानियों की पसंदीदा सैरगाह मनाली नवम्बर महीने में ही बर्फ से लकदक हो गई है। वर्ष 2004 में मनाली और लाहौल घाटी में अक्तूबर महीने के पहले सप्ताह ही बर्फ पड़ी थी। उस समय घाटी वासियों को भारी नुकसान झेलना पड़ा। लोगों के हरे–भरे सेब के पेड़ बर्फ का भार नहीं सहने के कारण जड़ से उखड़ गए। जबकि कईयों की टहनियां आदि टूट गईं। ऊझी घाटी के वेद प्रकाश और ताराचंद्र ने बताया कि इस हिमपात से उन्हें भारी नुकसान उठाना पड़ा था। जी0 बी0 पंत हिमालयन पर्यावरण एवं विकास संस्थान के पर्यावरणीय वैज्ञानिक डा. जेसी कुनियाल कहते हैं कि हालांकि, इस बर्फबारी का फायदा ही है, मगर इसमें कोई संदेह नहीं कि असमय हुई यह बर्फबारी भी मौसम परिवर्तन का ही नतीजा है। उन्होंने कहा कि आमतौर पर बर्फबारी का उपयुक्त समय दिसंबर महीने का अंतिम पखवाड़ा माना जाता है। उन्होंने कहा कि दिसम्बर महीने में हुई बर्फबारी से कृषि और बागवानी को ज्यादा फायदा पहुँचता है। सेऊबाग में तैनात बागवानी अनुसंधान केन्द्र के मौसम वैज्ञानिक डा. मोहन लाल जांगड़ा का कहना है कि बर्फबारी से कृषि–बागवानी को फायदा ही पहुँचेगा।
186	17	नवम्बर 10, 2009	अमर उजाला	ग्लेशियर पिघल रहे हैं पर स्थिति गंभीर नहीं	हिमालयी ग्लेशियर पिघल तो रहे है लेकिन स्थिति इतनी भयावह नहीं है। अब तक ऐसा कोई वैज्ञानिक सबूत भी नहीं मिला है, जिससे कहा जा सके कि जलवायु परिवर्तन और ब्लैक कार्बन के कारण ही हिमालयी ग्लेशियर पिघल रहे हैं। यह निष्कर्ष हिमालयी ग्लेशियरों के अध्ययन पर तैयार रिपोर्ट के हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि हिमालयी ग्लेशियर उस रफ्तार से नहीं पिघल रहे हैं, जैसा कि पश्चिमी देशों की रिपोर्ट कहती रही हैं। इस रिपोर्ट में हालांकि माना गया है कि हिमालयी ग्लेशियरों की स्थिति ठीक नहीं है। हिमालयी क्षेत्र में जो कूड़ा–करकट जमा हो गया है वह पर्यावरण के लिए सबसे ज्यादा खतरनाक है। अल्मोड़ा स्थित जी0 बी0 पंत हिमालयी पर्यावरण एवं विकास संस्थान की तैयार यह रिपोर्ट केन्द्रीय पर्यावरण व वन राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) जयराम रमेश ने सोमवार को जारी की। उन्होंने कहा कि अभी तक विदेशी संस्थानों की रिपोर्ट के आधार पर ही हिमालयी ग्लेशियरों को लेकर राय बनाई जाती रही है। लेकिन अब ग्लेशियरों के अध्ययन के लिए देहरादून में केन्द्र बनेगा। जयराम ने कहा कि वह यह नहीं कह रहे है कि इस ताजा रिपोर्ट में कही बातें सभी सही हैं, लेकिन वे इस रिपोर्ट पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा कराने के पक्ष में हैं। वे चाहते हैं कि इस रिपोर्ट को वैज्ञानिक समुदाय चुनौती दे। हिमालयी ग्लेशियरों का अध्ययन करने वाली टीम के प्रमुख वीके रैना ने भी कहा कि यह मिथ्या धारणा है कि पहाड़ों में ट्रकों और अन्य वाहनों के आवागमन, धान की भूसी अथवा उपलों के जलाने से ग्लेशियर पिघल रहे हैं।

187	17	नवम्बर 12, 2009	अमर उजाला	पर्यावरण बदलाव से बढ़ी चिंता	जी0 बी0 पंत हिमालयन एवं पर्यावरण विकास संस्थान मौहल में जलवायु परिवर्तन पर मंथन शुरू हो गया है। सद प्रयास ने मौहल में जी0 बी0 पंत संस्थान के तत्वाधान में सात दिनी प्रकृति विज्ञान शिविर का आयोजन किया गया। शिविर का उद्घाटन शिक्षा उप निदेशक हरि सिंह मालपा ने मंगलवार को किया। इस अवसर पर उन्होंने स्कूलों में पर्यावरण संरक्षण शिविर लगाने पर बल दिया। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा प्रायोजित शिविर में विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े विशेषज्ञ महत्वपूर्ण जानकारियां प्रदान करेंगे। शिविर में जलवायु परिवर्तन से बागवानी पर पड़ने वाले प्रभाव पर विस्तार से चर्चा की जाएगी। इसके अलावा हिमाचल प्रदेश के औषधीय पौधों के महत्व पर प्रकाश डाला जाएगा। इस अवसर पर मुख्य अतिथि हरि सिंह मालपा ने कहा कि पर्यावरण में लगातार आ रहा बदलाव गंभीर चिंता का विषय है। पर्यावरण संरक्षण के मसले पर स्कूलों में भी इस तरह के शिविर लगाए जाने चाहिए। ताकि युवा वर्ग पर्यावरण के मसले पर जागरूक हो सके। पर्यावरण बदलाव इतना भयंकर नहीं है कि इसे रोका नहीं जा सकता। बिगड़ते पर्यावरण पर नियंत्राण पाया जा सकता है। इसके लिए युवा वर्ग को जागरूक करने की जरूरत है। इस मौके पर सद प्रयास संस्था के राष्ट्रीय अध्यक्ष लाल चंद ढिस्सा ने बिगड़ते पर्यावरण पर चिंता जताते हुए कहा कि पर्यावरण संरक्षण में युवा वर्ग सार्थक भूमिका निभा सकता है। उन्होंने कहा कि लगातार घटते ग्लेशियर और पर्यावरण असंतुलन आने वाले समय में गंभीर समस्या है। डा. यशवंत सिंह परमार कृषि संस्थान बजौरा के सह निदेशक डा. एसएस भारद्वाज ने जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि और बागवानी पर पड़ रहे विपरीत प्रभावों की जानकारी दी। छात्र–छात्राओं को इस दौरान जी0 बी0 पंत हिमालयन पर्यावरण एवं विकास संस्थान की जड़ी–बूटियों की नर्सरी का भी भ्रमण करवाया जाएगा।
188	17	नवम्बर 17, 2009	अमर उजाला	ब्लैक कार्बन से नहीं पिघल रहे ग्लेश्यिर	वातावरण में ब्लैक कार्बन की मौजूदगी दुनिया के लिए चिंता का सबब है, लेकिन इसे ग्लेशियरों के पिघलने या फिर ग्लोबल वार्मिंग से नही जोड़ा जा सकता। जानेमाने जलवायु विशेषज्ञ आरके पचौरी ने सोमवार को यह बात कही। उन्होंने उपलों या ईधन के जलने से बन रहे ब्लैक कार्बन के ग्रीन हाउस गैसों की बराबर ही खतरनाक होने के दावों को भी खारिज किया। पचौरी ने कहा कि ब्लैक, कार्बन चिंता का विषय है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरसरकारी पैनल (आईपीसीसी) इसके ग्लेशियरों पर प्रभाव के बारे में विस्तृत अध्ययन कर रहा है। ब्लैक कार्बन के ग्लेशियरों और जलवायु परिवर्तन पर प्रभाव के बारे में पाँचवीं आकलन रिपोर्ट 2013 में जारी की जाएगी। आईपीसीसी के चेयरमैन पचौरी ने कहा कि अध्ययन चल रहा है और रिपोर्ट आने तक हम इसे लेकर किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सकते। ब्लैक कार्बन पर अभी काफी काम करने की जरूरत है। पश्चिमी देशों के विशेषज्ञ चाहते हैं कि ब्लैक कार्बन के मुद्दे पर दिसंबर में कोपेनहेगन में होने वाले सम्मेलन में चर्चा की जाए। इससे उनका मकसद भारत और चीन जैसे विकासशील देशों पर दबाव डालना है, जहाँ जीवाश्म ईधन ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। वैज्ञानिक वी रामनाथन और ग्रेग कारमाइकल ने हाल में अपने अध्ययनों में दावा किया था कि कार्बन डाईआक्साइड के प्रभाव से होने वाली ग्लोबल वार्मिंग में 60 फीसदी हिस्से की वजह ब्लैक कार्बन हो सकती है। लेकिन पचौरी कहते हैं कि एक या दो वैज्ञानिकों की निजी रिपोर्ट से पूरी स्थिति साफ नहीं हो सकती। इसके लिए व्यापक अध्ययन की जरूरत है। जलवायु परिवर्तन का आकलन करने वाली आईपीसीसी दुनियाँ की प्रमुख संस्था है। 2007 में अपनी चौथी आकलन रिपोर्ट में इसने चेतावनी दी थी कि देशों को कार्बन उत्सर्जन रोकने के लिए प्रभावी कदम उठाने होंगे। उसने हिमालय के ग्लेशियरों के घटने के लिए ग्लोबल वार्मिंग को जिम्मेदार ठहराया था।

189	17	नवम्बर 20, 2009	अमर उजाला	जलवायु परिवर्तन से सेब को खतरा ''सरक रही है सेब बेल्ट, अगले बीस वर्ष में उत्पादन पर असर''	जलवायु परिवर्तन से हिमांचल के सेब पर भी खतरा मँडराने लगा है। ग्लोबल वार्मिंग के चलते प्रदेश की सेब बेल्ट ऊपर की ओर सरक रही है। यही स्थिति रही तो अगले बीस वर्ष में प्रदेश में सेब उत्पादन बुरी तरह प्रभावित होगा। जलवायु परिवर्तन के चलते देश का पचास से 60 प्रतिशत वन क्षेत्र प्रभावित हुआ है। हिमाचल प्रदेश समेत विभिन्न पश्चिमी हिमालय पहाड़ी राज्यों में इसका खासा असर रहा है। इन क्षेत्रों में कई तरह की जड़ी–बूटी गायब हो रही है। वन्य प्राणियों पर भी इसका विपरीत असर पड़ रहा है। कृषि पर जलवायु परिवर्तन का बुरा प्रभाव पड़ रहा है। शिमला में वानिकी समाधान पर वीरवार को शुरू हुए राष्ट्रीय सम्मेलन में विशेषज्ञों ने ये खुलासे किए हैं। भारतीय विज्ञान संस्थान के निदेशक एवं विख्यात पर्यावरणविद् डा0 एचएन रविंद्रनाथ ने कहा कि जलवायु परिवर्तन का असर सेब की फसल पर दिखने लगा है। उन्होंने कहा कि बेशक इस दिशा में अभी अध्ययन नहीं हुआ है, इस पर जल्द सर्वेक्षण करने की जरूरत है। सेब बेल्ट सरकने के साथ–साथ वनों की सीमाएं बदल रही हैं। उन्होंने कहा कि देश में 50 से 60 प्रतिशत वन क्षेत्र जलवायु परिवर्तन की वजह से प्रभावित है। पिछले तीन दशकों से आबोहवा में ज्यादा बदलाव आया है। पर्यावरण सुरक्षा कोष, संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रमुख विज्ञानी डा. स्टीवन हैम्बर्ग ने कहा कि पिछले एक दशक के दौरान सर्दियों की अवधि लगभग एक माह कम हो गई है। बदलती आबोहवा ने पुराने जंगलों पर बुरा असर डाला हैं। पेड़ों की कई प्रजातियां गायब होने लगी हैं। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय लारेंस बर्कलेय राष्ट्रीय प्रयोगशाला के डा0 जयंत साठे ने कहा कि जहां कभी देवदार होते थे, उसकी जगह अन्य पेड़ हो रहे हैं। साल, चीढ़ और टीक जैसे पेड़ों के क्षेत्र बदल रहे है।